Most Popular & exhaustive
Notes on

वाल्मीकि रामायण सार

लेखक

सोहनलाल पाटनी एम० ए०
राजकीय उच्चतर माध्यमिक शाला, कालन्द्री

और

पं० भवूतराम ओझा साहित्याचार्य
पाडीव (सिरोही)

संशोधक

आचार्य नारायण शास्त्री काङ्कर
संस्कृत साहित्य विवेचक
गवर्नमेन्ट आयुर्वेदिक कालेज, जयपुर

रमेश बुक डिपो
त्रिपोलिया बाजार
जयपुर

प्रकाशक
पी० एम० माहेश्वरी
रमेश बुक डिपो
जयपुर

मूल्य ५)

टाइटिल
श्री नाथ प्रेस, जयपुर

वाल्मीकि रामायण एक परिचय

कौन ऐसा भारतीय है जो आदिकाव्य रामायण से परिचित नहीं हो। उसके रचियता वाल्मीकि आदि कवि माने जाते हैं। रामायण में केवल युद्धों एवं विजयों का ही वर्णन नहीं किन्तु वह भारतीयों की आचार संहिता है। वह अपने आपमें सम्पूर्ण है। होमर, वर्जिल एवं मिल्टन की रचनाओं की अपेक्षा उसमें कहीं अधिक भाषा का गाम्भीर्य, औचित्य एवं रसों का परिपाक है। भावमयी भाषा में उसमें प्रकृति के रमणीय चित्रण चित्रित किये गये हैं। रामायण आचार संहिता तो है ही पर वह क्या नहीं है। वह इतिहास भी है क्योंकि उसमें तत्कालीन भारतीय राज समाज एवं जनसमाज का चित्रण है वह साहित्य तो सर्वथासिद्ध ही है। दर्शन के छोरों को भी वह पूर्णतया छूती है। जगत् में कदाचित् कोई अन्य पुस्तक इतनी सर्व प्रिय नहीं है जितनी यह रामायण। रामायण ने सदैव ही भारतीय कलाकारों, कवियों, इतिहासज्ञों एवं नाटककारों को प्रेरणा दी है एवं दे रही है। प्राचीन एवं नवीन साहित्य तो उससे पूर्णतया अनुप्राणित है। महाभारत के तीसरे पर्व में राम की कथा वर्णित है, पुराणों में भी रामायण का योग स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है। उनमें रामायण के आधार पर रचित राम के शौर्य की कथाएं आती है। कालिदास का साहित्य भी रामायण से प्रभावित जैसे रघुवंश है। मेघदूत का प्रथम श्लोक देखिये।

कश्चित्कान्ता विरह गुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्त;
शापेनास्तङ्गमित महिमा वर्ष भोग्येण भर्तु:।
यक्षश्चक्रे जनक तनया स्नान पुण्योदकेषु
स्निग्धच्छाया तरुषु वसति रामगिर्याश्रमेषु ॥१॥

इस श्लोक में जनकतया सीताजी का संकेत है। मेघदूत के विषय में यह कहा जाता है कि सीता के प्रति राम द्वारा प्रेषित हनुमान् के सन्देश को आगे रखकर कालिदास ने मेघदूत की रचना की।

"सीतां प्रति रामस्य हनुमत्सन्देशं मनसि निधाय मेघ सन्देशं कविः कृतवान् इति आहुः"।

नाटक कार भास तो रामायण पर पूर्णतया आश्रित दिखाई देते हैं। उनके 'अभिषेक' प्रतिमा एवं यज्ञफलम् आदि नाटक रामायण पर ही आधारित हैं। बौद्ध जातकमाला का 'दशरथ जातक' रामायण से प्रभावित है। बौद्ध कवि अश्वघोष ने भी रामायण से बहुत सा मसाला लिया है। जैनग्रंथ पउमचरिय (पद्मचरित), जो कि ईसा की प्रथम शताब्दी का है, इससे प्रभावित है। रामायण ने भारत में ही नहीं विदेशों में भी काफी प्रसिद्धि प्राप्त करली थी। जावा में लरजङ्गरङ्ग आदि के शिव मंदिरों में पत्थर पर रामायण की कथा के दो सौ से भी अधिक दृश्य खुदे हुए हैं। जावा एवं मलाया का साहित्य भी रामायण से प्रभावित एवं अनुप्राणित है। थाईलेन्ड तथा पूर्वद्वीप समूहों में रामायण के पात्रों की कलापूर्ण मूर्तियां आज तक पाई जाती है।

रामायण के अनुवाद कई भाषाओं में हो चुके हैं। इसका तामिल भाषा का अनुवाद सबसे प्राचीन है। वर्तमानकाल में एक अंग्रेज पादरी ने रामायण का अंग्रेजी में अनुवाद किया है। तुलसी का रामचरित मानस तो रामायण का एक रूप ही है। अन्य भारतीय भाषाओं में भी रामायण के अनुवाद कांट छांट कर तैयार किये हुये मिलते हैं।

रामायण हम भारतीयों का प्राण है। उसकी शिक्षाएं व्यावहारिक हैं। उसमें भारतीय जनजीवन की गहन एवं गम्भीर समस्याओं का सुलझा हुआ स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। राम एक आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श शिष्य, आदर्श सेवक एवं आदर्श राजा हैं। उसमें सीता जैसी आदर्श पत्नी, आदर्श वधू, आदर्श भाभी एवं आदर्श नारी है। आदर्श माता के रूप में कौशल्या का चित्रण किया गया है। लक्ष्मण जैसे दृढव्रती

अनुज एवं भरत जैसे भाई भी रामायण के पात्र हैं। आदर्श सेवक के रूप में हनुमान उपस्थित हैं एवं आदर्श मित्र के रूप में सुग्रीव विद्यमान हैं। रामायण में क्या नहीं ? उसमें जीवनदर्शन है और है जीवन का सार। तात्पर्य यह है कि रामायण में हमें उच्चतम आचार के जीते जागे दृष्टान्त मिलते हैं। रामायण से भूतकाल में लोगों को आदर्श मिला, अब मिल रहा है और आगे मिलता रहेगा।

रामायण ऐतिहासिक महाकाव्य है उसमें ऐतिहासिकता की कमी नहीं। उसका अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टि से भी किया जा सकता है। इससे हमें प्राचीन भारतीय लोक जीवन एवं राजनैतिक जीवन का परिचय मिलेगा।

संस्करण—रामायण के चार संस्करण पाये जाते हैं:—

१ बम्बई संस्करण — यह बम्बई से प्रकाशित हुआ।

२ बंगाली संस्करण — यह कलकत्ते से प्रकाशित हुआ।

३ काश्मीरिक संस्करण— उसे उत्तरी पश्चिमी संस्करण भी कहते हैं। यह लाहोर से प्रकाशित हुआ है।

४ दक्षिण भारत संस्करण — यह मद्रास से प्रकाशित हुआ है।

ऊपर के तीन संस्करणों में काफी विभिन्नता है। यह कहा नहीं जा सकता है कि कौन सा संस्करण वाल्मीकि के असली रामायण से अधिक समता रखता है। जी. गोरेशियो ने बंगाली संस्करण को अधिक अच्छा बताया एवं श्लेगल भी इसी संस्करण को अधिक महत्वपूर्ण समझते रहे। बोटलिंग नामके पाश्चात्य विद्वान् ने यह सिद्ध किया कि पुराने शब्द बम्बई संस्करण में अधिक है।

क्षेमेन्द्र की रामायण मंजरी काश्मीरिक संस्करण से अधिक साम्य रखती है। ग्यारहवी शताब्दी का रामायण चम्पू बम्बई संस्करण पर आधारित है।

अतः यह मानना पडेगा कि इन संस्करणों ने अपने इन रूपों को बहुत पहले ही प्राप्त कर लिया था। इनमें से कौनसा वाल्मीकि रामायण का वास्तविक रूप है यह बताना आसान नहीं है।

रामायण का वर्ण्य विषय—

रामायण में २४००० श्लोक हैं। सारा ग्रंथ सात काण्डों में विभाजित है।

कांड १ बालकांड—इसमें राम के नवयौवन, विश्वामित्र के साथ जाने, उनके यज्ञ की रक्षा करने, ताटका आदि निशाचरों का वध करने और राम का सीता के साथ विवाह का वर्णन है।

कांड २ अयोध्या कांड—राम के राज्य तिलक की तैयारी, कैकयी मन्थरा संवाद, कैकयी द्वारा राम वनवास का वरदान, रामवनगमन, दशरथ मरण एवं भरत का राम को वापस लाने के लिये चित्रकूट गमन वर्णित है।

कांड ३ अरण्य काण्ड—राम का दण्डकारण्य में निवास, राक्षसों का मारना, पञ्चवटी निवास, शूर्पणखा का आना उसका लक्ष्मण द्वारा अपमान, सीता हरण एवं सीता के वियोग में राम का रोना आदि वर्णित है।

कांड ४ किष्किन्धा कांड—रामकी सुग्रीव से मित्रता, वालीवध हनुमान् का सीता की खोज के लिये निकलना आदि वर्णित है।

कांड ५ सुन्दरकाण्ड—लंका के सुन्दर द्वीप का वर्णन, रावण के विशाल महलों का वर्णन, हनुमान् का सीता को धीरज दराना एवं सीता का पता लगाकर हनुमान् का वापस लौटना आदि वर्णित है।

काण्ड ६ युद्ध काण्ड—यह सबसे बडा कांड है। राम-रावण युद्ध का वर्णन है एवं रावणवध आदि का वर्णन है।

कांड ७ उत्तर काण्ड—अयोध्या में बीतनेवाले राम के अन्तिम जीवन, सीता की निन्दा, सीता निर्वासन, सीता शोक, लवकुश जन्म एवं अन्य वर्णन वर्णित है।

उपाख्यान—रामायण में राम की कथा के साथ साथ अन्य उपाख्यान भी हैं सबसे अधिक उपाख्यान प्रथम एवं सप्तम काण्ड में पाये जाते हैं ?

१ वामन अवतार (१,२६)
२ कार्तिकेय जन्म (२,३५–३७)
३ गंगावतरण (२,३८–४४)
४ समुद्र मंथन (१,४५)
५ श्लोक प्रादुर्भाव (१,२)
६ ययाति नहुष (७,५८)
७ वृत्र वध (७,८४–८७)
८ उर्वशी–पुरुरवा (७,८६–९०)
९ शूद्र तापस शम्बूक (७)

और भी कई उपाख्यान हैं । रामायण की वास्तविक कथा छठे काण्ड तक समाप्त हो जाती है। सातवाँ कांड तो इन बहुत से उपाख्यानों से भरा पडा है जिनका मूल कथा से कोई सम्बन्ध नहीं है। सातवें कांड में राक्षसों की उत्पत्ति रावण और इन्द्र का युद्ध एवं हनुमान् के यौवन काल का वर्णन है। वास्तव में इनका रामायण की मूल कथा से कोई सम्बन्ध नहीं। ये वर्णन कथा के प्रवाह को समाप्त करते हैं। राक्षसों का अन्त तो स्थान स्थान पर राम द्वारा बताया गया है। फिर सातवें कांड में उनकी उत्पत्ति बताने की क्या आवश्यकता पडी । अतः निश्चय ही यह कांड प्रक्षिप्त है, पश्चात् कालीन है। एक बात और दूसरे से लेकर छटे कांड तक प्रक्षिप्त अंशों को छोडकर राम एक आदर्श वीर मनुष्य माने गये हैं परन्तु पहले और सातवें कांड में उन्हें विष्णु का अवतार बताया गया है। पहले एवं सातवें काण्ड की भाषा दूसरे कांडों की अपेक्षा साधारण एवं नवीनता को लिये हुये है।

इन्हीं आधारों पर प्रोफेसर जेकोबी ने निश्चय किया है कि असली रामायण दूसरे से छटे काण्ड तक ही है। पहला व सातवां काण्ड बाद

में जोड़े गये हैं। इन असली काण्डों (२–६) में भी कहीं कहीं पर मिलावट करदी गई है। 'रामायण' में जैकोबी कहते हैं:—जैसे हमारे अनेक पुराने, पूजनीय गिरजाघरों में एक नई पीढ़ी ने कुछ न कुछ नया भाग बढ़ा दिया है और कुछ पुराने भाग की मरम्मत करवा दी है और फिर भी असली गिरजाघर की रचना को नष्ट नहीं होने दिया है। इसी प्रकार भाटों की अनेक पीढ़ियों ने असली भाग को नष्ट न करते हुए रामायण में बहुत कुछ बढा दिया है, जिसका एक-एक अवयव तो अन्वेषण की आंख से छिपा हुआ नहीं है।

काल—१ रामायण का असली भाग महाभारत के असली भाग से पुराना है। रामायण में महाभारत के किसी पात्र का उल्लेख नहीं है। किन्तु महाभारत के तीसरे पर्व में राम की कथा आई है।

(२) बौद्धों का 'दशरथ जातक' रामायण से प्रभावित है। इस जातक में पाली के रूप में रामायण का एक श्लोक भी पाया जाता है।

(३) 'साम जातक' में श्रवणकुमार की कथा का ही बौद्ध रूप प्रस्तुत किया गया है।

(४) भाषा के आधार पर ऐच. जेकोबी ने रामायण को बौद्ध काल के पहिले का बताया है।

(५) बाल काण्ड में मिथिला एवं विशाला को दो भिन्न राजाओं के आधीन बताया गया है किन्तु बुद्ध के समय के पूर्व ये दोनों नगरियाँ वैशाली के रूप में एक नवीन नगरी बन गई थी।

(६) रामायणकाल में भारत छोटे छोटे राज्यों में बंटा हुआ था जिनमें छोटे छोटे राजा राज्य करते थे। भारत की ऐसी राजनैतिक अवस्था बुद्ध के पूर्व ही थी।

अन्त से हम यह कह सकते हैं कि असली रामायण ५०० ईसा पूर्व से पहले बन चुकी थी।

शैली—रामायण आदि काव्य है एवं उसके रचयिता आदि कवि अतः रामायण संस्कृत काव्य की आरम्भिक अवस्था को हमारे सामने रखती है। श्लोक छन्द की उत्पत्ति इसी समय हुई एवं वाल्मीकि से हुई। रामायण की भाषा में प्रवाह है ओज है एवं प्रसाद है। यही नहीं भाषा अन्त तक प्राञ्जल एवं परिष्कृत है। अलङ्कारों की सुषमा दर्शनीय है उपमा एवं रूपक तो रामायण में भरे पड़े है। अन्य अलङ्कारों की भी कमी नहीं। भाषा सरल एवं कथा के अनुरूप है। भावों में गम्भीरता है पर कथा का प्रवाह उससे दबा नहीं है। हम निःसंकोच कह सकते हैं कि रामायण की शैली उत्तमता एवं सरलता को लिए हुये है।

—○○—

॥ ॐ शिवपार्वती ॥

मङ्गलाचरण

कूजंतं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् । आरुह्य कविता शाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ।

अन्वय—कविता शाखां आरुह्य रामराम इति मधुरं मधुराक्षरं कूजंतं वाल्मीकि कोकिलं वन्दे ॥

सरलार्थ—काव्य वृक्ष की डाली पर चढ़ कर 'राम राम' के मीठे अक्षरों का कूजन करने वाले वाल्मीकि नामक कविकोकिल की वन्दना करता हूं ॥

वालकाण्ड

अथ तृतीय सर्ग

अयोध्या वर्णनम्

कोसलो··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ····धान्यवान् १॥

अन्वयः—सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान् मुदितः स्फीतः कोसलो नाम महान् जनपदः निविष्टः ॥१॥

सरलार्थ—सरयू नदी के किनारे प्रचुर धनधान्य युक्त, प्रसन्न, एवं समृद्ध कोशल नाम का एक महान् जनपद था ॥१॥

अयोध्या···· ···· ···· ···· ···· ···· ····स्वयम् ॥२॥

अन्वयः—तत्र लोकविश्रुता अयोध्या नाम नगरी आसीत् या पुरी मानवेन्द्रेण मनुना स्वयं निर्मिता ॥२॥

सरलार्थ—वहां पर (कोशल जन पद में) संसार प्रसिद्ध अयोध्या नाम की नगरी थी जिसको मनुष्यों में इन्द्र स्वयं मनु ने बनाई थी ॥२॥

आयता .... महापथा ॥२॥

अन्वय—सुविभक्त महापथा श्रीमती महापुरी दश च द्वे च योजनानि आयता त्रीणि (योजनानि) विस्तीर्णा ॥३॥

सरलार्थ—शोभासम्पन्न वह महानगरी बारह योजन लम्बी व तीन योजना फैली हुई थी एवं उसके रास्ते अच्छी तरह विभाजित किये हुये थे ॥३॥

राजमार्गेण.... ....नित्यशः ॥४॥

अन्वय—नित्यशः जलसिक्तेन मुक्तपुष्पावकीर्णेन सुविभक्तेन महता राजमार्गेण शोभिता ॥४॥

सरलार्थ—वह नगरी सदैव जल सिञ्चन से, मुक्त हस्त से पुष्पवृष्टि से एवं सुविभाजित महान् राज-पथ से शोभित थी ॥४॥

तां तु... ... ...यथा ॥५॥

अन्वय—यथा दिवि देवपतिः (तथैव) महाराष्ट्र विवर्धनः दशरथोराजा तां तु पुरी आवासयामास ॥५॥

सरलार्थ—जैसे स्वर्ग में देवपति इन्द्र निवास करते है वैसे ही महान्-राष्ट्र को बढ़ाने वाले दशरथ नामक राजा उसमें (नगरी में) निवास करते थे ॥५॥

कपाट.... ....शिल्पिभिः ॥६॥

अन्वय—कपाटतोरणवतीं सुविभक्तान्तरापणां सर्वयन्त्रायुधवतीं सर्व-शिल्पिभिः उषितां ॥६॥

उस नगरी में दरवाजों पर तोरण लटकते थे, अन्दर सुविभाजित हाट थे, सब प्रकार के यन्त्र एवं शस्त्र थे एवं सब प्रकार की कला जानने वाले कारीगर निवास करते थे ॥६॥

सूत··· ···· ···· ···· ···· ···· ···· ····दशरथस्तदा ॥७–११॥

अन्वय—सूतमागध संबाधां श्रीमतीं अतुल प्रभां उच्चाट्टाल ध्वजवतीं शतघ्नीशतसंकुलां ॥७॥ सर्वतः वधूनाटक संघैः च संयुक्तां पुरीं उद्यानाम्र-वणोपेतां सालमेखलां महतीं ॥८॥ दुरासदां दुर्गां दुर्गगम्भीरपरिखां अन्यैः। गोभिः खरैः उष्ट्रैः तथा वाजिवारण सम्पूर्णां ॥९॥ वने नदतां मत्तानां सिंहव्याघ्रवराहाणां वलात् वाणैः बाहुवलैः अपि हन्तारः ॥१०॥ तादृशानां सहस्रैः महारथैः अभिपूर्णां तां पुरीं तदा राजा दशरथः आवासयामास ॥११॥ वह अयोध्यानगरी सूतों एवं मागधों से पूर्ण थी, शोभावान् थी, अतुल तेज सम्पन्न थी, ऊंची अट्टालिकाओं पर उड़नेवाली ध्वजाओं से युक्त थी एवं सैकड़ों तोपों से भरपूर थी ॥७॥ सभी स्थानों पर वैश्याओं एवं नटों के संघों से युक्त थी, उसके समीप ही आमों का एक उद्यान था एवं साल वृक्ष उसकी करधनी के समान थे। वह नगरी बडी थी ॥८॥ शत्रुओं के लिये भयंकर ('नहीं पार करने योग्य' यह अर्थ भी लिया जा सकता है) किले के चारों ओर गहरी खाई थी एवं अन्य गाय, गर्दभ ऊंट, हाथी एवं घोड़ों से वह नगरीपूर्ण थी ॥९॥ उस नगरी में अपने बाहुवल से या वाणों से वन में आनन्दित सिंह वाघ एवं सुअर आदि जन्तुओं को मारने वाले भी रहते थे ॥१०॥ इस तरह हजारों महारथियों से पूर्ण उस नगरी में उस समय दशरथ निवास करते थे ॥११॥

तस्यां ... ... शक्रवैश्रवणोपमः ॥ १२-१४

अन्वय—तस्यां पुर्यां अयोध्यायां वेदवित् सर्व संग्रहः दीर्घदर्शी महातेजाः पौरजानपदप्रियः इक्ष्वाकूणां अतिरथः यज्वा धर्मरतो वशी महर्षिकल्पो त्रिषु लोकेषु विश्रुतः राजर्षिः वलवत् निहतामित्रो मित्रवान् जितेन्द्रियः धनैः संचयैः अन्यैः च शक्र वैश्रवणोपमः (आसीत्)। ॥१२-१४॥

सरलार्थ—उस अयोध्या नगरी में वेदज्ञ समस्त प्रकार के संग्रह करने वाले दूर की सूझ वाले, महान् तेजस्वी नगर निवासियों एवं जनपदवासियों

को प्यारे इक्ष्वाकु राजवंश के महारथी, यज्ञकर्ता, धर्म में लगे हुये, समस्त-संसार को वश में करने वाले, महर्षि के समान, तीनों लोकों में प्रसिद्ध राजर्षि, वलवान्, शत्रुओं का दमन करने वाले, मित्रवान्, इन्द्रियों को जीतने वाले, एवं धन में तथा संचय में इन्द्र और कुबेर के समान राजा दशरथ थे ।।१४।।

तेन .... अमरावती ।।१५।।

अन्वय—त्रिवर्गं अनुतिष्ठता सत्याभि सन्धेन तेन इन्द्रेण अमरावती इव सा श्रेष्ठा पुरी पालिता ।।१५।।

धर्म अर्थ काम का अनुष्ठान करने वाले सत्यप्रतिज्ञ उन राजा दशरथ ने उस श्रेष्ठ नगरी का वैसे ही पालन किया जैसे इन्द्र ने अमरावती का ।।१५

मन्त्रज्ञा ... ... मनस्विनः ।।१६।।

अन्वय—मन्त्रज्ञाः इङ्गितज्ञा मनस्विनः अष्टौ आमात्याः नित्यं तस्य वीरस्य प्रियहितेरताः बभूवुः ।।१६।।

मंत्र को जानने वाले संकेत से समझने वाले एवं मनस्वी उसके आठों मंत्री नित्य ही उस वीर राजा दशरथ के प्रिय सम्पादन में लगे हुये थे ।।१६।।

शुचीनां ... ... क्वचित् ।।१७।।

अन्वय—शुचीनां एकबुद्धीनां सर्वेषां सम्प्रजानतां (मध्ये) पुरे राष्ट्रे वा क्वचित् नरः मृषावादी न आसीत् ।।१७।।

पवित्र लोगों, निश्चय बुद्धिवाले एवं सभी जानने वाले लोगों के बीच नगर में या राष्ट्र में कोई भी मनुष्य झूठा नहीं था अर्थात् झूठ बोलने वाला नहीं था ।।१७।।

क्वचित् ... ... च तत ।।१८।।

अन्वय—तत्र परदाररतिः दुष्टः क्वचित् नरः न आसीत्, सर्वं तत् राष्ट्रं पुरवरं च प्रशान्तं आसीत् ।।१८।।

उस अयोध्या नगरी में परस्त्री में आसक्त कोई भी दुष्ट पुरुष नहीं था एवं वह समग्र राष्ट्र एवं नगर शान्तिपूर्ण था ।।१८।।

—ooo—

चतुर्थ सर्ग

पुत्रेष्टि समारम्भ (पुत्रेष्टि यज्ञ का आरम्भ)

तस्य ... ... सुतः ॥१॥

अन्वय—एवं प्रभावस्य तस्य धर्मज्ञस्य सुतार्थं तप्यमानस्य महात्मनः वंशकरः सुतः न आसीत् ॥१॥

इस प्रकार प्रभावशाली उस धर्मात्मा एवं पुत्र के लिये दुःखी या तपस्या करने वाले उन महात्मा दशरथ के, वंश को बढाने वाला कोई पुत्र नहीं था ॥१॥

चिन्तमानस्य ... ... यजाम्यहम् ॥२॥

अन्वय—चिन्तमानस्य तस्य महात्मनः "अहं सुतार्थं वाजिमेधेन किमर्थं न यजामि" एवं बुद्धिः आसीत् ॥२॥

पुत्र के लिये चिन्तित उस महात्मा दशरथ ने "पुत्र के लिये अश्वमेध-यज्ञ क्यों नहीं करूँ" ऐसा विचार किया ॥२॥

ततो ... ... पुरोहितान् ॥३॥

अन्वय—ततः महातेजाः मन्त्रिसत्तमं सुमंत्रं अब्रवीत् मे सर्वान् गुरून् तान् पुरोहितान् शीघ्रं आनय ॥३॥

उसके बाद महान तेजस्वी राजा दशरथ ने मंत्रियों में श्रेष्ठ सुमन्त्र को कहा मेरे गुरुओं एवं पुरोहितो को शीघ्र लाओ ॥३॥

ततः ... .वेदपारगान् ॥४॥

अन्वय—ततः सः त्वरित विक्रमः सुमंत्रः त्वरितं गत्वा तान् सर्वान् समस्तान् वेद पारगान् समानयत् ॥४॥

उसके पश्चात् शीघ्र ही पराक्रम करने वाले सुमन्त्र मंत्री ने शीघ्र ही जाकर उन सब गुरुजनों को एवं समस्त वेदों के जानने वालों को आदर पूर्वक लाया ॥४॥

तान् पूजयित्वा ... ... मब्रवीत् ॥५॥

अन्वय—तदा धर्मात्मा राजा दशरथः तान् पूजयित्वा धर्मार्थसहितं इदं श्लक्ष्णं वचनं अब्रवीत् ॥५॥

तब धर्मात्मा राजा दशरथ ने उन सब की पूजा कर धर्म एवं अर्थ भरे इस मधुर वचन को कहा ॥५॥

मम लालप्यमानस्य ... ... मतिर्मम ॥६॥

अन्वय—सुतार्थं लालप्यमानस्य मम सुखं नास्ति तदर्थं हयमेधेन यक्ष्यामि इति मम मतिः ॥६॥

पुत्र के लिये ललनाते हुये मुझे सुख नहीं है इसलिये मेरा विचार है कि मैं पुत्र प्राप्ति के लिये अश्वमेध यज्ञ करूं ॥६॥

ऊचुः च .... विमुच्यताम् ॥७॥

अन्वय—परमप्रीताः सर्वे दशरथं वचः ऊचु ते संभाराः संभ्रियन्तां तुरगश्च विमुच्यताम् ॥७॥

अत्यन्त प्रसन्न होकर उन सब ने दशरथ से ये वचन कहे—यज्ञ सम्बन्धी मंगल कलशों को भर लो एवं यज्ञीय घोडे को छोड दो ॥७॥

सरय्वाश्चोत्तरे ... ... पार्थिव ॥८॥

अन्वय—सरय्वाश्च उत्तरे तीरे यज्ञभूमिः विधीयतां । पार्थिव । अभिप्रेतान् पुत्रान् च सर्वथा प्राप्स्यसे ॥८॥

सरयू नदी के उत्तरी किनारे पर यज्ञशाला का निर्माण करो । हे राजन् तुम अपने मन वांछित फलों को एवं पुत्रों को अवश्य प्राप्त करोगे ॥८॥

ततो .... तदा ॥९॥

अन्वय—ततः वसिष्ठप्रमुखाः सर्वे एव द्विजोत्तमाःऋष्यश्रृङ्गं पुरस्कृत्य तदा यज्ञकर्मारम्भाः (अभवन्) ॥९॥

तत्पश्चात् वसिष्ठ प्रमुख सभी ब्राह्मण श्रेष्ठ ऋष्यशृंग को आगेवान करयज्ञ कर्म में प्रवृत्त हुये ।।९।।

यज्ञवाटगतः ... . मुपाविशत् ।।१०।।

अन्वय—यज्ञवाटगतः सर्वे यथाशास्त्रं यथाविधि पत्नीभिः सह श्रीमान् राजा दीक्षां उपाविशत् ।।१०।।

यज्ञशाला मै जाकर सभी ने यथाविधि शास्त्रानुसार पत्नियों के साथ शोभासम्पन्न राजा दशरथ को दीक्षित किया ।।१०।।

अथर्व शिरसि··· ··· ··· ··· ···· पुत्रकारणात् ।।११।।

अन्वय—स्पष्ट है।

जुहावाऽग्नौ ·· ··· ··· ··· ···· शिखोपमम् ।।१२-१४।।

अन्वयः—स्पष्ट है।

सरलार्थः—मंत्र दर्शित कर्म से उस तेजस्वी राजा ने अग्नि में होम किया उसके पश्चात् होम की जाती हुई अग्नि से अतुल तेज सम्पन्न, महान् अद्भुत, महाबली महान् वीर्यवान् कृष्ण वर्ण वाला, लाल मुंह वाला दुदुम्भि के समान आवाज वाला, लाल वस्त्र को धारण किया हुआ शुभ लक्षणों से युक्त स्वर्गीय आभूषणों से विभूषित सूर्य के समान एवं प्रदीप्त अग्नि की लपटों के समान एक तेजस्वी पुरुष उत्पन्न हुआ ।।१२-१४।।

दिव्यपायस··· ··· ··· ··· ···मायामयीमिव ।।१५।।

अन्वय—दिव्यपायस सम्पूर्णं मायामयीं इव विपुलां पात्रीं प्रियां पत्नीं इव स्वयं दोर्भ्यां प्रगृह्य ।।१५।।

स्वर्गीय खीर से पूर्ण मायामयी के समान एक बड़ी थाली को प्रिय पत्नी के समान स्वयं अपने बाहुओं से पकड़कर ।।१५।।

समवेक्ष्य···· ··· ···· ··· ··· ··· ··· ····नृप ।।१६।।

अन्वयः—समवेक्ष्य (स) इदं वाक्यं दशरथं नृपं अब्रवीत् नृप ! इह अभ्यागतं माम् प्राजपात्यं नरं विद्धि ।।१६।।

सरलार्थः—अच्छी तरह देख कर उसने राजा दशरथ से ये वाक्य कहे:—राजन् यहां आये मुझे ब्रह्म पुरुष समझो ॥१६॥

राजन्··· ··· ··· ··· ··· ···देव निर्मितम् ॥१७॥

अन्वयः—राजन् ! अद्य देवान् अर्चयता त्वया इदं प्राप्तं हे नृप शार्दूल । इदं पायसं तु देवनिर्मितम् ॥१७॥

सरलार्थः—हे राजन् ! आज देवो का पूजन करते हुये तुमने इसे प्राप्त किया है। हे राजाओं में सिंह ! यह खीर देवताओं द्वारा बनाई हुई है ॥१७॥

प्रजाकरं··· ··· ··· ··· ···· ···· ····प्रयच्छ वै ॥१८॥

अन्वयः—धन्यं त्वं आरोग्यवर्धनं प्रजाकर् (इदं) गृहाण। अनुरूपाणां भार्याणां अश्नीत इति वै प्रयच्छ ॥१८॥

सरलार्थः—हे राजन् तुम धन्य हो। आरोग्यवर्धक एवं सन्तानदायक इस खीर को ग्रहण करो एवं अपनी योग्य पत्नियों को खाने के लिये प्रदान करो ॥१८॥

तासु··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· प्रतिगृह्यताम् ॥१६॥

अन्वयः—नृप तासु त्वं पुत्रान् लप्स्यसे यदर्थं यजसे। नृपतिः प्रीतः तथा इति शिरसा प्रतिगृह्यताम् ॥१६॥

सरलार्थः—राजन् (इस खीर के खाने से) उन रानियों से तुम्हें पुत्र प्राप्त होंगे जिनके लिये तुम यज्ञ करते हो। राजा ! प्रसन्न होकर इसे शिर से ग्रहण करो ॥१६॥

सोऽन्त ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···आत्मनः ॥२०॥

अन्वयः—सः अन्तःपुरं प्रविश्य एव कौशल्यां इदं अब्रवीत् इदं आत्मनः पुत्रीयं पायसं प्रतिगृह्णीष्व ॥२०॥

सरलार्थः—उसने अन्तःपुर में प्रविष्ट होकर कौशल्या से कहा पुत्र-दायक इस खीर को ग्रहण करो ॥२०॥

कौसल्यायै.... ....नराधिपः ॥२१॥

अन्वयः—तदा नरपतिः कौसल्यायै पायसार्धं ददौ। सुमित्रायै च अर्धात् अर्धं च ददौ ॥२२॥

सरलार्थः—तब राजा ने कौशल्या को खीर का आधा भाग दिया और आधे से आधा भाग सुमित्रा को दिया ॥२१॥

कैकेय्यै... ... .महामतिः ॥२२॥

अन्वयः—पुत्रार्थ कारणात् कैकेयै च अवशिष्टार्धं ददौ। अनुचिन्त्य पुनरेव स महामतिः सुमित्रायै ददौ ॥२२॥

सरलार्थः—पुत्र प्राप्ति की इच्छा से कैकयी को बाकी बचे आधे का आधा भाग दिया एवं फिर विचार कर महान् बुद्धिमान् राजा ने वह आधा भाग सुमित्रा को दिया ॥२२॥

ततस्तु... ....तदा ॥२३॥

अन्वयः—ताः उत्तमस्त्रियः तु महीपतेः तत् उत्तमपायसं पृथक् प्राश्य अचिरेण तदा हुताशनात् आदित्य समान तेजसः गर्भान् प्रतिपेदिरे ॥२३॥

सरलार्थः—उन उत्तम स्त्रियों ने राजा की उस उत्तम खीर को अलग अलग खाकर शीघ्र ही अग्नि से सूर्य (आदित्य, के समान तेजशाली गर्भों का धारण किया ॥२३॥

——०० ——

पञ्चमः सर्गः

रामास्यावतारः

श्लोकः—"दत्तश्च द्वादशे मासे।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—द्वादशे मासे=बारहवें महीने में। नावमिके=नवमी तिथि को। अदिति दैवत्ये=पुनर्वसु नक्षत्र में। पञ्चसु स्वोच्चसंस्थेषु=पांच ग्रहों के उच्च राशि में होने पर। स्वोच्चं तिष्ठन्ति तेषु स्वोच्चसंस्थेषु ॥१॥

अन्वयः—ततः द्वादशे चैत्रे मासे नावमिके तिथौ आदितिदैवत्ये नक्षत्रे पञ्चसु स्वोच्चसंस्थेषु सत्सु ॥१॥

सरलार्थ—तदनन्तर बारहवें मास चैत्र शुक्ल–पक्ष की नवमी तिथि को, पुनर्वसु नक्षत्र में पांच ग्रहों के उच्च राशि में स्थित होने पर कौशल्या ने राम को जन्म दिया ॥१॥

श्लोकः—"ग्रहेषु कर्कटे लग्ने।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—कर्कटे लग्ने = कर्क लग्न में। इन्दुना सह = चन्द्रमा के साथ। वाक्पतिः=गुरु। प्रोद्यमाने=उदित होने पर। सर्व लोक नमस्कृतं= संसार के द्वारा नमस्कार करने योग्य ॥२॥

अन्वयः—ग्रहेषु कर्कटे लग्ने इन्दुना सह वाक्पतौ प्रोद्यमाने सर्वलोक-नमस्कृतं जगन्नाथं अजनयत् ॥२॥

सरलार्थ—पांच ग्रह उच्च राशि में स्थित होने पर चन्द्रमा के साथ गुरुजी के उदित होने पर सकल संसार द्वारा वन्दनीय संसार के स्वामी भगवान् रामचन्द्र को जन्म दिया ॥२॥

श्लोकः—"कौसल्या जनयद्रामं।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थः—अजनयत्=पैदा किया। सर्वलक्षण संयुतम्=सब लक्षणों से सम्पन्न। ऐक्ष्वाकुं नन्दयत्यसौ तमिक्ष्वाकुनन्दनं=इक्ष्वाकु वंश का आनन्द बढ़ाने वाला ॥३॥

अन्वयः—कौसल्या सर्वलक्षण संयुतं विष्णोः अर्धम् ऐक्ष्वाकुनन्दनं महा भागं पुत्रम् रामं अजनयत् ॥३॥

सरलार्थः—कौसल्या ने सब उत्तम लक्षणों से समन्वित विष्णु के अर्धांश इक्ष्वाकु वंश का आनन्द बढ़ाने वाले पुत्र राम को जन्म दिया ॥३॥

श्लोकः—"लोहिताक्षं महाबाहुं।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ:—लोहिताक्षं=रक्त नेत्र वाले । महाबाहुं=बड़ी भुजाओं वाले । रक्तोष्ठं=लाल ओठ वाले । दुन्दुभिस्वनम्=नगाड़े के शब्द के समान गम्भीर ॥४॥

अन्वय:—लोहिताक्षं महाबाहुं रक्तोष्ठं दुन्दुभिस्वनम्, भरतः नाम सत्य पराक्रमः कैकेय्यां जज्ञे ॥४॥

सरलार्थ:—उन रामचन्द्रजी के नेत्रों में कुछ कुछ लालिमा थी। उनके ओष्ठ लाल, भुजाएं बडी-बडी, और स्वर दुन्दुभि के समान गम्भीर था। कैकयी के गर्भ से सत्य पराक्रमी भरतजी का जन्म हुआ ॥४॥

श्लोक:—"साक्षाद्विष्णोश्चतुर्भाग: ।" ॥५॥

शब्दार्थ:—विष्णोश्चतुर्भाग: = विष्णु का चतुर्थांश । सर्वैः गुणैः समुदितः=सब गुणों से समन्वित । प्रसन्न धीः=प्रसन्न चित्त वाला । मीनेलग्ने=मीन लग्न में ॥५॥

अन्वय:—साक्षाद्विष्णोः चतुर्भागः सर्वैः गुणैः समुदितः प्रसन्न धीः भरतः पुष्ये मीने लग्ने जातः ॥५॥

सरलार्थ:—साक्षात् विष्णु का चतुर्थांश सब दिव्य गुणों से समन्वित निर्मल बुद्धि वाले भरतजी ने पुष्य नक्षत्र तथा मीन लग्न में जन्म लिया ॥५॥

श्लोक:—"अथ लक्ष्मण शत्रुघ्नौ ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ:—सर्वास्त्रकुशलौ=सब प्रकार के अस्त्रों के चलाने में कुशल । विष्णोः=विष्णु के । अर्धसमन्वितौ=अर्धांश से युक्त । सुतौ=लक्ष्मण और शत्रुघ्न ॥६॥

अन्वय:—अथ सुमित्रा विष्णोः अर्धसमन्वितौ सर्वास्त्रकुशलौ लक्ष्मण शत्रुघ्नौ वीरौ सुतौ अजनयत् ॥६॥

सरलार्थ:—सुमित्रा ने भगवान् विष्णु के अर्धांश से युक्त अस्त्र विद्या में कुशल लक्ष्मण और शत्रुघ्न जैसे वीर पुत्रों को जन्म दिया ॥६॥

श्लोक:—"सर्पि जातौ तु सौमित्री ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ:—सौमित्री=लक्ष्मण और शत्रुघ्न । सर्पि=आश्लेषा नक्षत्र में । कुलीरे=कर्क लग्न में । खौ अभ्युदिते=सूर्य के उदित होने पर ॥७॥

अन्वय:—सौमित्री खौ अभ्युदिते सर्पि कुलीरे जातौ चत्वार: महात्मान: राजपुत्रा: पृथक् जज्ञिरे ॥७॥

सरलार्थ:—लक्ष्मण और शत्रुघ्न सूर्य के उदित होने पर आश्लेषा नक्षत्र और कर्क लग्न में उत्पन्न हुये । महान् भाग्यशाली दशरथ के ये चारों पुत्र बड़े ही गुणवान् और सुन्दर थे ॥७॥

श्लोक:—"गुणवन्त: सरूपाश्च ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ:—गुणवन्त:=गुणवान् । सरूपा:=सुन्दर । रुच्या=कान्ति से प्रोष्ठपदोपमा=पूर्वा व उत्तरा भाद्र पद नक्षत्रों समान । जगु:=गाया । ननृतु:=नृत्य किया । अप्सरोगणा:=अप्सराएं ॥८॥

अन्वय:—गुणवन्त: सरूपा: रुच्या प्रोष्ठपदोभा: गन्धर्वा: कलं जगु: अप्सरोगणा: ननृतु: ॥८॥

सरलार्थ—महाराज दशरथ के चारों पुत्र पूर्वा और उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र की तरह कान्तिमान गुणवान व सुन्दर थे । उनके जन्म समय में गन्धर्व गीत गाने लगे और अप्सराओं ने नृत्य किया ॥८॥

श्लोक:—"देवदुन्दुभयो नेदु: ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ:—देवदुन्दुभय:=देवताओं के नगाड़े । पुष्प वृष्टि:=फूलों की वर्षा । खच्युता=आकास से गिरी । जनाकुल:=लोगों की भीड़ से युक्त । नेदु:=बजे ॥९॥

अन्वय:—देवदुन्दुभय: नेदु: पुष्पवृष्टि: खच्युता । अयोध्यायां जनाकुल: महान् उत्सव: आसीत् ॥९॥

सरलार्थ:—देवताओं ने नगारे बजाये, आकाश से पुष्प वृष्टि हुई तथा सम्पूर्ण अयोध्या में लोगों की भीड़ वाला महान् उत्सव मनाया गया ॥९॥

श्लोक:—"रथ्याश्च जनसंबाधा ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ:—रथ्या:=गलियां । जनसंबाधा=लोगों से भीड़ वाली । नटनर्तन संकुला=नटों के नाचने से युक्त । प्रदेयान्=वस्तुओं को । सूत-मागधवन्दिनाम्=भाटचरण और स्तुति पाठ करने वालों को । ददौ= दिये ॥१०॥

अन्वय:—नटनर्तनसंकुला: जनसम्बाधा: रथ्या: संजाता:, राजा सूतमागधवन्दिनाम् प्रदेयान् च ददौ ॥१०॥

सरलार्थ:—नटों के नृत्य से व्यस्त तथा जनसम्मर्द से परिपूर्ण अयोध्या की गलियां हो गईं, राजा दशरथ ने भी इस अवसर पर खुशी में भाटचारण और स्तुतिपाठकों को इनाम में बहुमूल्य वस्तुएं दीं ॥१०॥

श्लोक:—"ब्राह्मणेभ्यो ददौ वित्तम् ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ:—ब्राह्मणेभ्य:=ब्राह्मणों को । वित्तं=धन । सहस्रश:= हजारों । गोधनानि=गाय रूप धनों को । एकादशाहं=ग्यारहवां दिन । अतीत्य=बीत जाने पर । नाम कर्म=नाम संस्कार ॥११॥

अन्वय:—राजा ब्राह्मणेभ्य: वित्तं सहस्रश: गोधनानि ददौ तथा एकादशाहं अतीत्य नाम कर्म अकरोत् ॥११॥

सरलार्थ:—राजा दशरथ ने ब्राह्मणों को धन तथा हजारों गोदान किये । ग्यारहवें दिन के पश्चात् अपने पुत्रों का नाम संस्कार कर्म सम्पन्न किया ॥११॥

श्लोक:—"ज्येष्ठं रामं महात्मानं ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ:—ज्येष्ठं=सब से बड़े । सौमित्रि=लक्ष्मण । कैकयीसुतं= कैकयी पुत्र को ॥१२॥

अन्वय:—ज्येष्ठं महात्मानं राम इति, कैकयी सुतं भरत इति, सौमित्रि लक्ष्मण: तथा अपरं शत्रुघ्न इति नाम कर्म अकरोत् ॥१२॥

सरलार्थः—राजा दशरथ ने सबसे बड़े भाग्यशाली पुत्र का नाम राम और कैकयी के पुत्र का नाम भरत तथा सुमित्रा के पुत्रों का नाम लक्ष्मण व शत्रुघ्न रक्खा ॥१२॥

श्लोकः—"तेषामपि महातेजाः ।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थः—तेषामपि = उन सब में भी । महातेजाः = तेजस्वी । शशाङ्कः = चन्द्रमा । सर्वस्य लोकस्य = सब लोगों के । इष्टः = अभिलषित ॥१३॥

अन्वयः—तेषाम् अपि महातेजाः सत्यपराक्रमः रामः शशाङ्कः इव निर्मलः सर्वस्य लोकस्य इष्टः आसीत् ॥१३॥

सरलार्थः—उन चारों में महान् तेजस्वी सत्य पराक्रमी राम चांद की तरह निर्मल एवं सब लोगों के इष्ट थे ॥१३॥

श्लोकः—"गजस्कन्धेऽश्वपृष्ठे च ।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थः—गजस्कन्धे=हाथी की सवारी में । अश्वपृष्ठे=घोड़े की सवारी में । रथचर्यासु = रथ हांकने में । धनुर्वेदे=धनुष्य विद्या में । शुश्रूषणे=सेवा करने में । रतः=लगा हुआ, तत्पर ॥१४॥

अन्वयः—सः गजस्कन्धे अश्वपृष्ठे रथचर्यासु सम्मतः धनुर्वेदे निरतः तथा पितुः शुश्रूषणे रतः अस्ति ॥१४॥

सरलार्थः—वह राम हाथी की सवारी, घोड़े की सवारी तथा रथ चलाने में चतुर है । धनुष विद्या में कुशल एवं पिता की सेवा में भी तत्पर रहते हैं ॥१४॥

श्लोकः—"बाल्यात्प्रभृति सुस्निग्धो ।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थः—बाल्यात्प्रभृति=बचपन से लेकर । सुस्निग्धः=स्नेही । लक्ष्मीवर्धनः=शोभा के घर । सर्वप्रियकरः=सबको खुश करने वाला ॥१५॥

अन्वयः—बाल्यात्प्रभृति सुस्निग्धः लक्ष्मीवर्धनः लक्ष्मणः तस्य रामस्य अपि शरीरतः सर्वप्रियकरः अभवत् ॥१५॥

सरलार्थ:—बचपन से लेकर स्नेही शोभा के घर लक्ष्मण उस राम से भी शरीर से सबको प्रसन्न करने वाले हुए ॥१५॥

श्लोक:—"भरतस्यापि शत्रुघ्नः ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ:—भरतस्यापि=भरत के भी । लक्ष्मणावरजः=लक्ष्मण के छोटे भाई । प्राणैः=प्राणों से । प्रियकरः=अधिक प्यारा । आसीत्=था ॥१६॥

अन्वय:—तस्य भरतस्य अपि सः लक्ष्मणावरजः शत्रुघ्नः नित्यं प्राणैः प्रियतरः तथा तस्य प्रियः आसीत् ॥१६॥

सरलार्थ:—भरतजी के भी वह लक्ष्मण का छोटा भाई शत्रुघ्न नित्य प्राणों से भी अधिक प्यारा था और वह लक्ष्मण को भी प्रिय था ॥१६॥

श्लोक:—"ते यदा ज्ञान सम्पन्नाः ।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ:—ते=वे सब । ज्ञान सम्पन्नाः=ज्ञान से पूर्ण । ह्रीमन्तः=शर्म वाले । दीर्घदर्शिनः=दूरदर्शी । सर्वज्ञाः=सब जानने वाले ॥१७॥

अन्वय:—यदा ते ज्ञान सम्पन्नाः सर्वे गुणैः समुदिताः ह्रीमन्तः कीर्तिमन्तः सर्वज्ञाः दीर्घदर्शिनः अभवन् ॥१७॥

सरलार्थ:—जब वे ज्ञान से परिपूर्ण एवं सभी गुणों से सम्पन्न लज्जा वाले कीर्ति से युक्त सर्वज्ञ तथा दूरदर्शी हुये ॥१७॥

श्लोक:—"तेषामेवं प्रभावाणां ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ:—प्रभावाणां=प्रभाव वालों का । दीप्ततेजसां=तेजस्वियों का । सर्वेषां=सब का । हृष्टः=प्रसन्न हुये ॥१८॥

अन्वय:—सर्वेषां दीप्ततेजसां एवं प्रभावाणां तेषां पिता दशरथः हृष्टः यथा लोकाधिपः ब्रह्मा ॥१८॥

सरलार्थ:—सब महान् तेजस्वी एवं अत्यन्त प्रभावशाली उन राम आदि चारों भ्राताओं के पिता दशरथ उनके गुणों को देखकर परम प्रसन्न हुये । जिस प्रकार संसार के स्वामीजी प्रसन्न होते हैं ॥१८॥

षष्ठः सर्गः

रामलक्ष्मणयोर्विश्वामित्राश्रमगमनम्

श्लोकः—"तथा वसिष्ठे ब्रुवति।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—ब्रुवति=कहने पर। प्रहृष्टवदनः=प्रसन्नचित। आजुहाव=बुलाया। सलक्ष्मणम्=लक्ष्मण के साथ ॥१॥

अन्वयः—वसिष्ठे तथा ब्रुवति सति प्रहृष्टवदनः स्वयं राजा दशरथः सलक्ष्मणम् रामं आजुहाव ॥८॥

सरलार्थः—पुरोहित वसिष्ठजी के कहने पर प्रसन्नचित वाले स्वयं महाराज दशरथ ने लक्ष्मण के साथ रामचन्द्रजी को बुलाया ॥१॥

श्लोकः—"कृतं स्वस्त्ययनम्।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—स्वस्त्ययनम्=स्वस्ति वाचन। पुरोधसा=पुरोहित के द्वारा। मङ्गलैः=माङ्गलिक मन्त्रों से ॥२॥

अन्वयः—पुरोधसा वसिष्ठेन मात्रा पित्रा दशरथेन च मङ्गलैः अभिमन्त्रितम् स्वस्त्ययनं कृतम् ॥२॥

सरलार्थः—पुरोहित वसिष्ठजी माता तथा पिता दशरथजी के द्वारा माङ्गलिक मन्त्रों के द्वारा अभिमन्त्रित राम और लक्ष्मण के लिए कल्याण कामना की गई ॥२॥

श्लोकः—"सपुत्रं मूर्ध्न्युपाघ्राय।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थः—मूर्ध्नि=मस्तक पर। उपाघ्राय=सूंघकर। सुप्रीतेन=प्रसन्नता से। कुशिकपुत्राय=विश्वामित्रजी को ॥३॥

अन्वयः—तदा सः राजा दशरथः पुत्रं मूर्ध्नि उपाघ्राय सुप्रीतेन अन्तरात्मना कुशिक पुत्राय ददौ ॥३॥

सरलार्थ:—तब महाराज दशरथ ने प्रेम से अपने पुत्र राम को, मस्तक में सूंघकर के प्रसन्न दिल से मुनियों के उपकार के लिये विश्वामित्रजी को सौंप दिया ॥३॥

श्लोक:—"विश्वामित्रो ययावग्रे ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ:—ययौ=चले । महायशा:=महान् कीर्ति वाले । धन्वी=धनुर्धारी । काकपक्षधर:=सिर पर लम्बे-लम्बे काले बाल धारण करने वाले । सौमित्रि:=लक्ष्मण । अन्वगात्=अनुगमन किया ॥४॥

अन्वय:—अग्रे विश्वामित्र: ययौ तत: महायशा: राम: । तं काकपक्षधर: धन्वी सौमित्रि: अन्वगात् ॥४॥

सरलार्थ:—आगे २ विश्वामित्र चले । उनकी पीछे महान् कीर्ति वाले राम चले । लम्बे लम्बे केशधारी धनुर्धारी लक्ष्मण भी राम के पीछे चल दिये ॥४॥

श्लोक:—"कलापिनौ धनुष्पाणी ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ:—कलापिनौ=मयूर पिच्छों को धारण करने वाले । अक्षुद्रौ=महान् । पितामहम् = ब्रह्माजी को । अश्विनौ=दोनों अश्विनीकुमार । अनुजग्मतु:=अनुगमन किया ॥५॥

अन्वय:—पितामहम् अश्विनौ इव कलापिनौ धनुष्पाणी दश दिश: शोभयानौ अक्षुद्रौ अनुजग्मतु: ॥५॥

सरलार्थ:—जिस प्रकार अश्विनीकुमार ब्रह्माजी का अनुगमन करते है उसी प्रकार मयूरपिच्छों को धारण वाले हाथों में धनुष को धारण करते हुए महान् राम और लक्ष्मण दस दिशाओं को सुशोभित करते हुए विश्वामित्र के पीछे चले ।

श्लोक:—"अध्यर्धं योजनं गत्वा ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ:—अर्धयोजनं=आधा योजन । गत्वा = जाकर । सरय्वा:=सरजू नदी के । तटे=किनारे पर । अभ्यभाषत=बोले ॥६॥

अन्वयः—अध्यर्धयोजनं गत्वा सरय्वाः दक्षिणे तटे विश्वामित्रः हे राम ! इति मधुरां वाणीं अभ्यभाषत ॥६॥

सरलार्थः—आधे योजन तक दूर जाकर सरयू नदी के दक्षिण किनारे पर विश्वामित्रजी राम को सम्बोधित करके मधुर वाणी से कहने लगे ॥६॥

श्लोकः—"गृहाण वत्स सलिलं ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—गृहाण=हाथ में लो। सलिलं=जलं। पर्ययः = विलम्ब। मन्त्र ग्रामं=मन्त्रों के समूह को। बला=विद्या का नाम। अतिबला=विद्या का नाम ॥७॥

अन्वयः—हे वत्स ! सलिलं गृहाण कालस्य पर्ययः मा भूत्। त्वं मन्त्रग्रामं तथा बलां अतिबलां गृहाण ॥७॥

सरलार्थः—हे पुत्र राम ! तुम शीघ्र ही हाथ में पानी लो, विलम्ब मत करो। तुम मन्त्रों के समूह एवं बला और अतिबला नाम की विद्याओं को ग्रहण करो।

श्लोकः—"न श्रमो न ज्वरो वा।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थः—श्रमः=थकान। ज्वरः=बुखार। विपर्ययः=विकार। सुप्तं = सोते हुए को। प्रमत्तं=असावधान को। नैऋताः=राक्षस। धर्षयिष्यन्ति=आक्रमण करेंगे ॥८॥

अन्वयः—श्रमः न ज्वरः न तेरूपस्य विपर्ययः न। नैऋताः सुप्तं प्रमत्तं वा न धर्षयिष्यन्ति ॥८॥

सरलार्थ—हे राम ! इन विद्याओं के प्रभाव से तुम्हें न तो थकान मालूम होगी और ज्वर पीडा ही होगी। तुम्हारे सौन्दर्य में भी परिवर्तन नहीं हो सकेगा और राक्षस वर्ग सोते हुये या असावधान तुम्हारे पर आक्रमण नहीं करेंगे ॥८॥

श्लोक—"न बाह्वोः सदृशो" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—वीर्ये=पराक्रम में। बाह्वोः=भुजाओं के। सदृशः=समान। त्रिषुलोकेषु=तीनों लोकों में ॥९॥

अन्वय—हे राम ! वीर्ये कश्चन पृथिव्यां तव बाह्वोः सदृशः न वा त्रिषु लोकेषु तव सदृशः न भवेत् ॥९॥

सरलार्थ—हे राम ! पराक्रम में कोई भी पृथिवी में तुम्हारी भुजाओं के समान नही होगा और तीनों लोकों में तुम्हारे समान नहीं होगा ॥९॥

श्लोक—"ततो रामो जलं स्पृष्ट्वा" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—स्पृष्ट्वा=छूकर। प्रहृष्टवदनः=प्रसन्नचित्त। शुचिः=पवित्र। भावितात्मनः=शुद्ध अन्तःकरण वाले। महर्षेः=ऋषि से। प्रति जग्राह= ग्रहण की ॥१०॥

अन्वय—ततः शुचिः प्रहृष्टवदनः रामः जलं स्पृष्ट्वा भावितात्मनः महर्षेः ते विद्ये प्रति जग्राह ॥१०॥

सरलार्थ—उसके बाद पवित्र और प्रसन्नचित्त वाले राम ने जल को छूकर शुद्ध अन्तःकरण वाले उस विश्वामित्र ऋषि से उन दोनों विद्याओं को ग्रहण किया ॥१०॥

श्लोक—"विद्या समुदितो रामः।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—विद्या समुदितः=विद्यासे प्रकाशमान। भीमदर्शनः=भयंकर आकृतिवाला। सहस्त्ररश्मिः=सूर्य। शु शुभे=सुशोभित होने लगे ॥११॥

अन्वय—शरदि सहस्त्ररश्मिः भगवान् दिवाकर इव विद्यासमुदितः भीमदर्शनः रामः शुशुभे ॥११॥

सरलार्थ—शरद् ऋतु में हजार किरणों से जगमगाने वाले भगवान् सूर्य नारायण की तरह विद्याओं के प्रभाव से देदीप्यमान भयंकर दर्शन वाले राम सुशोभित होने लगे ॥११॥

——००——

सप्तमः सर्ग

"ताटका वधः"

श्लोक—"ततः प्रभाते विमले" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—विमल:=निर्मल। कृताह्निकम्=संध्यावंदन किये हुये। अरिंदमौ=शत्रुओं का दमन करने वाले। उपागतौ=उपस्थित हुये ॥१॥

अन्वय—ततःविमले प्रभाते अरिंदमौ कृताह्निकम् विश्वामित्रं पुरस्कृत्य नद्याः तीरम् उपागतौ ॥१॥

सरलार्थ—उसके पश्चात् निर्मल प्रातःकाल होजाने पर राम और लक्ष्मण दैनिक संध्यावंदन करके विश्वामित्रजी को साथ लेकर सरयूनदी के किनारे पर उपस्थित हो गये ॥१॥

श्लोक—"ते च सर्वे महात्मानः।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—संशितव्रताः=उत्तमव्रत का पालन करनेवाले। उपस्थाप्य=हाजिर कर। नावं=नौका को। अब्रुवन्=बोले ॥२॥

अन्वय—संशितव्रताः ते सर्वे महात्मानः मुनयः शुभं नावं उपस्थाप्य विश्वामित्रं अब्रुवन् ॥२॥

सरलार्थ—संगम के पास आश्रम में उत्तम व्रत का पालन करने वाले उन सिद्धात्मा मुनियों ने सुन्दर नौका को हाजिर करके विश्वामित्र से कहा ॥२॥

श्लोक—"आरोहतु भवान्नावम्।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—आरोहतु=चढिये। राजपुत्र पुरस्कृतः=राजकुमारों को आगे करके। अरिष्टं = विघ्नों से युक्त। पन्थानं = मार्ग को। कालस्य पर्यय: = विलम्ब। माभूत्=नहो ॥३॥

अन्वय—राजपुत्रान् पुरस्कृत: भवान् नावं आरोहतु । अरिष्टं पंथानं गच्छ कालस्य पर्यय: माभूत् ॥३॥

सरलार्थ—हे मुनिवर ! आप राजपुत्रों को आगे करके नाव पर बैठ जाइये । विलम्ब मत कीजिये । अपने विघ्नों से पूर्ण मार्ग को तय कीजिये ॥३॥

श्लोक—"विश्वामित्रस्तथेत्युक्त्वा" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—अभिपूज्य=सत्कार करके । सागरंगमां = समुद्र में जानेवाली । सरितं=नदी को । संसार पार किया ॥४॥

अन्वय—विश्वामित्र: तथेति उक्त्वा तान् ऋषीन् अभिपूज्य ताभ्यां सहित: सागरंगमां सरितं ततार ॥४॥

सरलार्थ—विश्वामित्रजी ने 'वहुत अच्छा' कहकर उन महर्षियों की पूजा करके राम और लक्ष्मण के साथ समुद्रगामिनी गङ्गा नदी को पार करने लगे ॥४॥

श्लोक—"सतु; शुश्राव तं शब्दम् ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ—शुश्राव=सुना । तोयसंरम्भवर्धित:=जल की टक्कर वढे हुये । तोयस्य मध्यम्=जलके वीच में । कनीयसा सह=लक्ष्मणजी के साथ ॥५॥

अन्वय—तत: कनीयसा सह राम: तोयस्य मध्यं आगम्य तोयसंरम्भवर्धितम् तं शब्दं शुश्राव ॥५॥

सरलार्थ—नाव पर चढने के पश्चात् लक्ष्मण के साथ रामचन्द्र ने नाव के जलधारा के वीच में पहुँचने पर जल के टकराने की वडी भारी आवाज को सुना ॥५॥

श्लोक—"राम: सरिन्मध्ये ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—सरिन्मध्ये=नदी के वीच में । प्रपच्छ=पूछा । मुनिपुङ्गवम्=मुनिश्रेष्ठ को । वारिण:=जल के । विद्यमानस्य=टकराते हुये । तुमुल:=महान् ॥६॥

अन्वय—रामः सरिन्मध्ये भिद्यमानस्य वारिणः अयं तुमुलः ध्वनिः किं इति मुनिपुङ्गवं अप्रच्छ ॥६॥

सरलार्थ—भगवान् राम ने नदी के बीच में पानी की टक्कर से उठा हुआ महान् कैसा शब्द सुनाई पड़ रहा है, इस बात को विश्वामित्र से पूछा ॥६॥

श्लोक—"एतौ जनपदौ स्फीतौ ।" इत्यादि॥७॥

शब्दार्थ—जनपदौ=देश । स्फीतौ=समृद्धि शाती । मलदाः=देश का नाम । करूषाः=देश का नाम । मुदिताः = प्रसन्न ॥७॥

अन्वय—हे अरिंदम ! दीर्घकालं एतौ जनपदौ स्फीतौ धन धान्यतः मलदाः करूषाः च मुदिताः ॥७॥

सरलार्थ—तब महा तेजस्वी विश्वामित्रजी ने कहा—हे नर श्रेष्ठ ! बहुत समय से मलद और करूष नामक देश समृद्धिशाली और धन धान्य से परिपूर्ण और सुखी रहे हैं ॥७॥

श्लोक—"कस्यचित्त्वथ कालस्य ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—यक्षिणी=राक्षसी । कामरूपिणी=स्वेच्छा से रूप धारण करने वाली । नागसहस्रस्य=हजार हाथी का । धारयन्ती=धारण करती हुई ॥८॥

अन्वय—अथ कस्यचित् कालस्य पश्चात् कामरूपिणी यक्षिणी नाग सहस्रस्य बलं धारयन्ती तदा अभूत् ॥८॥

सरलार्थ—कुछ काल के अन्तर यहाँ इच्छानुसार रूप धारण करने वाली हजार हाथियों के बल को धारण करती हुई एक राक्षसी उस वक्त उत्पन्न हुई ॥८॥

श्लोक—"ताटका नाम भद्रं ते ।," इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—भार्या=स्त्री । धीमतः=बुद्धिशाली । सुन्दस्य=सुन्दकी । शक्र पराक्रमः=इन्द्र के तुल्य पराक्रम वाला ॥९॥

अन्वय—ताटका नाम धीमतः सुन्दस्य ते भार्या यस्याः शक्रपराक्रमः मारीचो राक्षसः पुत्रः ॥९॥

सरलार्थ—उसका नाम ताडका है और वह बुद्धिमान् सुन्द की पत्नी है और इन्द्र के समान पराक्रमी मारीच राक्षस उसका पुत्र है ॥९॥

श्लोक—"सेयं पन्थानमावृत्य ।" इत्यादि ॥१०

शब्दार्थ—अर्धयोजनम्=छः कोस । पन्थानं=रास्ते को । आवृत्य=रोककर । गन्तव्यम्=जाना चाहिये ॥१०॥

अन्वय—सा इयं अर्धयोजने पन्थानं आवृत्य वसति अतः एव ताटकायाः वनं गन्तव्यम् ॥१०॥

सरलार्थ—वही यह ताडका राक्षसी छ कोस पर्यन्त रास्ते को रोक कर इस जंगल में रहती है अतः हम लोगों को ताडका के वन की ओर चलना चाहिये ॥१०॥

श्लोक—"स्व बाहुबलमाश्रित्य ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—दुष्टचारिणीं=दुराचारिणी को । इमां=ताडका को । जहि=मार डालो । मन्नियोगात्=मेरी आज्ञा से । निष्कंटकं=निर्विघ्न ॥११॥

अन्वय—हे राम ! स्व बाहुबलम् आश्रित्य मन्नियोगाम् दुष्टचारिणीं इचां जहि पुनः इमं देशं निष्कण्टकं कुरु ॥११॥

सरलार्थ—हे राम ? तुम मेरी आज्ञा से अपने बाहुबल का सहारा लेकर उस दुष्ट राक्षसी को मार डालो और एकबार फिर से इस देश को निष्कंटक बना दो ॥११॥

श्लोक—"नहि ते स्त्रीवधकृते ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—नरोत्तमः=नरश्रेष्ठ । स्त्रीवधकृते=स्त्री की हत्या के लिये । घृणा=नफरत । चातुर्वर्ण्यं=चारों वर्णों के । हितार्थं=कल्याण के लिये ॥१२॥

अन्वय—हे नरोत्तम ! ते स्त्रीवधकृते घृणा न हि कार्या हि चातुर्वर्ण्यहितार्थं राजसूनुना कर्तव्यम् ॥१२॥

सरलार्थ—हे नर पुंगव ! तुम्हें स्त्री हत्या के लिये घृणा नहीं करनी चाहिये। चारों वर्णों की भलाई के लिये राजपुत्र तुम्हारे द्वारा उसका वध किया जाना आवश्यक है ॥१२॥

श्लोक—"नृशंसमनृशंसं वा।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—नृशंसं=निर्दयी को। अनृशंसं=दयालु को। प्रजा रक्षण-कारणात्=प्रजा की रक्षा के हेतु से। पावनं=पवित्र को। सदोषं=अपराधी को ॥१३॥

अन्वय—सदा कर्तव्यं रक्षता प्रजारक्षण कारणात् नृशंसं अनृशंसं पावनं सदोषं वा हन्तव्यः ॥१३॥

सरलार्थ—नित्य अपना कर्तव्य का पालन करने वाले पुरुष को चाहिये कि प्रजा की भलाई के उद्देश्य से निर्दयी अथवा दयालु पवित्र अथवा अपराधी को मार डालना चाहिये ॥१३॥

श्लोक—"राज्य भार नियुक्तानाम्।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ—राज्य भार नियुक्तानाम्=राज्य कार्य करने वालों का। सनातनः=परंपरा से चला आता हुआ प्राचीन। अधर्म्या=दुष्टा को। जहि=मारडालो ॥१४॥

अन्वय—हे काकुत्स्थ ! राज्य भार नियुक्तानां एष सनातनः धर्मः। अधर्म्या जहि अस्मिन् अधर्मः न विद्यते ॥१४॥

सरलार्थ—हे राम ? राज्य का उत्तरदायित्व संभालने वालों का यह प्राचीन धर्म है कि तुम इस दुराचारिणी को मार डालो। ऐसा करने में कोई अधर्म नहीं है ॥१४॥

श्लोक—"एवमुक्तो धनुर्मध्ये ।" इत्यादि ।।१५।।

शब्दार्थ—एवमुक्तः=इस प्रकार कहा गया । वध्वा=बांधकर । अरिंदमः= शत्रुदमन । मुष्टि=मुट्ठी को । ज्याघोषं=प्रत्यञ्चा के शब्द को । नादयन्=शब्दायमान करता हुआ ।।१५।

अन्वय—एवं उक्तः अरिंदमः धनुर्मध्ये मुष्टिं वध्वा शब्देन दिशः नादयन् तीव्रं ज्याघोषं अकरोत् ।।१५।।

सरलार्थ—इस प्रकार कहे गये शत्रु दमन रामने धनुष के मध्य भाग में मुट्ठी बांधकर प्रत्यञ्चा के शब्द से दिशाओं को गुंजाते हुये उस धनुष की प्रत्यञ्चा पर तीव्र टंकार दी ।।१५।।

श्लोक—"तं शब्दमनिभिध्याय ।" इत्यादि ।।१६।।

शब्दार्थ—अनिभिध्याय=पहचान कर । क्रोधमूर्च्छिता=क्रोध में भरी-हुई । अभ्यद्रवत्=दौडी । विनिःसृतः=निकला । श्रुत्वा=सुनकर ।।१६।।

अन्वय—तं शब्दं श्रुत्वा क्रुद्धां राक्षसी अनिभिध्याय क्रोधमूर्च्छिता यत्र शब्दः विनिसृतः अभ्यद्रवत् ।।१६।।

शरलार्थ—उस धनुष की आवाज को सुनकर क्रोधित राक्षसी ताडका उस शब्द को पहचानकर आग बबूला होती हुई जहां से आवाज निकली थी उसी दिशा की ओर दौडी ।।१६।।

श्लोक—"तामापतन्तीं वेगेन ।" इत्यादि ।।१७।।

शब्दार्थ—आपतन्तीं=आती हुई को । वेगेन = रफ्तार से । अशनी-मिव=इन्द्र के वज्र की तरह । शरेण = बाण से । उरसि=छातीमें । विव्याध=चीर डाला । ममार=मरगई ।।१७।।

अन्वय—विक्रान्तां अशनीम् इव वेगेन आपतन्तीं तां उरसि शरेण विव्याध सा पपात ममार च ।।१७।।

सरलार्थ—शक्ति शाली इन्द्र के वज्र के समान उस ताडका को वेग से आती हुई देख वाण से उसकी छाती को चीर डाला । वह तुरन्त गिर गई और मर गई ॥१७॥

श्लोक—"ततो मुनिवरः प्रीतः ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—मुनिवरः=विश्वामित्र । प्रीतः=प्रसन्न हुये । ताटकावध-तोषितः=ताडका के मारने से संतुष्ट । उपाघ्राय=सूंघकर । अब्रवीत्=बोले ॥१८॥

अन्वय—ततः ताटका वधतोषितः मुनिवरः रामं मूर्ध्नि उपाघ्राय इदं वचनं अब्रवीत् ॥१८॥

सरलार्थ—उसके वाद ताडका के मारने से संतुष्ट विश्वामित्रजी राम को प्रेम से मस्तक में सूंघकर यह वचन बोले ॥१८॥

श्लोक—"परितुष्टोऽस्मि भद्रं ते ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—भद्रं=कल्याण । महायशः=कीर्तिसम्पन्न । परितुष्टः= प्रीत्या=प्रेम से । अस्त्राणि=अस्त्रों को ॥१९॥

अन्वय—हे महायशः राजपुत्र ! ते भद्रं परितुष्टः अस्मि परमया युक्तः सर्वशः अस्त्राणि ददामि ॥१९॥

सरलार्थ—हे महान् यशस्वी राम ! तुम्हारा कल्याण हो । ताडका-वध के कारण मैं तुम पर प्रसन्न हूं, अतः बड़ी प्रसन्नता के साथ तुम्हें सब प्रकार के अस्त्र देता हूं ॥१९॥

श्लोक—"ततः सः प्राङ्मुखो भूत्वा ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—प्राङ्मुखः=पूर्व की तरफ मुंह करके । भूत्वा=होकर । शुचिः=पवित्र । मन्त्रग्राम=मन्त्र समूह को । ददौ= दिया ॥२०॥

अन्वय—ततः सः शुचिः मुनिवरः प्राङ्मुखः भूत्वा तदा सुप्रीतः रामाय उत्तमम् मंत्रग्रामं ददौ ॥२०॥

सरलार्थ—उसके बाद उस पवित्र मुनि विश्वामित्रजी ने पूर्व की तरफ मुंह करके उस वक्त प्रसन्न होकर राम को सर्व श्रेष्ठ मंत्रों के समूह को समर्पण कर दिया ॥२०॥

—०○—

अष्टमः सर्गः

सिद्धाश्रमे विश्वामित्रयज्ञ-रक्षणम् ।

श्लोक—"अथ काले गते तस्मिन् ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—काले गते=समय जाने पर । षष्ठे अहनि=छठे दिनमें । आगते=आने पर । सौमित्रिं=लक्ष्मण को । समाहितः=सावधान । भव=हो जाओ ॥१॥

अन्वय—अथ तस्मिन् काले गते तथा षष्ठे अहनि आगते रामः सौमित्रिं अब्रवीत् यत् त्वं समाहितः भव ॥१॥

सरलार्थ—तत्पश्चात् उस सिद्धाश्रम में कुछ समय बीत जाने पर एवं छठे दिन के प्राप्त हो जाने पर रामने लक्ष्मण से कहा कि हे लक्ष्मण तुम अब सावधान हो जाओ ॥१॥

श्लोक—"रामस्यैवं ब्रुवाणस्य ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—ब्रुवाणस्य=कहने वाले । युयुत्सया=युद्ध की इच्छा से । वेदिः=यज्ञ मण्डप । सोपाध्यायपुरोहिता=उपाध्याय पुरोहितों सहित । प्रजज्वाल=प्रज्वलित हो उठा ॥२॥

अन्वय—त्वरितस्य युयुत्सया एवं ब्रुवाणस्य रामस्य ततः सोपाध्याय-पुरोहिता वेदिः प्रजज्वाल ॥२॥

सरलार्थ—शीघ्र ही युद्ध करने की अभिलाषा से राम के इस प्रकार कहते ही उपाध्यायपुरोहितों के साथ ही आहवनीय अग्नियों से यज्ञ मण्डप प्रज्वलित हो गया ॥२॥

श्लोक—"मन्त्रवच्च यथा न्यायं।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—मन्त्रवत् = मंत्रों के साथ। यथान्यायं=विधिके अनुसार। संप्रवर्तते=प्रारम्भ होता है। प्रादुरासीत्=प्रकट हुआ ॥३॥

अन्वय—मन्त्रवत् यथा न्यायं असौ यज्ञः संप्रवर्तते आकाशे महान् भयानकः शब्दः प्रादुरासीत् ॥३॥

सरलार्थः—वैदिक मन्त्रों से परिपूर्ण एवं विधि ने अनुसार वह विश्वामित्रजी का यज्ञ प्रारम्भ हो गया। इतने में ही आकाश मण्डल में महान् भयंकर रोमांचकारी आवाज सुनाई दी ॥३॥

श्लोकः—"आवार्य गगनं मेघो।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थः—आवार्य=घेर कर। मेघः=बादल। प्रावृषि=वर्षा ऋतु में। मायां=आडम्बर को विकुर्वाणौ=करते हुए। अभ्यधावताम्=दौड़े ॥४॥

अन्वयः—यथा प्रावृषि मेघः गगनं आवार्य दृश्यते तथा मायां विकुर्वाणौ राक्षसौ अभ्यधावताम् ॥४॥

सरलार्थः—जिस प्रकार वर्षा ऋतु में बादल आकाश को घेर लेते हैं उसी प्रकार अपनी माया को फैलाते हुये वे मारीच और सुबाहु नाम के राक्षस वेग से यज्ञ–मण्डप की ओर दौड़े ॥४॥

श्लोकः—"मारीचश्च सुबाहुश्च।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—अनुचराः=सेवक। तयोः = उन दोनों के। आगम्य = आकर। भीम संकाशाः=भयंकर आकृति वाले। रुधिरौघान्=खून की वर्षा। अवासृजन्=करने लगे ॥५॥

अन्वयः—मारीचः।सुबाहुः तथा भीम संकाशाः तयोः अनुचराः आगम्य रुधिरौघान् अवासृजन् ॥५॥

सरलार्थः—मारीच व सुबाहु नाम के राक्षस तथा भयंकर आकृति वाले उनके सेवक राक्षसगण सिद्धाश्रम में आकर खून की वर्षा करने लगे ॥५॥

श्लोकः—"तावापतन्तौ सहसा ।" ॥६॥

शब्दार्थः—आपतन्तौ = आते हुये । सहसा = शीघ्र, अकस्मात् । दृष्ट्वा=देख कर । राजीवलोचनः=कमलतुल्यनेत्र वली राम । परम भास्वरं= अत्यन्त चमकीला ॥६॥

अन्वयः—राजीवलोचनः सहसा आपतन्तौ तौ दृष्ट्वा परम भास्वरं परमोदारं मानवं अस्त्रं जग्राह ॥६॥

सरलार्थः—कमल नयन राम ने अचानक आते हुए उन मारीच और सुवाहु को देख कर अत्यन्त तेजस्वी एवं अत्यन्त उदार मानवास्त्र को ग्रहण किया ॥६॥

श्लोकः—"चिक्षेप परम क्रुद्धो ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—चिक्षेप = फेंका । परमक्रुद्धः=अत्यन्त क्रोधी । उरसि= छाती में । समाहतः=मारा डाला गया ॥७॥

अन्वयः—परमक्रुद्धः राघवः मारीचोरसि चिक्षेप तेन परमास्त्रेण मानवेन सः समाहतः ॥७॥

सरलार्थः—अत्यन्त क्रोधी राम ने मारीच राक्षस को छाती पर उस अस्त्र को फेंका और उस मानवास्त्र वे वह तत्काल ही मारा गया ॥७॥

श्लोकः—"सम्पूर्णं योजन शतं ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थः—योजनशतं=सौ योजन । क्षिप्तः=फेंका गया । सागर- संप्लवे=समुद्र के पानी में । निरस्तं=तिरस्कृत । अब्रवीत्=बोले ॥८॥

अन्वयः—सम्पूर्णं योजनशतं सागरसम्प्लवे क्षिप्तः रामः मारीचं निरस्तं दृष्ट्वा लक्ष्मणम् अब्रवीत् ॥८॥

सरलार्थ:—राम के मानवास्त्र के द्वारा वह मारीच सौ योजन दूर तक समुद्र में फेंका गया। इस प्रकार राम मारीच को तिरस्कृत हुआ देख कर लक्ष्मण से बोले ॥८॥

श्लोक:—"इमानपि वधिष्यामि।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ:—इमान्=इन्हें। वधिष्यामि=मारूंगा। निघृणान्=घृणा-रहितों को। रुधिराशनान्=रक्त का भोजन करने वालों को। यज्ञघ्नान्=यज्ञ में विघ्न करने वालों को। पापकर्मस्थान्=पाप कर्म करने वालों

अन्वय:—पापकर्मस्थान् यज्ञघ्नान् रुधिराशनान् निघृणान् दुष्ट चारिणः इमान् राक्षसान् अपि वधिष्यामि ॥९॥

सरलार्थ:—पाप कर्म करने वाले, यज्ञ का विध्वंस करने वाले, रक्तभोजी, दुराचारी और घृणा नहीं रखने वाले इन राक्षसों को भी मारूंगा ॥९॥

श्लोक:—"इत्युक्त्वा लक्ष्मणं चाशु।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ:—इत्युक्त्वा = ऐसा कह कर। लाघवं = फूर्ति। आशु = शीघ्र। दर्शयन्=दिखाते हुये। विगृह्य=पकड़ कर। आग्नेयं=अग्नि की वर्षा करने वाला अस्त्र ॥१०॥

अन्वय:—रघुनन्दनः लक्ष्मणं इति उक्त्वा आशु लाघवं दर्शयन् इव सुमहत् आग्नेयं अस्त्रं विगृह्य ॥१०॥

सरलार्थ:—रामचन्द्र ने लक्ष्मण को इतना कह कर शीघ्र ही बड़ी फूर्ती के साथ देखते ही देखते महान् आग्नेय अस्त्र को धारण कर लिया ॥१०॥

श्लोक:—"सुबाहूरसि चिक्षेप सः।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ:—चिक्षेप=फेंका। विद्धः=बींधा गया। भुवि=पृथ्वी पर। प्रापतत्=गिर गया। वायव्यम्=वायव्यास्त्र को। आदाय=लेकर। निजघान=मार डाला ॥११॥

अन्वय:—राम: सुबाहो: उरसि आग्नेयं चिक्षेप, विद्ध: स: भुवि प्रापतत् महायशा: शेषान् वायव्यम् आदाय निजघान ॥११॥

सरलार्थ:—महान् यशस्वी रामने सुबाहु नामक राक्षस के सीने में उस आग्नेय अस्त्र को फेंका जिससे बींधकर वह सुबाहु पृथ्वी पर गिर पड़ा और अन्य राक्षसों को वायव्यास्त्र लेकर मार डाला ॥११॥

श्लोक:—"राघव: परमोदारो।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ:—परमोदार: = उदार दिल वाले। मुदं=खुशी को। आहवन् = बढ़ाते हुये। हत्वा मार कर। यज्ञघ्नान्=यज्ञ को विध्वंस करने वालों को ॥१२॥

अन्वय:—परमोदार: राघव: मुनीनां मुदं आहवन् रघुनन्दन: यज्ञघ्नान् सर्वान् राक्षसान् हत्वा स: पूजित: ॥१२॥

सरलार्थ:—परम उदार दिल वाले राम मुनियों की खुशी को बढ़ाते हुये तथा यज्ञ का विध्वंस करने वाले सब राक्षसों को मारकर वे सत्कृत हुये ॥१२॥

श्लोक:—"ऋषिभि: पूजितस्तत्र।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ:—ऋषिभि: = मुनियों के द्वारा। पूजित: = सत्कार किया गया। पुरा=प्राचीन समय में। विजये=जीत होने पर ॥१३॥

अन्वय:—यथा पुरा विजये इन्द्र: तत्र ऋषिभि: पूजित:, अथ महामुनि: विश्वामित्र: यज्ञे समाप्ते तु ॥१३॥

सरलार्थ:—जिस प्रकार प्राचीन समय में विजय होने पर देवता इन्द्र की पूजा करते थे उसी प्रकार ऋषियों के द्वारा भगवान् राम का सत्कार किया गया। उसके बाद महामुनि विश्वमित्रजी यज्ञ के समाप्त हो जाने पर राम को कहने लगे ॥१३॥

श्लोक:—"निरीतिका दिशो दृष्ट्वा।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थः—निरीतिका=उपद्रव रहित। दिशः=दिशाएं। काकुत्स्थ=राम को। कृतार्थः=सफल मनोरथ। गुरुवचः=गुरु का आदेश ॥१४॥

अन्वयः—विश्वामित्रः निरीतिका दिशः दृष्ट्वा काकुत्स्थं इदम् अब्रवीत् कृतार्थः अस्मि हे महाबाहो! त्वया गुरुवचनं कृतम् ॥१४॥

सरलार्थः—विश्वामित्र ने ईति भीति आदि प्रलयङ्कारी उपद्रवों से रहित दिशाओं को देखकर राम को कहा। मैं सफल मनोरथ वाला हो गया हूं। हे महान् भुजाओं वाले! तुमने गुरु के आदेश का पूरी तरह से पालन किया है ॥१४॥

श्लोकः—"सिद्धाश्रममिदं सत्यं।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थः—इदं = यह। सत्यं = सच, वास्तव में। प्रशस्य=प्रशंसा करके। ताभ्यां=राम और लक्ष्मण के साथ। संध्यां=सांध्यकालीन कर्म करने हेतु ॥१५॥

अन्वयः—हे वीर! इदं सिद्धाश्रमं सत्यं महायशः कृतम् सः हि एवं रामं प्रशस्य ताभ्यां सह संध्याम् उपागतम् ॥१५॥

सरलार्थः—हे वीर! तुमने इस सिद्धाश्रम को सचमुच महान् कीर्तिशाली बना दिया है। इस प्रकार विश्वामित्रजी राम की तारीफ करके राम और लक्ष्मण के साथ सांध्यकालीन पूजा पाठ करने हेतु चले गये ॥११॥

——००——

नवमः सर्गः

मिथिलावृत्तान्तः

श्लोकः—"प्रभातायां तु शर्वर्याम् ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—प्रभातायां = प्रातःकाल सम्बन्धि । शर्वर्या = रात्रि में । कृता पौर्वाह्णिका क्रिया ययोस्तौ कृतपौर्वाह्णिकक्रियौ = प्रातःकाल के नैत्यिक नियमों को करके । अभिजग्मतुः=पास गये ॥१॥

अन्वयः—प्रभातायां शर्वर्यां कृतपौर्वाह्णिकक्रियौ सहितौ विश्वामित्रं अन्यान् ऋषीन् अभिजग्मतुः ॥१॥

सरलार्थः—प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में वे दोनों भाई पूर्वाह्णकाल के नित्य नैमित्तिक कार्यों से निवृत्त होकर विश्वामित्रजी तथा अन्य ऋषियों के पास गये ॥१॥

श्लोकः—"अभिवाद्य मुनिश्रेष्ठम् ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—अभिवाद्य = प्रणाम करके । मुनिश्रेष्ठं = विश्वामित्रजी को । ज्वलन्तं=प्रकाशमान । पावकमिव=अग्नि की तरह । मधुभाषिणौ= मधुर बोलने वाले । ऊचतुः=बोले ॥२॥

अन्वयः—मधुर भाषिणौ तौ ज्वलन्तं पावकम् इव मुनिश्रेष्ठं अभि-वाद्य परमोदारं वाक्यं ऊचतुः ॥२॥

सरलार्थः—मधुर भाषी वे दोनों राम और लक्ष्मण प्रकाशमान अग्नि की तरह विश्वामित्रजी को प्रणाम करके अत्यन्त उदार वचन कहने लगे ॥२॥

श्लोकः—"इमौ स्म मुनि शार्दूल ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थः—मुनि शार्दूल=मुनि श्रेष्ठ । किङ्करौ=सेवक । आज्ञापय= आज्ञा दीजिए । शासनं=आदेश । समुपागतौ=उपस्थित हो गये हैं ॥३॥

अन्वय:—हे मुनि श्रेष्ठ ! इमौ किङ्करौ समुपागतौ स्व: हे मुनि श्रेष्ठ ! आज्ञापय किं शासनं करवाव ।।३।।

सरलार्थ:—हे मुनि पुङ्गव ! ये हम सेवक आपकी सेवा में उपस्थित हो गये है । हे मुनिराज ! आप आज्ञा दीजिए कि अब हम लोग आपकी किस आज्ञा का पालन करें ।।३।।

श्लोक:—"एवमुक्ते तयोर्वाक्ये ।" इत्यादि ।।४।।

शब्दार्थ:—एवमुक्ते=ऐसा कहने पर । तयो:=उन दोनों के । पुरस्कृत्य=आगे करके । अब्रुवन्=बोले ।।४।।

अन्वय:—तयो: एवं उक्ते सति सर्वे महर्षय: विश्वामित्रं पुरस्कृत्य रामं वचनं अब्रुवन् ।।४।।

सरलार्थ:—राम और लक्ष्मण के इस प्रकार निवेदन करने पर सब मुनिगण विश्वामित्रजी को आगे करके राम को वचन कहने लगे ।।४।।

श्लोक:—"मैथिलस्य नर श्रेष्ठ ।" इत्यादि ।।५।।

शब्दार्थ:—मैथिलस्य=मिथिला के । परमधर्मिष्ठ: = परम धर्ममय । जनकस्य=जनक का । यास्यामहे=जावेंगे ।।५।।

अन्वय:—हे नर श्रेष्ठ ? मैथिलस्य जनकस्य परम धर्मिष्ठ: यज्ञ: भविष्यति तत्र वयं यास्यामहे ।।५।।

सरलार्थ:—हे नर श्रेष्ठ ! मिथिला के महाराज जनकजी का परम धर्ममय यज्ञ प्रारम्भ होने वाला है, उसमें हम सब लोग जायेंगे ।।५।।

श्लोक—"नास्य देवा न गंधर्वा: ।" इत्यादि ।।७।।

शब्दार्थ—देवा:=देवता । गंधर्वा:=देवताओं के गायक । आरोपणं कर्तुं=प्रत्यञ्चा चढाने के लिये । न शक्ता:=समर्थ नहीं है ।।७।।

अन्वय—देवा: गंधर्वा: असुरा: राक्षसा: अस्य आरोपणं कर्तुं न शक्ता: मानुषा: कथं चन न शक्ता: ।।७।।

सरलार्थ—देवता गंधर्व असुर और राक्षस भी इस धनुष की प्रत्यञ्चा को चढा नहीं सकते हैं तो मनुष्यों की तो बात ही क्या ॥७॥

श्लोक—"धनुषस्तस्य वीर्यं।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—वीर्यं=शक्ति। जिज्ञासवः=जानने की इच्छावाले। महीक्षितः=राजा लोग। आरोपयितुं=चढाने के लिये। न शेकुः=समर्थ नहीं हुये ॥८॥

अन्वय—तस्य धनुषः वीर्यं जिज्ञासवः महाबलाः राजपुत्राः महीक्षितः आरोपयितुं न शेकुः ॥८॥

सरलार्थ—उस शिवजी के अद्भुत धनुष की शक्ति का पता लगाने के लिये कितने ही महाबली राजपुत्र और राजा आये, किन्तु कोई भी उसे चढा न सके ॥८॥

श्लोक—"तद्धनु नरशार्दूल।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—तद्धनुः=उस धनुष को। मैथिलस्य=मिथिला के तत्र=वहां पर। द्रक्ष्यसि=देखोगे। परमाद्भुतम्=अत्यन्त अनोखा ॥९॥

अन्वय—हे नर शार्दूल! मैथिलस्य महात्मनः तद्धनुः, हे काकुत्स्थ! तत्र परमाद्भुतं यज्ञं द्रक्ष्यसि ॥९॥

सरलार्थ—हे नरकेसरी! मिथिला के महाराज जनक का वह धनुष तथा उनके अद्भुत यज्ञ को भी वहां देख सकोगे ॥९॥

श्लोक—"एवमुक्त्वा मुनिवरः।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—एवमुक्त्वा=ऐसा कहकर। प्रस्थानं=रवानगी। सकाकुत्स्थः=रामचंद्र के साथ। वनदेवताः=वनदेवियों को। आमन्त्र्य=आज्ञा लेकर ॥१०॥

अन्वय—एवं उक्त्वा मुनिवरः सकाकुत्स्थः सर्षिसंघः वनदेवताः आमन्त्र्य तदा प्रस्थानं अकरोत् ॥१०॥

सरलार्थ—ऐसा कहकर विश्वामित्रजी ने राम और लक्ष्मण के साथ तथा ऋषि मंडली के साथ वनदेवताओं की आज्ञा लेकर उस समय प्रस्थान किया ॥१०॥

श्लोक—"विश्वामित्रमनुप्राप्तम् ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—अनुप्राप्तं=आया हुआ । श्रुत्वा=सुनकर । प्रत्युज्जगाम=सामने उठकर गये । सहसा=एकाएक, शीघ्र । विनयेन समन्वितः=विनय से युक्त ॥११॥

अन्वय—तदा नृपवरः अनुप्राप्तं विश्वामित्रं श्रुत्वा सहसा विनयेन समन्वितः प्रत्युजगाम ॥११॥

सरलार्थ—उस समय महाराज जनक विश्वामित्रजी को आया हुआ सुनकर शीघ्र ही विनय से युक्त होते हुए उठकर लेने को सामने गये ॥११॥

श्लोक—"विश्वामित्राय पूजार्घं ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—धर्मपुरस्कृतम्=धर्म के अनुसार । पूजार्घं=पूजन और अर्घ को प्रतिगृह्य=स्वीकार के । विश्वामित्राय=विश्वामित्रजी को ॥१२॥

अन्वय—जनकः धर्मपुरस्कृतं पूजार्घं विश्वामित्राय ददौ, सः महात्मनः जनकस्य तां पूजां प्रतिगृह्य कुशलं पप्रच्छ ॥१२॥

सरलार्थ—जनकजी ने धर्म के अनुसार विश्वामित्रजी को पूजा और अर्घ प्रदान किया । महात्मा जनक की उस पूजा को स्वीकार करके उन्होंने कुशल समाचार पूछा ॥१२॥

श्लोक—"पप्रच्छ कुशलं राज्ञः ।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—पप्रच्छ=पूछा । निरामयम्=निर्बाध स्थिति को । पृष्ट्वा=पूछकर । सोपाध्यायपुरोधसः=उपाध्याय और पुरोहितों के साथ । । तान् मुनीन्=उन मुनियों को ॥१३॥

अन्वय—राज्ञः कुशलं यज्ञस्य निरामयं पप्रच्छ सः सोपाध्यायपुरोधसः तान् मुनीन् अपि पृष्ट्वा ॥१३॥

सरलार्थ—विश्वामित्रजी ने राजा जनकजी का कुशल समाचार और यज्ञ की निर्बाध स्थिति के विषय में जिज्ञासा की। तत्पश्चात् जनकजी नें वहां आये हुये ऋषि मुनियों और उपाध्यायों को कुशल पूछी ॥१३॥

श्लोक—"अथ राजा मुनि श्रेष्ठम्।" इत्यादि ॥१४

शब्दार्थ—कृताञ्जलिः=हाथ जोडकर । अभापत=बोले । भद्रं= कल्याण । देवतुल्यपराक्रमौ=देवताओं के समान पराक्रम वाले ॥१४॥

अन्वय—अथ राजा कृताञ्जलिः मुनिश्रेष्ठं अभापत ते भद्रं इमौ कुमारौ देवतुल्य पराक्रमौ स्तः ॥१४॥

सरलार्थ—तत्पश्चात् राजा जनक हाथ जोडकर विश्वामित्रजी से कहने लगे, तुम्हारा कल्याण हो। ये दोनों राजकुमार देवताओं समान पराक्रम वाले हैं ॥१४॥

श्लोक—"राजतुल्यगती वीरौ।" ॥१५॥

शब्दार्थ—गजतुल्यगती=हाथी के समान चाल वाले। शार्दूलवृपभो पमौ=सिंह व बैल के समान बली। समुपस्थित यौवनौ=जवानी में प्रवेश करने वाले। अश्विनौ इव=अश्विनीकुमार की तरह। रूपेण= सौन्दर्य से ॥१५॥

अन्वय—समुपस्थितयौवनौ रूपेण अश्विनौ इव शार्दूलवृपभोपमौ गजतुल्यगती वीरौ कःनु ॥१५॥

सरलार्थ—जवानी में प्रवेश करते हुये और सौन्दर्य में अश्विनी कुमारों की तरह ये हाथी के समान मस्त चाल वाले वीर कौन हैं ॥१५॥

श्लोक—"वरायुधवरौ वीरौ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—वरायुधवरौ=उत्तम शस्त्रवाले। इमं देशं=इस देश को। अम्बरम्=आकाश। भूपयन्तौ=सुशोभित करते हुये ॥१६॥

अन्वय—हे महामुने! चन्द्रसूर्यौ अम्बरम् इव इमं देशं भूपयन्तौ वरायुधवरौ वीरौ कस्य पुत्रौ स्तः ॥१६॥

सरलार्थ—हे विश्वामित्रजी ! चांद और सूर्य जिस प्रकार आकाश को सुशोभित करते है उसी प्रकार इस देश को सुशोभित करते हुये श्रेष्ठ शस्त्रवाले ये वीर किस के पुत्र हैं ॥१६॥

श्लोक—"तस्य तद्वचनं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ—तस्य=जनक का । श्रुत्वा=सुनकर । अमेयात्मा=महान् उदार दिल वाले । न्यवेदयत्=निवेदन किया ॥१७॥

अन्वय—तस्य जनकस्य महात्मनः तद्वचनं श्रुत्वा अमेयात्मा तौ दशरथस्य पुत्रौ न्यवेदयत् ॥१७॥

सरलार्थ—उस महात्मा जनकजी के वचन को सुनकर उदार हृदय वाले विश्वामित्रजी ने निवेदन किया कि वे दोनों दशरथ के पुत्र है ॥१७॥

श्लोक—"सिद्धाश्रम निवासञ्च ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—सिद्धाश्रमनिवासं सिद्धाश्रम में रहने के वृत्तान्त को । अव्यग्रं=सम्पूर्ण । राक्षसानां वधं=राक्षसों का वध ॥१८॥

अन्वय—सिद्धाश्रम निवासं तथा अव्यग्रं राक्षसानां वधं तत्र आगमनं विशालायाः दर्शनम् ॥१८॥

सरलार्थ—सिद्धाश्रम में निवास करना तथा सम्पूर्ण राक्षसों का वध करना, वहां पर मिथिला में आना और विशाला के दर्शन करना आदि जनकजी को निवेदन किया ॥१८॥

श्लोक—"अहल्या दर्शनं चैव ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—अहल्यादर्शनं=अहल्या के दर्शन । गौतमेन समागमम्=गौतम ऋषि से मिलना । महाधनुषि=महान् धनुष के विषय में । जिज्ञासां कर्तुं=जानने की इच्छा के हेतु ॥१९॥

अन्वय—अहल्यादर्शनं गौतमेन समागमम् तथा महाधनुषि जिज्ञासां कर्तुं आगमनम् ॥१९॥

सरलार्थ—अहल्या का दर्शन तथा गौतमऋषि से मिलना एवं शिवजी के महान् शक्तिशाली धनुष के विषय में जिज्ञासा हेतु आगमन का निवेदन किया ॥१६॥

श्लोक—"एतत्सर्वं महातेजा: ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—महातेजा:=तेजस्वी। जनकाय=जनकजी को। निवेद्य=निवेदन करके। विरराम=रुक गये, चुप हो गये ॥२०॥

अन्वय—महातेजा: एतत् सर्वं महात्मने जनकाय निवेद्य अथ महामुनि: विश्वामित्र: विरराम ॥२०॥

सरलार्थ—महातेस्वी कौशिक मुनि ने यह सब कुछ महात्मा जनकजी को निवेदन करके वे महामुनि विश्वामित्रजी चुप हो गये ॥२०॥

—०००—

दशम: सर्ग:

रामेण धनुर्भङ्ग:

श्लोक—"ततो भग्ना नृपतय: ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—भग्ना:=भागे या नष्ट हुये। मन्यमाना=मारे जाते हुये। अवीर्या=अपराक्रमी। सामात्या:=मंत्रियों सहित। पापकारिण:=दुष्टात्मा ॥१॥

अन्वय—तत: अवीर्या: वीर्यसंदिग्धा: सामात्या: पापकारिण: भग्ना: नृपतय: हन्यमाना दिश: ययु: ॥१॥

सरलार्थ:—उसके बाद राजा जनकजी ने अपने मन्त्रियों को आज्ञा दी। गन्धमालाओं से अर्चित उस अलौकिक धनुष को ले आइये ॥४॥

श्लोक:—"जनकेन समादिष्टा ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—जनकेन=जनक के द्वारा। समादिष्टाः=आज्ञा दिये गये. पुरतः=आगे। अमितौजसः=महान् तेजस्वी। कृत्वा=करके ॥५॥

अन्वयः—जनकेन समादिष्टाः सचिवाः पुरं प्राविशन्, अमितौजसः तत् धनुः पुरतः कृत्वा निर्जग्मुः ॥५॥

सरलार्थः—जनकजी द्वारा आज्ञा प्राप्त कर मन्त्रीगण नगर में गये और महान् तेजस्वी मन्त्रियों ने उस धनुष को आगे करके बाहर निकले ॥५॥

श्लोकः—"लीलया स धनुर्मध्ये।" इत्यादि ॥६॥

शब्दाय—लीलया=क्रीडा से। धनुर्मध्ये=धनुप के वीच में। जग्राह=पकड़ लिया। मौर्वीं=प्रत्यञ्चा को। आरोपयित्वा=चढ़ा कर। पूरयामास=खींचा ॥६॥

अवन्यः—सः मुनेः वचनात् लीलया तत् धनुर्मध्ये जग्राह मौर्वीं आरोप्य तत् धनुः पूरयामास ॥६॥

सरलार्थः—राम ने विश्वामित्रजी के कहने से खेल में ही उस धनुष को वीच में से पकड़ लिया और प्रत्यञ्चा को चढ़ा कर उस धनुष को खींचा ॥६॥

श्लोकः—"तद्वभञ्ज धनुर्मध्ये।" ॥७॥

शब्दार्थः—बभञ्ज=तोड़ दिया। निर्घातसमनिस्वनः=वड़े वड़े स्वाभिमानी राजा दंग रह गये ॥७॥

अन्वयः—महायशाः नरश्रेष्ठः तत् धनुः मध्ये बभञ्ज तस्य महान् शब्दः आसीत् निर्घातसमनिस्वनः ॥७॥

सरलार्थ—उसके वाद अपराक्रमी, शक्ति में संदह रखने वाले मंत्रियों के साथ पापी राजाओं के पैर उखड़ गये और मारे जाते हुये वे अपने मंत्रियों के साथ चारों दिशाओं में भाग गये ॥१॥

श्लोक—"तदेतन्मुनि शार्दूल ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—हे परम भास्वरम्=अत्यन्त तेजस्वी । धनुः=धनुष । रामलक्ष्मणयोः अपि=राम और लक्ष्मण को भी । दर्शयिष्यामि=दिखलाऊंगा ॥२॥

अन्वय—हे मुनिशार्दूल तदेतत् परम भास्वरं धनुः हे सुव्रत ? रामलक्ष्मणयोः अपि दर्शयिष्यामि ॥२॥

सरलार्थ—हे मुनिराज यह अत्यन्त तेजस्वी धनुष मैं राम और लक्ष्मण को भी दिखलाऊंगा ॥२॥

श्लोक—"यद्यस्य धनुषोरामः ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—कुर्यात्=करें । आरोपणं=प्रत्यञ्चको चढाना । सुतां=पुत्री को । अयोनिजां=भूमि से उत्पन्न । दद्यां=दूंगा ॥३॥

अन्वयः—हे मुने ! यदि रामः अस्य धनुषः आरोपणं कुर्यात् अहं अयोनिजां सुतां सीतां दाशरथये दद्याम् ॥३॥

सरलार्थः—हे मुनिराज ! अगर राम इस धनुष को चढ़ा देवेंगे तो मैं भूमि से उत्पन्न अपनी पुत्री सीता को दशरथपुत्र राम को समर्पण कर दूंगा ॥३॥

श्लोकः—"ततः स राजा जनकः ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थः—सचिवान् = मंत्रियों को । व्यादिदेश=आज्ञा दी । दिव्यं=अलौकिक । गंधमाल्यानुलेपितम्=गंग मालाओं से पूजित ॥४॥

अन्वयः—ततः सः राजा जनकः सचिवान् व्यादिदेश ह, गन्धमाल्यानुलेपितं दिव्यं धनुः आनीयताम् ॥४॥

सरलार्थः—महान् कीर्ति वाले राम ने उस धनुष को बीच में से तोड़ डाला । उसकी महान् आवाज हुई जिससे बड़े-बड़े मनस्वी लोग दंग रह गये ॥७॥

श्लोक:—"भूमिकम्पश्च सुमहान् ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ:—भूमि कम्प:=भूकम्प । दीर्यत:=टूटते हुये । निपेतु:=गिर गये । मोहिता:=बे होश ॥८॥

अन्वय:—दीर्यत: पर्वतस्य इव भूमि कम्प: तेन शब्देन मोहिता: सर्वे नरा: निपेतु: ॥८॥

सरलार्थ:—टूटते हुये पर्वत की तरह महान् भूकम्प होगया । उस शब्द से मोहित सब राजा गिरने लगे ॥८॥

श्लोक:—"वर्जयित्वा मुनिवरं ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ:—वर्जयित्वा=छोड़ कर । विगतसाध्वस: = निर्भय । प्रत्याश्वस्ते=आश्वासन देते हैं ॥९॥

अन्वय:—तौ राघवौ राजानं मुनिवरं वर्जयित्वा विगतसाध्वस: राजा तस्मिन् जने प्रत्याश्वस्ते ॥९॥

सरलार्थ:—उन राम और लक्ष्मण तथा विश्वामित्रजी और जनकजी को छोड़ कर निर्भय राजा जनक सब लोगों को आश्वासन देते हैं ॥९॥

श्लोक:—उवाच प्राञ्जलिर्वाक्यं ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ:—वाक्यज्ञ:=वाक्य को जानने वाले । प्राञ्जलि:=हाथ जोड़ कर । मुनि पुङ्गवं=विश्वामित्रजी को । दृष्टवीर्य:=ज्ञात पराक्रम ॥१०॥

अन्वय:—वाक्यज्ञ: प्रांजलि: मुनिपुङ्गवं वाक्यं उवाच, भगवन् दशरथात्मज: मे राम: दृष्ट वीर्य: ॥१०॥

सरलार्थ:—वाक्यज्ञ राजा जनक हाथ जोड़ कर कहने लगे—हे मुनिराज ! दशरथ के पुत्र राम का पराक्रम देख लिया है ॥१०॥

श्लोक:—"अत्यद्भुतमचिन्त्यं च ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ:—अत्यद्भुतं=अनोखा । अचिन्त्यं=अचिन्तनीय । जनकानां कुले=जनक वंश में । कीर्तिं=यश को । आहरिष्यति=बढ़ावेगी ॥११॥

अन्वयः—मया अत्यद्भुतं अचिन्त्यं इदं अतर्कितम् मे सुता जनकानां कुले कीर्तिं आहरिष्यति ॥११॥

सरलार्थ:—मैंने अत्यन्त अद्भुत और अचिन्तनीय इस धनुष को सोचा था। मेरी लड़की सीता रामचन्द्रजी को पाकर जनक वंश में कीर्ति को बढ़ावेगी ॥११॥

श्लोकः—"सीता भर्त्तारमासाद्य ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ:—भर्तारं आसाद्य=पति को पाकर। वीर्यशुल्का=पराक्रम रूप कीमत वाली। दशरथात्मजं=राम को ॥१२॥

अन्वयः—दशरथात्मजं रामं सीता भर्तारं आसाद्य, हे कौशिक मम वीर्य शुल्का सा प्रतिज्ञा सत्याभूत् ॥१२॥

सरलार्थ:—सीता दशरथ पुत्र राम को प्राप्त करके कीर्ति बढ़ावेगी और पराक्रम मूल्यवाली मेरी प्रतिज्ञा हे कौशक! सत्य हो गई ॥१२॥

श्लोकः—"सीता प्राणैः वहुमता।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ:—प्राणैः वहुमता = प्राणों से भी प्रिय। देया = दी जानी चाहिये। रामाय=राम को। भवतः अनुमते=आपकी अनुमति लेकर ॥१३॥

अन्वय—सीता प्राणैः वहुमता तथा मे सुता रामाय देया। हे ब्रह्मन्! भवतः अनुमते मंत्रिणः शीघ्रं गच्छन्तु ॥१३॥

सरलार्थ:—सीता प्राणों से भी प्यारी है और मेरी पुत्री राम को देने योग्य है। हे मुनिवर! आपकी आज्ञा को लेकर मन्त्रीगण शीघ्र ही अयोध्या जावें ॥१३॥

श्लोकः—मम कौशिक भद्रं ते।"

शब्दार्थ:—ते=तुम्हारा। भद्रं=कल्याण। प्रश्रितैः वाक्यैः=विनय युक्त वचनों से। आनयन्तु=ले आवें ॥१४॥

अन्वयः—हे मम कौशिक! ते भद्रं रथैः त्वरितां अयोध्यां। राजानं प्रश्रितैः वाक्यैः मम पुरं आनयन्तु ॥१४॥

सरलार्थः—हे मेरे कौशिक ! तुम्हारा कल्याण हो। रथों से शीघ्र ही राजा दशरथ को विनय युक्त वचनों से मेरी नगरी में मन्त्रिगण ले आवें ॥१४॥

श्लोकः—"अयोध्यां प्रेषयामास।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थः—कृतशासनान्=मन्त्रियों को। प्रेषयमास=भेजा। यथावृत्तं= समाचार को। समाख्यातुं=कहने के लिए ॥१५॥

अन्वयः—धर्मात्मा कृतशासनान् अयोध्यां नृपं यथावृत्तं समाख्यातुं तथा आनेतुं च प्रेषयामास ॥१५॥

सरलार्थः—धर्मात्मा महाराज जनक ने आज्ञा का पालन करने वाले मन्त्रियों को अयोध्या राजा दशरथ को धनुर्भङ्ग का समाचार कहने के लिये और लाने के वास्ते भेजा ॥१५॥

एकादशः सर्गः

दशरथपुत्रोद्वाहः

श्लोकः—"इक्ष्वाकूणां विदेहानां।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—इक्ष्वाकूणां=इक्ष्वाकुकुल के राजाओं का। विदेहानां= जनक कुल के राजाओं के। सदृशः = समान। रूपसंपदा=रूप सम्पत्ति से। कश्चन=कोई ॥१॥

अन्वयः—इक्ष्वाकूणां विदेहानां एषां कश्चन तुल्यः न अस्ति धर्म-सम्बन्धः सदृशः रूपसम्पदा सदृशः अस्ति ॥१॥

सरलार्थ—इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं तथा जनकवंशीय राजाओं की समानता अन्य कोई वंश नहीं कर सकता है। इन दोनों का धार्मिक संबन्ध भी समान है और रूप और वैभव से भी दोनों वंश समान है ॥१॥

श्लोक—रामलक्ष्मणयो राजन् । इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—रामलक्ष्मणयोः=राम और लक्ष्मण का । सीतयोर्मिलया सह=सीता और उर्मिला के साथ । श्रूयतां=सुनिये । वचनं=कहना ॥२॥

अन्वय—हे राजन् ! रामलक्ष्मणयोः सीतो मिलया सह सबन्धः वक्तव्यः, हे नर श्रेष्ठ ! मम वचनं श्रूयताम् ॥२॥

सरलार्थ—हे राजन् राम और लक्ष्मण का सीता और उर्मिला के साथ विवाह सम्बन्ध होना चाहिये । हे राजन् मेरी बात को सुनिये ॥१॥

श्लोक—भ्राता यवीयान् धर्मज्ञः । इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—यवीयान्=छोटा । धर्मज्ञः=धर्म के ज्ञाता । रूपेण=सौन्दर्य से । अप्रतिमं=असमान । भुवि=मृत्युलोक में ॥३॥

अन्वय—धर्मज्ञः यवीयान् भ्राता एषः राजा कुशध्वजः अस्ति, हे राजन् धर्मात्मनः अस्य भुवि रूपेण अप्रतिमं ॥३॥

सरलार्थ—धर्म के ज्ञाता आपके कनिष्ठ भाई ये राजा कुशध्वज हैं । हे राजन् ! धर्मात्मा इनकी दो पुत्रियां हैं जो संसार में अपने सौन्दर्य से अतुलनीय है ॥३॥

श्लोक—सुताद्वयं नर श्रेष्ठ । इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—सुताद्वयं=दो कन्या । पत्न्यर्थं=पत्नी बनाने के हेतु वरयामहे=वरण करते हैं । धीमतः=बुद्धिशाली ॥४॥

अन्वय—हे नर श्रेष्ठ ! कुमारस्य भरतस्य धीमतः शत्रुघ्नस्य कृते अस्य सुताद्वयं पत्न्यर्थं वरयामहे ॥४॥

सरलार्थ—हे नरोत्तम ! राजकुमार भरत तथा बुद्धिशाली शत्रुघ्न के लिये इनकी दो लड़कियों को पत्नी रूप से स्वीकार करते है ॥४॥

श्लोक—वरये सुते राजन् । इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ—सुते=दो कन्या । तयोरर्थे=उन दोनों के लिये । रूपयौवन–शालिनः=रूप और जवानी से सुशोभित ॥५॥

अन्वय—हे राजन् ! तयो: महात्मनो: अर्थे सुते वरयेम, दशरथस्य इमे पुत्रा: रूपयौवन शालिन: सन्ति ।।५।।

सरलार्थ—हे महाराज जनक ! उन दोनों महात्माओं के लिये इन दो कन्याओं को स्वीकार करते है। दशरथ के ये चारों पुत्र रूप और जवानी से सुशोभित हो रहे हैं ।।५।।

श्लोक—"लोकपालोपमा: सर्वे ।" इत्यादि ।।६।।

शब्दार्थ—सर्वे=सब । लोकपालोपमा:=लोकपालों के तुल्य । देवतुल्य पराक्रम: = देवताओं के समान पराक्रमवाले । सम्बन्धेन=सम्बन्ध से, रिश्तेदारी से । अनुबध्यताम्=बांध लीजिये ।।६।।

अन्वय—सर्वे लोकपालोपमा: देवतुल्य पराक्रमा, हे राजेन्द्र ! उभयो: अपि सम्बन्धेन अनुबध्यताम् ।।६।।

सरलार्थ—दशरथ के चारों राजकुमार रूपवान् व तरुण हैं तथा लोकपालों और देवताओं के समान पराक्रमी है। इन दोनों को भी कन्यादान करके आप इक्ष्वाकुकुल को अपने सम्बन्ध से बांध लीजिये ।।६।।

श्लोक—विश्वामित्रवच: श्रुत्वा ।।७।।

शब्दार्थ—श्रुत्वा=सुनकर । वसिष्ठस्य मते=वसिष्ठजी के द्वारा समर्थन मिलने पर । प्राञ्जलि:=हाथजोड़ कर । मुनिपुङ्गवौ=विश्वामित्र और वसिष्ठ को ।।७।।

अन्वय—तदा वसिष्ठस्य मते विश्वामित्रवच: श्रुत्वा जनक: प्राञ्जलि: मुनिपुङ्गवौ वाक्यम् उवाच ।।७।।

सरलार्थ—तब वसिष्ठजी द्वारा समर्थित विश्वामित्रजी के वचन को सुनकर जनकजी ने विश्वामित्र और वसिष्ठ दोनों से हाथ जोड़ कर कहा ।।८।।

श्लोक—कुलं धन्यमिदं मन्ये । इत्यादि ।।८।।

शब्दार्थ—कुलं=वंश । मन्ये=मानता हूं । कुलसम्बन्धं=कुल का सम्बन्ध । स्वयं=खुद । आज्ञापयाम:=आज्ञा देते हैं ।।८।।

अन्वय—इदं कुलं धन्यं मन्ये यदा स्वयं तौ मुनिपुङ्गवौ येषां सदृशं कुलसम्बन्धं आज्ञापयतः ॥८॥

सरलार्थ—हे मुनिवरों ! मैं अपने कुल को धन्य मानता हूं, जिसे आप लोग स्वयं इक्ष्वाकुवंश के योग्य समझ कर इसके साथ सम्बन्ध जोडने के लिये स्वयं आज्ञा दे रहे है ॥८॥

श्लोक—ततो राजा विदेहानाम् । इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—विदेहानां राजा=जनकजी । वसिष्ठं=वसिष्ठजी को । अब्रवीत्=बोले । कारयस्व=कराइये । सर्वा=सवविधि को । ऋषिभिः सह=मुनियों के साथ ॥९॥

अन्वय—ततः विदेहानां राजा वसिष्ठं इदं अब्रवीत्, हे ऋषे ! धार्मिक ? ऋषिभिः सह सर्वा कारयस्व ॥९॥

सरलार्थ—तदन्तर विदेहराज ने वसिष्ठजी से कहा । हे महर्षे ! आप ऋषियों को साथ लेकर विवाह के सब कार्य कराइये ॥९॥

श्लोक—रामस्य लोकरामस्य । इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—वैवाहिकीं=विवाहसम्बन्धी । क्रियां=कार्यों को । तथेत्युक्त्वा="बहुत अच्छा" कहकर । जनकं=जनकजी को ॥१०॥

अन्वय—लोकरामस्य रामस्य हे प्रभो ! वैवाहिकीं क्रियां कारय स्व, भगवान् वसिष्ठः ऋषिः जनकं तथेत्युक्त्वा ॥१०॥

सरलार्थ—हे भगवान् ! राम आदि सब भाइयों की विवाह सम्बन्धी सब क्रियाओं को शीघ्र करवाओ । वसिष्ठ ऋषिने जनकजी ! बहुत अच्छा कहकर यज्ञ शाला में गमन किया ॥१०॥

श्लोक—विश्वामित्रं पुरस्कृत्य । इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—पुरस्कृत्य=आगे करके । प्रपामध्ये=यज्ञशाला के बीच में । विधिवत्=विधिपूर्वक । वेदिं कृत्वा=वेदि को बनाकर ॥११॥

अन्वय-सः महातपाः विश्वामित्रं धार्मिकं शतानन्दं पुरस्कृत्य प्रपामध्ये विधिवत् वेदिं कृत्वा ॥११॥

सरलार्थ—उस महातपस्वी वसिष्ठजी ने विश्वामित्र और धर्म के ज्ञाता शतानन्दजी को साथ लेकर विवाह मण्डप के मध्य भाग में विधिपूर्वक वेदी बनाई ॥११॥

श्लोक—अलंचकार तां वेदिं। इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—अलंचकार=सजाया। तां वेदिं=उस वेदी को। समन्ततः=चारों ओर से। समानीय=लाकर। सर्वाभरण भूषितां=अनेक प्रकार के गहनों से अलंकृत ॥१२॥

अन्वय—समन्ततः तां वेदिं गन्धपुष्पैः अलंचकार, ततः सर्वाभरण सीतां समानीय ॥१२॥

सरलार्थ—फूल तथा गन्ध के द्वारा उस वेदी को चारों ओर से सुन्दर रूप में सजाया। तदनन्तर राजा जनक ने सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित सीता को वहां लाकर बिठा दिया ॥१२॥

श्लोक—"समक्षमग्नेः संस्थाप्य।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—अग्नेः=अग्नि के। समक्षम्=सामने। राघवाभिमुखे=रामचंद्र के सामने। कौसल्यानन्दवर्धनम्=कौसल्या के आनंद को बढाने वाले राम को ॥१३॥

अन्वय—तदा राघवाभिमुखे अग्नेः समक्षम् सीतां संस्थाप्य राजा जनकः कौशल्यानंदवर्धनम् अब्रवीत् ॥१३॥

सरलार्थ—तदनन्तर राम के सम्मुख अग्नि के पास सीता को बिठलाकर राजा जनकजी, कौशल्या के आनन्द को बढाने वाले राम को कहने लगे ॥१३॥

श्लोक—"इयं सीता मम सुता।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ—तव=तुम्हारी। सहधर्मचरी=सहधर्मिणी। प्रतीच्छ=स्वीकार करो। ते भद्रं=तुम्हारा कल्याण हो। पाणिं=हाथ को। गृह्णीष्व=ग्रहण करो ॥१४॥

अन्वय—इयं मम सुता सीता तव सहधर्मिणी भवतु, ते भद्रं एनां प्रतीच्छ पाणिना पाणिं गृह्णीष्व ॥१४॥

सरलार्थ—हे राम! यह मेरी पुत्री सीता तुम्हारी सहधर्मिणी के रूप में उपस्थित है। तुम्हारा कल्याण हो। तुम इसे स्वीकार करो। इसका हाथ अपने हाथ से ग्रहण करो ॥१४॥

श्लोक—पतिव्रता महाभागा। इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ—महाभागा=सौभाग्यवती। छायेव=छाया की तरह। अनुगता=पीछे चलने वाली। इत्युक्त्वा=इतना कहकर। मन्त्रपूतं=मंत्रों से पवित्र। प्राक्षिपत्=छोडा ॥१५॥

अन्वय—इयं पतिव्रता महाभागा सदा छाया इव अनुगता इति उक्त्वा तदा राजा मंत्रपूतं जलं प्राक्षिपत् ॥१५॥

सरलार्थ—यह मेरी पुत्री सीता परम पतिव्रता, सौभायवती और छाया की भाँति सदा तुम्हारे पीछे चलने वाली होगी। यह कहकर राजा जनक ने राम के हाथ में मन्त्र से पवित्र जल छोड दिया ॥०५॥

श्लोक—साधु साध्विति देवानाम्। इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—साधु साधु=धन्य धन्य। वदतां=कहते हुये। हर्षेण=आनन्द से। अभिपरिप्लुतः=विभोर ॥१६॥

अन्वय—तदा देवानां ऋषीणां "साधु साधु" इति वदतां हर्षेण अभिपरिप्लुतः राजा जनकः अब्रवीत् ॥१६॥

सरलार्थ—उस समय देवता और ऋषियों ने "साधु साधु" कह कर जनक के सौभाग्य की सराहना की। आनन्द से विभोर होकर राजा जनक बोले ॥१६॥

श्लोक—लक्ष्मणागच्छ भद्रं ते । इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ—आगच्छ=आइये । ऊर्मिलां=उर्मिला को । प्रतीच्छ=स्वीकार करो । पाणिं गृहणीष्व=हाथ को पकड़िये । कालस्य पर्यय: मा॰भूत्=विलम्ब न हो ॥१७॥

अन्वय—हे लक्ष्मण ! आगच्छ ते भद्रं मया उद्यतां ऊर्मिलां प्रतीच्छ पाणिं गृहणीष्व कालस्य पर्यय: माभूत् ॥१७॥

सरलार्थ—हे लक्ष्मण ! तुम्हारा कल्याण हो । आइये मैं उर्मिला को तुम्हारी सेवा में दे रहा हूं । इसे स्वीकार करो । इसका पाणिग्रहण करिये । विलम्ब न हो ॥१७॥

श्लोक—तमेवमुक्त्वा जनको । इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—तं=लक्ष्मण को । एवंमुक्त्वा=ऐसा कहकर । भरतं=भरत को । अभ्यभापत=बोले ॥१८॥

अन्वय—तं एवं उक्त्वा जनक: भरतं अभ्यभापत, हे रघुनन्दन ! माण्डव्या: पाणिं पाणिना गृहाण ॥१८॥

सरलार्थ—लक्ष्मण को इस प्रकार कहकर उन्होंने भरत से कहा—हे रघुनन्दन ! आइये; माण्डवी का हाथ अपने हाथ से ग्रहण करो ॥१८॥

श्लोक—शत्रुघ्नं चापि धर्मात्मा । इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—मिथिलेश्वर:=जनक । धर्मात्मा=धर्म के ज्ञाता । श्रुतकीर्ते:=श्रुतकीर्ति का । शत्रुघ्नं=शत्रुघ्न को ॥१९॥

अन्वय—धर्मात्मा मिथिलेश्वर: स्वशत्रुघ्नं च अपि अब्रवीत्, हे महाबाहो ! श्रुतकीर्ते: पाणिं पाणिना गृह्णीष्व ॥१९॥

शरलार्थ—धर्मात्मा जनकजी शत्रुघ्न से बोले—हे महाबाहु ! आप श्रुतकीर्ति का पाणिग्रहण कीजिये ॥१९॥

श्लोक—"सर्वे भवन्त: साम्याश्च ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—सर्वे=सब ! भवन्तः=आप लोग । साम्याः=शान्तस्वभाव वाले । सुचरितव्रताः=शिष्ट आचरण वाले । सन्तु=होवें ॥२०॥

अन्वय—भवन्तः सर्वे सुचरित्रव्रताः हे काकुत्स्थाः ! कालस्य पर्ययः मा भूत् ॥२०॥

सरलार्थ—आप चारों भाई शान्त स्वभाव वाले हों, तुमने उत्तमव्रत का भलि भांति आचरण किया है। हे राजपुत्रो ! आप सब सपत्नीक हो जाओ। विलम्ब मत कीजिये ॥२०॥

श्लोक—जनकस्य वचः श्रुत्वा । इत्यादि ॥२१॥

शब्दार्थ—पाणीन्=हाथों को । पाणिभिः=हाथों से । अस्पृशन्=छुआ । ते चत्वारः=वे चारों भाई ॥२१॥

अन्वय—जनकस्य वचः श्रुत्वा वसिष्ठस्य मते स्थिताः ते चत्वारः चतसृणां पाणीन् पाणिभिः अस्पृशन् ॥२१॥

सरलार्थ—महाराज जनक के वचन को सुनकर वसिष्ठजी से आज्ञा लेकर चारों राजकुमारों ने चारों राजकन्याओं के हाथ अपने अपने हाथ में लिये ॥२१॥

श्लोक—अग्निं प्रदक्षिणं कृत्वा ।इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ–प्रदक्षिणं कृत्वा=प्रदक्षिणा करके । वेदिं= वेदीको । राजानं= दशरथ को । ऋषीन्=ऋषियों को । सहभार्या=अपनी २ पत्नी के साथ रघूद्वहाः=राजकुमार ॥२२॥

अन्वय—सहभार्या रघूद्वहाः अग्निं, वेदिं राजानं ऋषीन् महात्मानः प्रदक्षिणं कृत्वा ॥२२॥

सरलार्थ—इसके बाद वसिष्ठजी की आज्ञा से उन्होंने अपनी २ पत्नी के साथ अग्नि, वेदी, राजादशरथ तथा ऋषिमुनियों की परिक्रमा की ॥२२॥

श्लोक—यथोक्तेन ततश्चक्रुः । इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ—विधिपूर्वकं=वेदोक्तविधि के अनुसार । विवाहं=विवाह । चक्रुः=किया । अन्तरिक्षात्=आकाश से । पुष्पवृष्टिः=फूलों की वर्षा । सुमहास्वरा=सुंदर ॥२३॥

अन्वय—ततः यथोक्तेन विधिपूर्वकं विवाहं चक्रुः, अंतरिक्षात् सुमहास्वरा महती पुष्प वृष्टिः आसीत् ॥२३॥

सरलार्थ—उसके बाद वेदोक्त विधि के अनुसार वैवाहिक कार्य पूर्ण किया । आकाश से आकाशगामी देवताओं ने फूल बरसाये ॥२३॥

श्लोक—ननृतुरप्सरः संघा । इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—ननृतुः=नृत्य किया । अप्सरः संघाः=देवाङ्गनाओं ने । गानं=संगीत को । रघुमुख्यानां=रघुप्रभृति । अदृश्यत=दिखाई दिया ॥२४॥

अन्वयः—अप्सरः संघाः ननृतुः गंधर्वाः गाने जगुः रघुमुख्यानां विवाहे तदद्भुतं अदृश्यत ॥२४॥

सरलार्थः—अप्सराएं नृत्य करने लगी । गंधर्व संगीत गाने लगे । रघुवंशीय राजाओं के विवाह में यह आश्चर्य दिखाई देता था ॥२४॥

श्लोक—उपकार्यां जग्मुः । इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थ—उपकार्यां=जनवास । जग्मुः=गये । अनुययौ=पीछे पीछे गये । पश्यन्=देखते हुये ॥२५॥

अन्वय—अथ सभार्याः रघुनंदनाः ते उपकार्यां जग्मुः सर्षिसंघः सबान्धवः राजा अपि पश्यन् ययौ ॥२५॥

सरलार्थ—उसके बाद वे चारों भाई स्त्रियों सहित जनवासे में चले गये । राजा दशरथ भी ऋषियों और बन्धुबान्धवों के साथ पुत्रों और पुत्र वधुओं को देखते हुये उनके पीछे २ गये ॥२५॥

——०——

प्रथमः सर्गः

अयोध्या काण्डम्

श्लोकः—अथ राज्ञो बभूवैवं।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—चिरजीविनः=दीर्घ आयु वाले। राज्ञः=राजा के। प्रीतिः=प्रेम। जीवति=जिन्दा रहने पर। बभूव=हुआ ॥१॥

अन्वयः—अथ चिरजीविनः वृद्धस्य राज्ञः एवं एषा प्रीतिः बभूव मयि जीवति रामः राजा कथं स्यात् ॥१॥

सरलार्थः—अपने पुत्र राम को अनेकों अनुपम गुणों से युक्त देखकर बूढ़े महाराज दशरथ के मन में यह विचार हुआ कि किस प्रकार मेरे जीते जी रामचन्द्र का राज्याभिषेक हो ॥१॥

श्लोकः—तं समीक्ष्य तदा राजा।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—समुदितैः गुणैः=असंख्य गुणों से। समीक्ष्य=देख कर। सचिवैः सार्धं=मन्त्रियों के साथ। यौवराज्यं=युवराज ॥२॥

अन्वयः—तदा राजा समुदितैः गुणैः युक्तं तं समीक्ष्य सचिवैः सार्धं निश्चित्य यौवराज्यम् अमन्यत ॥२॥

सरलार्थः—तब राजा दशरथ ने अपने पुत्र राम को असंख्य सज्जनोचित गुणों से युक्त देख कर मन्त्रियों से सलाह ली और उन्हें युवराज बनाने का निश्चय कर लिया ॥२॥

श्लोकः—"ततः परिषदं सर्वा।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थः—परिषदं=सभा को। आमन्त्र्य=सम्बोधितकर। हितं=हितकारक। प्रथितं=प्रसिद्ध। उवाच=बोले ॥३॥

अन्वय:—ततः वसुधाधिपः शर्वी परिषदं आगम्य एवं हितं उद्धर्षणं प्रथितं वचः उवाच ॥३॥

सरलार्थ:—उसके बाद राजा दशरथ ने राज सभा में बैठे हुए सब लोगों को सम्बोधित करके मधुर स्वर से सब के आनन्द को बढ़ाने वाली हितकारक बात कही ॥३॥

श्लोक:—इदं शरीरं कृत्स्नस्य ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ:—कृत्स्नस्य लोकस्य=समस्त संसार का। हितं चरता=भलाई करते हुए। पाण्डुरस्य=सफेद। आतपत्रस्य=छत्र के ॥४॥

अन्वय:—कृत्स्नस्य लोकस्य हितं चरता मया पाण्डुरस्य आतपत्रस्य छायायां इद शरीरं जरितम् ॥४॥

सरलार्थ:—समस्त संसार का कल्याण करते हुये मैने श्वेत छत्र की छाया में इस शरीर को जीर्ण कर दिया ॥४॥

श्लोक:—प्राप्य वर्ष सहस्राणि ।" ॥५॥

शब्दार्थ:—प्राप्य=प्राप्त कर। सहस्राणि=हजारों। आयूंषि=उम्र। जीवत:=जीते हुये। विश्रान्ति=आराम को। अभिरोचये=चाहता हूं ॥५॥

अन्वय:—वर्ष सहस्राणि बहूनि आयूंषि जीवतः जीर्णस्य अस्य शरीरस्य विश्रान्ति अभिरोचये ॥५॥

सरलार्थ:—हजारों वर्ष के आयुष्य को पाकर जिन्दा रहते हुये वृद्ध इस शरीर के लिये अब मैं आराम चाहता हूं ॥५॥

श्लोक:—राजप्रभावजुष्टां च ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ:—राजप्रभावजुष्टां=राजा के प्रभाव से युक्त। दुर्वहां=दुःख से वहन करने योग्य। गुर्वीं=भारी। धर्मधुरं=धर्म के भार को। परिश्रान्त:=थका हुआ ॥६॥

अन्वय:—राजप्रभावजुष्टां अजितेन्द्रियैः दुर्वहां लोकस्य गुर्वीं धर्मधुरं वहन् परिश्रान्तः अस्मि ॥६॥

सरलार्थ:—राजाओं के प्रभाव से सम्पन्न अजितेन्द्रिय लोगों से दुःख से वहन करने योग्य संसार के बड़े धर्म रूप जुए को वहन करते हुए मैं थक गया हूं ॥६॥

श्लोक:—सोऽहं विश्राममिच्छामि ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ:—विश्रामं=आराम को। प्रजाहिते=जनता के कल्याण के लिए। सन्निकृष्टान् = समीप में रहे हुये। अनुमान्य = अनुमति प्राप्त कर ॥७॥

अन्वय:—स: अहं पुत्रं प्रजाहिते कृत्वा सन्निकृष्टान् इमान् सर्वान् द्विजर्षभान् अनुमान्य विश्रामं इच्छामि ॥७॥

सरलार्थ:—वह मैं दशरथ पुत्र को प्रजा के हित के लिए अभिषिक्त कर पास में बैठे हुए इन समस्त मुनियों की अनुमति लेकर विश्राम चाहता हूं ॥७॥

श्लोक:—अनुजातो हि मां सर्वैः ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ:—अनुजात:=पीछे से उत्पन्न हुआ है। आत्मज:=पुत्र। पुरन्दरसम:=इन्द्र के समान। वीर्ये=पराक्रम में। परपुरञ्जय:=शत्रुओं के नगर को जीतने वाला।,८॥

अन्वय:—सर्वैः गुणैः श्रेष्ठः मम आत्मजः मां अनुजातः, रामः वीर्ये पुरन्दरसमः परपुरञ्जयः ॥८॥

सरलार्थ:—समस्त गुणों से श्रेष्ठ मेरा पुत्र मुझ से अनन्तर उत्पन्न हुआ है। वह राम पराक्रम में इन्द्र के समान है अन्य शत्रुओं के नगरियों पर विजय प्राप्त करने वाला है ॥८॥

श्लोक:—तं चन्द्रमिव पुष्येण ।"इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ:—पुष्येण=पुष्य नक्षत्र से युक्त। धर्मभृतां=धर्म जानने वालों में। यौवराज्ये=युवराज पद पर। नियोक्ता=नियुक्त करने वाला ॥९॥

अन्वय:—प्रीत: अहम् पुष्येण युक्तं चन्द्रम् इव धर्मभृतां वरं पुरुष-पुङ्गवं यौवराज्ये नियोक्ता अस्मि ॥९॥

सरलार्थ:—प्रसन्न मैं दशरथ पुष्य नक्षत्र से युक्त चन्द्रमा की तरह धर्म जानने वालों में श्रेष्ठ पुरुषोत्तम राम को युवराज पद पर नियुक्त करना चाहता हूं ॥९॥

श्लोक:—अनुरूप: स वै नाथ: ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ:—अनुरूप:=योग्य । लक्ष्मीवान्=ऐश्वर्यशाली । लक्ष्मणा-ग्रज:=राम । नाथवत्तरम्=सनाथ ॥१०॥

अन्वय:—स: नाथ: लक्ष्मणाग्रज: लक्ष्मीवान् अनुरूप: येन नाथेन त्रैलोक्यम् अपि नाथवत्तरं स्यात् ॥१०॥

सरलार्थ:—वह प्रजा के स्वामी और लक्ष्मण के बड़े भाई ऐश्वर्य-शाली और योग्य है। जिस स्वामी से तीनों लोक सनाथ हो जावेंगे ॥१०॥

श्लोक:—यदिदं मेऽनुरूपार्थं ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ:—अनुरूपार्थं=अनुकूल । साधु = अच्छी । सुमन्त्रितम् = सोची गई बात । अनुमन्यन्तां=अनुमति दीजिये । करवाणि=करूं ॥११॥

अन्वय:—यत् इदं मे अनुरूपार्थं मया साधु सुमन्त्रितम् अहं कथं वा करवाणि ? भवन्त: मे अनुमन्यन्ताम् ॥११॥

सरलार्थ:—यदि मेरा यह प्रस्ताव आप लोगों को अनुकूल जान पड़े तथा यदि मैंने यह बात अच्छी सोची हो तो आप इसके लिये मुझे सहर्ष अनुमति दीजिये कि मैं क्या करूं ? ॥११॥

श्लोक:—"इति ब्रुवन्तं मुदिता: ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ:—इति ब्रुवन्तं=इस प्रकार बोलते हुये। नृपानृपम्=राजा और मन्त्रियों नें। प्रत्यनन्दन्=अभिनन्दन किया। वृष्टिमन्तं=बरसते वाले। महामेघं=बादल को। नर्दन्त:=केकारव करते हुये। बर्हिण:=मोर ॥१२॥

अन्वयः—इति ब्रुवन्तं मुदिताः नृपानृपम् प्रत्यनन्दन् वृष्टिमन्तं महामेघं नर्दन्तः बर्हिणः इव ॥१२॥

सरलार्थः—दशरथ के ऐसा कहने पर वहां उपस्थित राजाओं और मन्त्रियों ने उनकी बात का अभिनन्द किया। बरसने वाले मेघ की आवाज को सुनकर केकाध्वनि करते हुए मयूरों की तरह जनसमुदाय की हर्षध्वनि सुनाई पड़ी ॥१२॥

श्लोकः—"ते तमूचुर्महात्मानः।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थः—ऊचुः=बोले। पौरजानपदैः सह=नगर निवासियों के साथ। ते सुतस्य=तुम्हारे पुत्र के। कल्याण गुणाः=अच्छे गुण ॥१३॥

अन्वयः—ते महात्मानः पौरजानपदैः सह तं ऊचुः हे नृप ते सुतस्य बहवः कल्याणगुणाः सन्ति ॥१३॥

सरलार्थः—वे सब मुनि लोग नागरिक लोगों के साथ दशरथ से कहने लगे—हे राजा! तुम्हारे पुत्र में अच्छे-भलाई के गुण विद्यमान है ॥१३॥

श्लोकः—दिव्यैर्गुणैः शक्रसमः।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थः—दिव्यैर्गुणैः=उत्तम गुणों से। शक्रसमः=इन्द्र के समान। अतिरिक्त=विशिष्ट ॥१४॥

अन्वयः—सत्य पराक्रमः रामः दिव्यैः गुणैः शक्रसमः हे विशांपते सर्वेभ्यः अपि इक्ष्वाकुभ्यः अतिरिक्तः अस्ति ॥१४॥

सरलार्थः—समस्त अलौकिक गुणों से राम इन्द्र के समान है और सब इक्ष्वाकुवंश के राजाओं से वे विशिष्ट व्यक्ति हैं ॥१४॥

श्लोकः—"धर्मज्ञः सत्यसंधश्च।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थः—धर्मज्ञः=धर्म के ज्ञाता। सत्यसंधः=सत्य प्रतिज्ञा वाले। अनसूयकः=ईर्ष्या रहित। श्लक्ष्णः=स्नेही। कृतज्ञः=उपकार को जानने वाला। क्षान्तः=सहनशील ॥१५॥

अन्वयः—धर्मज्ञः सत्यसन्धः शीलवान् अनसूयकः क्षान्तः सान्त्वयिता श्लक्ष्णः कृतज्ञः विजितेन्द्रियः रामः अस्ति ॥१५॥

सरलार्थः—राम धर्म के ज्ञाता, सत्य प्रतिज्ञा वाले, शीलवान्, इर्ष्या से रहित, सहनशील, स्नेही, उपकार को जानने वाले और जितेन्द्रिय है ॥१५॥

श्लोकः—"देवासुर मनुष्याणां।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थः—देवासुरमनुष्याणां = देवता, राक्षस और मनुष्यों के। सर्वास्त्रेषु=सब प्रकार के अस्त्रों में। विशारदः=चतुर। सम्यग्=अच्छी तरह से। विद्याव्रतस्नातः=विद्या रूप व्रत में दीक्षित। साङ्गवेदवित्= साङ्ग वेदों के ज्ञाता ॥१६॥

अन्वयः—देवासुर मनुष्याणां सर्वास्त्रेषु विशारदः, सम्यग् विद्याव्रत-स्नातः यथावत् साङ्गवेदवित् ॥१६॥

सरलार्थः—राम देवता दैत्य और मनुष्यों के सभी प्रकार के अस्त्र चलाने में कुशल हैं। अच्छी तरह से विद्या रूप व्रत में दीक्षित साङ्गवेदों के ज्ञाता हैं ॥१६॥

श्लोकः—"राममिन्दीवरश्यामं।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थः—रामं = राम को। इन्दीवरश्यामं = कमाल के समान श्याम। सर्वशत्रुनिवर्हणम्=समस्त शत्रुओं का दमन करने वाले। आत्मजं= पुत्र को। यौवराज्यस्थं=युवराज पद पर आसीन ॥१७॥

अन्वयः—इन्दीवरश्यामं सर्व शत्रु निवर्हणम् राजोत्तम आत्मजं तव रामं यौवराज्यस्थं पश्याम ॥१७॥

सरलार्थः—कमल तुल्य श्याम समस्त शत्रुओं का दमन करने वाले राजाओं में श्रेष्ठ तुम्हारे पुत्र राम को युवराज पद पर आसीन देखना चाहते हैं ॥१७॥

श्लोकः—"अहोऽस्मि परमप्रीतः।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ:—परमप्रीत:=परम प्रसन्न । प्रभाव:=तेज । अतुल:= अतुलनीय । इच्छथ=चाहते हो ॥१८॥

अन्वय:—अहो परमप्रीत: अस्मि मम प्रभाव: अतुल: यत् मे ज्येष्ठं प्रिय पुत्रं यौवराज्यस्थं इच्छथ ॥१८॥

सरलार्थ:—मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं । मेरा प्रभाव अतुलनीय है । जो कि कि मेरे ज्येष्ठ पुत्र को तुम सब युवराज पद पर आसीन करना चाहते हो ॥१८॥

श्लोक:—"चैत्र: श्रीमानयं मास: ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ:—पुण्य:=पवित्र । पुष्पितकानन:=अरण्यों को विकसित करने वाला । उपकल्पताम्=तैयार करो ॥१९॥

अन्वय:—अयं श्रीमान् पुण्य: चैत्र: मास: पुष्पितकानन: वर्तते, रामस्य यौवराज्याय सर्वं उपकल्पताम् ॥१९॥

सरलार्थ:—यह श्रीमान् पवित्र चैत का महीना जंगलों को पुष्पित करने वाला है राम के युवराज पद पर अभिषेक के लिए सब वस्तुएं तैयार करो ॥१९॥

——००——

द्वितीय सर्ग:

पितृभक्तराम–कैकेयीसंवाद:

श्लोक:—"स दीन इव शोकार्तो ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ:—दीन इव=गरीब की तरह । शोकार्त:=चिंता से पीडित । विषण्णवदनद्युति:=म्लान मुख की कान्ति वाले ॥१॥

अन्वय:—स दीन: इव शोकार्त: विषण्णवदनद्युति: राम: कैकेयीं अभिवाद्य वचनं अब्रवीत् ॥१॥

सरलार्थः—वह दीन की भांति चिता से पीड़ित तथा म्लान मुख कांति वाले राम कैकेयी को अभिवादन करके कहने लगे ॥१॥

श्लोकः—"कच्चिन्मया नापराद्धम् ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—अज्ञानात्=अज्ञान से । न अपराद्धम्=अपराध नहीं किया है । कुपितः=क्रोधित । आचक्ष्व=कहिये । प्रसादय=खुश करो ॥२॥

अन्वयः—पिता कुपितः तत् मम आचक्ष्व त्वं एव एनं प्रसादय ॥२॥

सरलार्थः—मां ! मुझ से अनजान में कोई अपराध तो नहीं हो गया, जिससे पिताजी मुझ पर नाराज हो गये हैं ? वह मुझे कहो । तुम इनको प्रसन्न करो ॥२॥

श्लोकः—"शारीरो मानसी व्वापि ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थः—शारीरः=शारीरिक । मानसः=मानसिक । सन्तापः=दुःख । न बाधते=नहीं सताता है । दुर्लभं=दुष्प्राप्य ॥३॥

अन्वयः—शारीरः मानसः वा अपि सन्तापः अभितापः वा कच्चिद् एवं न बाधते, हि सदा सुखं दुर्लभं भवति ॥३॥

सरलार्थः—कोई शारीरिक व्याधि अथवा मानसिक चिंता तो इन्हें पीड़ित नहीं कर रही है ? क्यों कि सर्वदा सुख दुर्लभ होता है ॥३॥

श्लोकः—कच्चिन्न किञ्चिद्भरते ।' इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थः—भरते=भरत के विषय में । महासत्त्वे=महान् बलशाली । शत्रुघ्ने=शत्रुघ्न के विषय में । मातृणां=माताओं के । आशु=शीघ्र ॥४॥

अन्वयः—कच्चिद् किञ्चिद् भरते कुमारे महासक्त्वे प्रियदर्शने शत्रुघ्ने मातृणां वा मम अशुभ निवेदय ॥४॥

सरलार्थः—प्रियदर्शन कुमार भरत, महाबली शत्रुघ्न अथवा माताओं का तो कोई अनिष्ट नहीं हुआ है ? मुझे शीघ्र बतलाओ ॥४॥

श्लोकः—"अतोषयन्महाराजम् ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ:—महाराजं=दशरथ को। अतोषयन्=असंतुष्ट करता हुआ। पितु:=पिताजी की। वच:=आज्ञा। अकुर्वन्=नहीं करता हुआ। नृपे कुपिते=राजा के नाराज होने पर। मुहूर्तम्=क्षण भर ॥५॥

अन्वय:—महाराजं अतोषयन् पितु: वच: अकुर्वन् वा नृपे कुपिते सति मुहूर्तम् अपि जीवितुं न इच्छेयम् ॥५॥

सरलार्थ:—महाराज को असन्तुष्ट करके अथवा इनकी आज्ञा न मानकर इन्हें कुपित कर देने पर मैं एक मुहूर्त भी जीवित रहना नहीं चाहता ॥५॥

श्लोक:—"एवमुक्ता तु कैकेयी।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ:—एवमुक्ता=इस प्रकार कही गई। सुनिर्लज्जा=बे शर्म। धृष्टम्=ढिठाई। आत्महितं=अपने स्वार्थ की बात ॥६॥

अन्वय:—महात्मना राघवेण एवं उक्ता कैकेयी सुनिर्लज्जा सती धृष्टं आत्महितं इदं वच: उवाच ॥६॥

सरलार्थ:—महात्मा राम के द्वारा इस प्रकार कही गई कैकेयी अत्यन्त निर्लज्ज होती हुई ढिटाईपूर्ण एवं अपने मतलब की बात कहने लगी ॥६॥

श्लोक:—"न राजा कुपितो राम।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ:—व्यसनं=संकट। मनोगतं=मन की बात को। त्वद्भयात्=तुम्हारे डर से। नानुभाषते=नहीं कहते हैं ॥७॥

अन्वय:—हे राम! राजा कुपित: न अस्य किञ्चन व्यसनं न अस्य किञ्चिन् मनोगतं त्वद्भयात् न अनुभाषते ॥७॥

सरलार्थ:—हे राम! राजा दशरथ न तो गुस्से हुये हैं और न कोई इनको कष्ट ही है। ये अपने मन की बात को तुम्हारे डर से नहीं कहते हैं ॥७॥

श्लोकः—"प्रियं त्वामप्रियं वक्तुं।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—त्वां=तुम को। अप्रियं=कटु। वक्तुं=कहने के लिये। श्रुतं=प्रतिज्ञा की है। कार्यं=करना चाहिये ॥८॥

अन्वयः—प्रियं त्वां अप्रियं वक्तुं अस्य वाणी न प्रवर्तते, यत् अनेन मम श्रुतं तत् त्वया अवश्यं कार्यम् ॥८॥

सरलार्थः—प्राणों से भी प्यारे तुमको कटु बात सुनाने के लिए राजा दशरथ की जबान नहीं निकलती है। इन्होंने मेरे से जो प्रतिज्ञा की है उसका तुम्हे अवश्य पालन करना चाहिये ॥८॥

श्लोकः—"एष मह्यं वरं दत्वा।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थः—एषः=दशरथ। मह्यं=मुझ को। वरं=वरदान। दत्त्वा=देकर। अभिपूज्य=सत्कृत कर। प्राकृतः=साधारण मनुष्य। पश्चात्तप्यते=बाद में पश्चाताप करते हैं ॥९॥

अन्वयः—पुरा मां अभिपूज्य एषः मह्यं वरं दत्वा यथा अन्यः प्राकृतः पश्चात् सः राजा तप्यते ॥९॥

सरलार्थः—पहले मेरा सत्कार करके इस राजा दशरथ ने मुझे वरदान दिया था। जिस प्रकार साधारण मनुष्य दुःखी होता है उसी प्रकार वह राजा पीछे से संताप करता है ॥९॥

श्लोक—अतिसृज्य ददानीति। इत्यायि ॥१०॥

शब्दार्थ—अतिसृज्य=देकर। विशांपतिः=राजा निरर्थं=फिजूल। गतजले=जल के चले जाने पर। सेतुं=पुलको ॥१०॥

अन्वय—ददानि इति विशांपतिः मम वरं अतिसृज्य सः गतजले निरर्थं सेतुं बन्धितुं इच्छति ॥१०॥

सरलार्थ—देता हूं ऐसा कहकर राजा दशरथ मुझे वरदान देकर वह फिजूल ही पानी के चले जाने पर पुल बांधना चाहता है ॥१०॥

श्लोक—धर्ममूलमिदं राम । इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—धर्ममूलं=धर्म की की जड़ । सतां=सज्जों का त्वत्कृते=तुम्हारे लिये । न त्यजेत्=न छोडे । कुपित:=क्रोधित किया है ॥११॥

अन्वय—हे राम ! मया त्वत्कृते कुपित: विदितां सतां तत् सत्यं राजा न त्यजेत् इदं धर्मं मूलम् अस्ति ॥११॥

सरलार्थ—हे राम ! मैंने ही राजा दशरथ को तुम्हारे लिये क्रोधित किया है । प्रसिद्ध सज्जन मनुष्यों द्वारा आचरण किये हुये उस सत्य को राजा दशरथ न छोडे । यह धर्म का मूल मन्त्र है ॥११॥

श्लोक —एतत्तु वचनं श्रुत्वा । इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—एतत्=यह । केकैय्या=कैकयी के द्वारा । समुदाहृतम्=कहा गया । व्यथित:=दु:खित । नृपसन्निधौ=राजा के पास में ॥१२॥

अन्वय—कैकेय्या समुदाहृतम् एतत् वचन श्रुत्वा व्यथित: राम: नृपसन्निधौ तां देवीं उवाच ॥१२॥

सरलार्थ—कैकेयी के द्वारा कहे गये इस वचन को सुनकर दु:खी रामने राजा दशरथ के पास ही उस कैकेयी को कहा ॥१२॥

राम उवाच:—

श्लोक—अहोधिङ्नार्हसे देवि । इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—अहोधिक्=धिक्कार है । राज्ञ:=राजा के वचनात्=वचन से । पावके=अग्नि में । नार्हसे=योग्य नहीं है ॥१३॥

अन्वय—हे देवि ! मां ईदृशं वच: वक्तुं न अर्हसे हि अहं राज्ञ: वचनात् पावके अपि पतेयम् ॥१३॥

सरलार्थ—हे माता कैकेयी ! मुझे ऐसा वचन तुम्हें कहना उचित नहीं है । मैं तो राजा दशरथ की आज्ञा से आग में भी गिरने को तैयार हूं ॥१३॥

श्लोक—तद् ब्रूहि वचनं देवि । इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ—ब्रूहि=कहिये । राज्ञः=राजा का । अभिकांक्षितम्=इच्छित । करिष्ये=करूंगा । प्रतिजाने=प्रतिज्ञा करता हूं । द्विः=दोबार । नाभिभापते=नहीं बोलता है ॥१४॥

अन्वयः—हे देवि राज्ञः यत् अभिकांक्षितं तत् ब्रूहि करिष्ये प्रतिजाने रामः द्विः न अभिभापते ॥१४॥

सरलार्थ—हे देवी ! महाराज दशरथ की जो अभिलषित बात हो उसे कहिये । मैं अवश्य करूंगा । प्रतिज्ञा करता हूं । राम दो बार नहीं बोलता है ॥१४॥

श्लोक—तमार्जवसमायुक्तम् । इत्यानि ॥१५॥

शब्दार्थ—आर्जव समायुक्तम्=सरलता से पूर्ण । अनार्या=दुर्जनमति भृशदारुणम्=अत्यन्त कठोर । उवाच=कहा ॥१५॥

अन्वय—अनार्या कैकेयी आर्जवसमायुक्तं सत्यवादिनं तं रामं भृशदारुणम् वचनं उवाच ॥१५॥

सरलार्थ—दुर्जनमति कैकेयी ने सरलता से परिपूर्ण सच बोलने वाले उस राम को अत्यन्त कठोर वचन कहा ॥१५॥

कैकेयी उवाच—

श्लोक—पुरा देवासुरे युद्धे । इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—पुरा=प्राचीन समय में । देवासुरे युद्धे=देवता और दैत्यों के युद्ध में । वरौ=दो वरदान । दत्तौ=दिये ॥१६॥

अन्वय—हे राघव ! पुरा देवासुरे युद्धे सशल्येन महारणे रक्षितेन ते पित्रा मम वरौ दत्तौ ॥१६॥

सरलार्थ—हे राम ! प्राचीन समय में देवता और दैत्यों के युद्ध में मेरे द्वारा रक्षित तुम्हारे पिताजी ने मुझे दो वरदान दिये थे ॥१६॥

श्लोक—तत्र मे याचितो राजा । इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ—तत्र उस युद्ध में। याचितः=मांगा। अभिषेचनम्=राज्याभिषेक। दण्डकारण्ये=दण्डक वन में। अद्यैव=आज ही ॥१७॥

अन्वय—तत्र राजा याचितः मे भरतस्य अभिषेचनम्, हे राघव! तव अद्य एव दण्डकारण्ये गमनं ॥१७॥

सरलार्थ—उस युद्ध में मैंने राजा से याचना की थी, कि मेरे भरत का राज्यतिलक करना तथा हे राम! तुम्हारा आज ही दण्डकवन में जाना ॥१७॥

श्लोक—यदि सत्यप्रतिज्ञं त्वं। इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—सत्यप्रतिज्ञं=सत्यप्रतिज्ञा वाले को। आत्मानं=खुद को। शृणु=सुनिये। कर्तुमिच्छसि=करना चाहते हो ॥१८॥

अन्वय—यदि त्वं पितरं आत्मानं च सत्यप्रतिज्ञं कर्तुम् इच्छसि हे नर श्रेष्ठ! मम इदं वाक्यं शृणु ॥१८॥

सरलार्थ—यदि तुम अपने पिता और खुद को सत्यप्रतिज्ञ बनाना चाहते हो। हे नर श्रेष्ठ! मेरे इस वचन को सुनिये ॥१८॥

श्लोक—सन्निदेशे पितुस्तिष्ठ। इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—सन्निदेशे=आज्ञा में। पितुः=पिता की। प्रतिश्रुतम्=प्रतिज्ञा की है। प्रवेष्टव्यं=प्रवेश करना चाहिये। नववर्षाणि पञ्च च=चौदह वर्ष तक ॥१९॥

अन्वय—पितुः सन्निदेशे तिष्ठ यथा अनेन प्रतिश्रुतम् नव वर्षाणि पञ्च च त्वया अरण्यं प्रवेष्टव्यम् ॥१९॥

सरलार्थ—हे राम! तुम्हें पिताजी की आज्ञा का पालन करना चाहिये जैसी कि उन्होंने प्रतिज्ञा की है। तुम्हें चौदह वर्ष पर्यन्त वनवास करना होगा ॥१९॥

श्लोकः—अभिषेकमिदं त्यक्त्वा। इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—अभिषेकं=राज्याभिषेक को त्यक्त्वा=छोड कर । जटाचीर धरः = जटा और वल्कल वस्त्र धारण करने वाले । भव=बनो । प्रशास्तु= शासन करें । वसुधां=पृथ्वी को ॥२०॥

अन्वय—हे राम ! त्वं इदं अभिषेकं त्यक्त्वा जटाचीरधरः भव भरतः कोसलपतेः इमां वसुधां प्रशास्तु ॥२०॥

सरलार्थ—हे राम ! तुम इस राज्याभिषेक को छोडकर जटा और वल्कल वस्त्रों को धारण करो । भरत राजादशरथ की इस भूमि पर शासन करें ॥२०॥

श्लोक—एतेन त्वां नरेन्द्रोऽयम् । इत्यादि ॥२१॥

शब्दार्थ—एतेन=इस कारण से कारुण्येन समाप्लुतः=दुःखाभिभूत । शोकैः = चिन्ताओं से । संक्लिष्टवदनः=म्लानमुख । निरीक्षितुं=देखने के लिये ॥२१॥

अन्वय—अयं नरेन्द्रः एतेन कारुण्येन समाप्लुतः शोकैः संक्लिष्टवदनः त्वां निरीक्षितुं न शक्नोति ॥२१॥

सरलार्थ—यह राजा दशरथ इस कारण से ही दुःखाभि भूत-होकर चिन्ताओं से मलिन मुख वाला तुमको देख नहीं सकता है ॥२१॥

श्लोक—"एतत्कुरु नरेन्द्रस्य ।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ—नरेन्द्रस्य = दशरथ का । वचनं=आज्ञा । कुरु=कीजिये । तारयस्व=उद्धार करो ॥२२॥

अन्वय—हे रघुनन्दन ! एतत् नरेन्द्रस्य वचनं कुरु हे राम ! महता सत्येन नरेन्द्रं तारयस्व ॥२२॥

सरलार्थः—हे रघुनन्दन ! तुम्हें राजा दशरथ की आज्ञा का पालन करना चाहिये । हे राम ! इस महान् सत्य का पालन करके राजा का उद्धार कीजिये ॥२२॥

श्लोक—"तदप्रियममित्रघ्न ।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ—अप्रियम्=कर्णकटु । अमित्रघ्नः=मित्रों पर उपकार करने वाले । मरणोपमम्=मृत्यु तुल्य । श्रुत्वा=सुनकर । नविव्यथे=दुःखी नहीं हुए ॥२३॥

अन्वय—अमित्रघ्नः रामः तत् मरणोपमम् अप्रियं वचनं श्रुत्वा न विव्यथे, कैकेयी इदम् अब्रवीत् ॥२३॥

सरलार्थ—शत्रुओं के नाशक राम मृत्यु तुल्य उन अप्रिय वचनों को सुनकर दुःखी नहीं हुए और उन्होंने कैकेयी से कहा ॥२३॥

राम उवाच—

श्लोक—"एवमस्तु गमिष्यामि । इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—इतः=अयोध्या से । वनं वस्तुं=वनमें रहने के लिये । जटा चीरधरः=जटा और वल्कलवस्त्रों को धारण करने वाले । अनुपालयन्=पालन करते हुये ॥२४॥

अन्वय—एवम् अस्तु जटाचीर धरः अह राज्ञः प्रतिज्ञां अनुपालयन् इतः वनं वस्तुं गमिष्यामि ॥२४॥

सरलार्थ—ऐसा ही हो जटा और वल्कल वस्त्रों को धारण करने वाला मैं राजा की प्रतिज्ञा का पालन करता हुआ अयोध्या से वन में रहने के लिये जाऊंगा ॥२४॥

श्लोक—"इदं तु ज्ञातुमिच्छामि" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थ—ज्ञातुं=जानने को । किमर्थं=किसलिये । नाभिनन्दति=अभिनन्दन नहीं करते हैं । अरिंदमः=शत्रुओं का दमन करने वाला ॥२५॥

अन्वय—इदं तु ज्ञातुं इच्छामि दुर्धर्षः महीपतिः मां किमर्थं न अभिनन्दति । यथापूर्वं अरिन्दमः अभिनन्दति स्म ॥२५॥

सरलार्थ—हे देवि ! ऐसा ही होगा परन्तु मैं यह जानना चाहता हूं कि महान् पराक्रमी महाराज दशरथ आज मुझ से पहले की तरह क्यों नहीं बोलते हैं ॥२५॥

श्लोक—मन्युर्न च त्वया कार्यो । इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थः—मन्युः=क्रोध । न कार्यः=नहीं करना चाहिये । ब्रूमि=कहता हूं । यास्यामि=जाऊंगा । चीर जटाधरः=चीर और जटाधारी ॥२६॥

अन्वयः--हे देवि ! तवाग्रतः ब्रूमि त्वया मन्युः न कार्यः चर जीटा धरः वनं यास्यामि सुप्रीतः भव ॥२६॥

सरलार्थ—हे देवि ! तुम्हारे सामने ऐसी बात पूछ रहा हूं, इसके लिये क्रोध न करना। निश्चय ही चीर और जटा को धारण करके मैं वनको चला जाऊंगा। तुम प्रसन्न रहो ॥२६॥

श्लोक—"हितेन गुरुणा पित्रा।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थ—नियुज्यमानः=नियुक्त होकर। विस्रब्ध=विश्वास। हितेन=हितैषी। किं न कुर्या=क्या नहीं कर सकूं ॥२७॥

अन्वय—हितेन गुरुणा पित्रा कृतज्ञेन नृपेण नियुज्यमानः विस्रब्धः किं प्रियं न कुर्याम् ॥२७॥

सरलार्थ—राजा मेरे हितैषी, गुरु पिता और कृतज्ञ हैं; उनकी आज्ञा होने पर उनका कौनसा ऐसा प्रिय कार्य हैं, जिसे मैं निःशंक होकर न कर सकूं ॥२७॥

श्लोक—अलीकं मानसं त्वेकं। इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थ—अलीक=अप्रिय, दुःखदायी बात। मानसं=मनको। दहते=जलाता है। भरतस्य=भरत का। अभिषेचनम्=राज्याभिषेक ॥२८॥

अन्वयः—एकं अलीकं मानसं मम हृदयं दहते यत् स्वयं राजा भरतस्य अभिषेचनम् न आह ॥२८॥

सरलार्थः—मेरे मन और दिल को एक ही बात की चिन्ता अधिक जला रही है कि स्वयं महाराज ने मुझ से भरत के राज्याभिषेक की बात नहीं कही है ॥२८॥

श्लोक—"तथाश्वासय ह्रीमन्तं।" इत्यादि ॥२९॥

शब्दार्थ—आश्वासय=विश्वास दिलाओ। ह्रीमन्तं=लज्जित राजा को। वसुधासक्त नयनः=पृथ्वी को तरफ आंख वाले। अश्रूणि=आंसू। मन्दम्=धीरे-धीरे। मुञ्चति=छोड़ते हैं ॥२९॥

अन्वय—हीमन्तं तथा आश्वासय यत् वसुधासक्तनयनः महीपतिः किन्तु इदं मंदम् अश्रूणि मुञ्चति ॥२६॥

सरलार्थ—तुम मेरी ओर से विश्वास दिलाकर महाराज को आश्वासन दो। ये लज्जित होकर पृथ्वी की ओर दृष्टि किये धीरे-धीरे आंसू क्यों बहा रहे हैं ? ॥२६॥

श्लोक—"गच्छन्तु चैवानयितुं ।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ—आनयितुं=लाने के लिये। दूताः = सन्देश वाहक। शीघ्रजवैः=तेज चाल वाले। हयैः=घोड़ों से। नृपशासनात्=राजा की आज्ञा से ॥३०॥

अन्वय—नृपशासनात् अद्य एव मातुलकुलात् भरतं आनयितुं दूताः शीघ्रजवैः हयैः गच्छन्तु ॥३०॥

सरलार्थः—आज ही महाराज दशरथ की आज्ञा से दूत शीघ्रगामी घोड़ों पर सवार हो भरतजी को मामा के यहां से बुलाने के लिये चले जायं ॥३०॥

श्लोकः—"दण्डकारण्यमेषोऽहम् ।" इत्यादि ॥३१॥

शब्दार्थः—दण्डकारण्यं=दण्डक वन को। सत्वरः=शीघ्र। अविचार्य=बिना सोचे। समाः=वर्ष। वस्तुं=रहने के लिये ॥३१॥

अन्वयः—पितुः वाक्यं अविचार्य एषः अहं सत्वरः चतुर्दश समाः वस्तुं दण्डकारण्यं गच्छामि एव ॥३१॥

सरलार्थः—पिताजी की आज्ञा पर बिना विचार किये यह मैं शीघ्र ही चौदह वर्ष पर्यन्त रहने के लिये दण्डक वन में जाता हूं ॥३१॥

श्लोक—"सा हृष्टा तस्य तद्वाक्यम् ।" इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थः—तस्य = राम का। तद्वाक्यं = उस वचन को। हृष्टा= प्रसन्न। प्रस्थानं=रवानगी। त्वरयामास=शीघ्रता कराने लगी ॥३२॥

अन्वयः—तस्य रामस्य तद्वाक्यं श्रुत्वा सा कैकेयी हृष्टा सा प्रस्थानं श्रद्दधाना राघवं त्वरयामास ॥३२॥

सरलार्थ:—उस राम के वचन को सुनकर वह कैकेयी प्रसन्न होगई। वह शीघ्र प्रस्थान कराने में विश्वास करती हुई राम को जल्दी कराने लगी ॥३२॥

कैकयी उवाच—

श्लोक:—"एवं भवतु यास्यन्ति।" इत्यादि ॥३३॥

शब्दार्थ:—यास्यन्ति=जावेंगे। दूता:=संदेश वाहक। उपावर्तयितु=लाने के लिये। मातुलकुलात् = मामा के घर से ॥३३॥

अन्वय:—एवं भवतु। दूता: नरा: शीघ्र जवै: हयै: मातुकुलात् भरतं उपावर्तयितु' यास्यन्ति ॥३३॥

सरलार्थ—कैकेयी राम से बोली—हे राम! तुम ठीक कहते हो, ऐसा ही होना चाहिये। भरत को मामा के यहां से बुलाने के लिए तेज चलने वालों घोड़ों पर सवार होकर दूत तो जायेंगे ॥३३॥

श्लोक:—"तव त्वहं क्षमं मन्ये।" इत्यादि ॥३४॥

शब्दार्थ:—विलम्वम् = देरी। उत्सुकस्य = उत्कण्ठित। तव = तुम्हारे। क्षमं न मन्ये=ठीक नहीं मानती हूं ॥३४॥

अन्वय:—हे राम! उत्सुकस्य तव विलम्वनं अहं क्षमं न मन्ये तस्मात् इत: त्वं शीघ्र' वनं गन्तु' अर्हसि ॥३४॥

सरलार्थ:—हे राम! तुम वन में जाने के लिए विशेष उत्कण्ठित जान पड़ते हो अत: तुम्हारे द्वारा विलम्ब करना मैं ठीक नहीं समझती हूं अत: तुम शीघ्र वन को चले जाओ ॥३४॥

श्लोक:—"व्रीडान्वित: स्वयं यच्च।" इत्यादि ॥३५॥

शब्दार्थ:—व्रीडान्वित:=लज्जा से युक्त। त्वां=तुमको। नाभिभाषते=नहीं बोलते हैं। मन्यु:=क्रोध। अपनीयताम्=दूर करो ॥३५॥

अन्वय:—व्रीडान्वित: यत् स्वयं नृप: त्वां न अभिभाषते एतत् किंचित् न, हे नर श्रेष्ठ! एष: मन्यु: अपनीयताम् ॥३५॥

सरलार्थः—महाराज दशरथ जो स्वयं तुम से कुछ नहीं कहते हैं, इसमें दूसरी कोई बात नहीं है। ये इस समय विशेष लज्जित हैं। हे नर श्रेष्ठ ! इस क्रोध को दूर करो ॥३५॥

श्लोकः—"यावत् त्वं न वनं यातः।" इत्यादि ॥३६॥

शब्दार्थः—अस्मात् पुरात्=इस अयोध्या नगरी से। न स्नास्यते= नहीं नहायेंगे। न भोक्ष्यते=न खायेंगे ॥३६॥

अन्वयः—हे राम ! यावत् त्वं अस्मात् पुरात् अभित्वरन् वनं न यातः तावत् ते पिता न स्नास्यते न भोक्ष्यते ॥३६॥

सरलार्थः—हे राम ! जब तक तुम इस अयोध्या नगरी से वन में में नहीं जाते हो तब तक तुम्हारे पिता न तो स्नान करेंगे और न खायेंगे ॥३६॥

श्लोकः—"धिक्कष्टमिति निःश्वस्य।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—शोकपरिप्लुतः=चिन्ता से युक्त। धिक्कष्टम्=धिकार है। बड़ा कष्ट हुआ। निःश्वस्य = सांस लेकर। पर्यङ्के = पलङ्ग पर। हेम भूषिते=सुवर्ण जटित। मूर्च्छितः=बेहोश। न्यपतत्=गिर पड़े ॥३७॥

अन्वयः—शोकपरिप्लुतः राजा धिक्कष्टम् इति निश्वस्य मूर्च्छितः सन् हेम भूषिते तस्मिन् पर्यङ्के न्यपतत् ॥३७॥

सरलार्थ—चिन्ताओं से घिरे हुये राजा दशरथ कैकयी की बात सुन कर लम्बी सांस खींचकर बोले—धिक्कार है। हाय, बड़ा कष्ट हुआ। इतना कहकर वे मूर्च्छित होकर उस स्वर्ण जटित पलङ्ग पर गिर पड़े ॥३७॥

श्लोक—"रामोऽप्युत्थाप्य राजानं।" इत्यादि ॥३८॥

शब्दार्थ—उत्थाप्य=उठा कर। अभिप्रचोदितः=प्रताडित। कशया= चाबुक से। हतः=पीटा गया। वाजी=घोड़ा। कृतत्वरः=शीघ्रता करने वाला ॥३८॥

अन्वय—रामः अपि राजानं उत्थाप्य कैकेय्याः अभिप्रचोदितः कशया हतः वाजी इव वनं गन्तुं कृतत्वरः आसीत् ॥३८॥

सरलार्थ—राम ने मूर्च्छित राजा को उठाकर कैकेयी द्वारा प्रताडित होते हुए चाबुक से प्रताडित घोड़े की तरह वन में जाने को उतावले हो रहे थे ॥३८॥

राम उवाच—

श्लोक—"नाहमर्थपरो देवि ।" इत्यादि ॥३९॥

शब्दार्थ—अर्थपरः=धन का लोलुप । लोकं=संसार में । आवस्तुं= रहने को । उत्सहे = उत्साह रखता हूं । विमलं = निर्मल । धर्ममास्थितम्=धर्माचरण करने वाला । विद्धि=जानो ॥३९॥

अन्वय—हे देवि ! अहं अर्थपरः न लोकं आवस्तुं न उत्सहे ऋषिभिः तुल्यं विमलं धर्मं आस्थितं मां विद्धि ॥३९॥

सरलार्थ—हे देवि ! मुझे धन का लोभ नहीं है और न मैं संसार में रहने के लिये चाहता हूं । ऋषियों के समान निर्मल और धर्माचरण करने वाला मुझ को समझो ॥३९॥

श्लोक—"नह्यतो धर्मं चरणं ।" इत्यादि ॥४०॥

शब्दार्थ—धर्मचरणं=धर्म का पालन करना । अतः=इससे अधिक । महत्तरम् = बड़ा । शुश्रूषा = सेवा । वचन क्रिया = आज्ञा का पालन करना ॥४०॥

अन्वय—यथा पितरि शुश्रूषा वा तस्य वचनं क्रिया, अतः किंचित् महत्तरम् धर्मचरणं न अस्ति ॥४०॥

सरलार्थ—जैसे कि पिताजी की सेवा करना तथा उनकी आज्ञा का पालन करना, इससे बढ़कर और कोई दूसरा बडा धर्म का आचरण नहीं होता है ॥४०॥

श्लोक—"न नूनं मयि कैकेयी ।" इत्यादि ॥४१॥

शब्दार्थ—मयि = मेरे विषय में। मुख्यान् = प्रधान। आशंससे = नहीं जानती हो। ईश्वरतरा=समर्थ ॥४१॥

अन्वय—हे कैकेयि ! मम ईश्वरतरा सती नूनं मयि मुख्यान् गुणान् न आशंससे यत् त्वं राजानं अवोचः ॥४१॥

सरलार्थ—हे कैकेयि ! तुम्हारा मेरे पर पूर्ण अधिकार होते हुये भी निश्चय ही तुमने मेरे में प्रधान गुणों को नहीं समझा है। जिससे तुमने राजा दशरथ को अप्रिय बात कही ॥४१॥

श्लोक—"यावन्मातरमापृच्छे।" इत्यादि ॥४२॥

शब्दार्थ—यावत्=जब तक। मातरं=माता को। आपृच्छे=पूछता हूं। अनुनयामि=सुझाऊं बुझाऊं। अद्यैव=आज ही। महद्वनं=बड़े वन को। गमिष्यामि=जाऊंगा ॥४२॥

अन्वय—यावत् मातरं आपृच्छे अहं सीतां अनुनयामि ततः अद्य एव दण्डकानां महद्वनं गमिष्यामि ॥४२॥

सरलार्थ—जब तक मैं माता कौसल्या से वन जाने की आज्ञा ले लेता हूं। और सीता को समझाबुझा लेता हूं। उसके बाद आज ही मैं दण्डक वन में चला जाऊंगा ॥४२॥

श्लोकः—"भरतः पालयेत् राज्यं।" इत्यादि ॥४३॥

शब्दार्थः—राज्यं=राज्य को। पालयेत्=पालन करे। शुश्रूषेत्= सेवा करे। सनातनः=प्राचीन। धर्मः=कर्तव्य ॥४३॥

अन्वयः—यथा भरतः पितुः शुश्रूषेत् राज्यं च पालयेत् तथा भक्त्या कर्त्तव्यं सः हि धर्मः सनातनः अस्ति ॥४३॥

सरलार्थः—जैसे भरत पिताजी की सेवा में तत्पर हो तथा राज्य का पालन करें वैसे आपको करना चाहिये यह प्राचीन सनातन धर्म है ॥४३॥

श्लोक:—"रामस्य तु वच: श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥४४॥

शब्दार्थ:—रामस्य=राम का । वच:=वचन । श्रुत्वा=सुन कर । भृशं=अत्यन्त । शोकात्=चिन्ता से । महास्वनं=मोटी आवाज से । रुरोद= रोने लगे ॥४४॥

अन्वय:—पिता रामस्य वच: श्रुत्वा भृशं दु:खगत: शोकाद् वक्तुं अशक्नुवन् महास्वनं रुरोद ॥४४॥

सरलार्थ:—राजा दशरथ अपने प्यारे पुत्र राम के वचन को सुनकर अत्यन्त दु:खी हुये । चिन्ता के कारण वे राम से कुछ भी नहीं कहते हुये बड़े जोरों से रोने लगे ॥४४॥

——oo——

तृतीय सर्ग:

सीताया: वनगमनाग्रह:

राम उवाच—

श्लोक—सा त्वं वसेह कल्याणि । इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—इह=अयोध्या में । वस=रहो । समनुवर्तिनी=राजा के अनुकूल । सत्यव्रतपरायणा=सत्य के व्रत में तत्पर रहना ॥१॥

अन्वय:—हे कल्याणि ! सा त्वं राज्ञ: समनुवर्तिनी सती इह वस, भरतस्य धर्मे रता सत्यव्रतपरायणा ॥१॥

सरलार्थ:—हे जानकी ! वह तुम राजा के अनुकूल बनकर यहीं अयोध्या में रहो । भरत के कार्यो में तत्पर तथा सत्यव्रत में तत्पर रहना ॥१॥

श्लोक:—अहं गमिष्या मि महावनं प्रिये । इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—महावनं=दण्डवन को । गमिष्यामि=जाऊंगा । इहैव=इस अयोध्या में ही । कस्यचित् = किसी का । व्यलीकं=अप्रिय मम=मेरी वच:=आज्ञा ॥२॥

अन्वय—हे प्रिये ! अहं महावनं गमिष्यामि हे भामिनि ! त्वया इह एव वसितव्यम् । यथा त्वं कस्यचित् व्यलीकं न कुरुषे तथा त्वया मम इदं वचः कार्यम् ॥२॥

सरलार्थः—हे प्रिये ! मैं दण्डकारण्य को प्रस्थान करूंगा । हे भामिनि ! तुम्हें इस अयोध्या में ही रहना चाहिये । जिस प्रकार तुम किसी का भी अप्रिय नही करती हो उसी तरह तुम्हें मेरी इस आज्ञा का पालन करना चाहिये ॥२॥

श्लोक—"एवमुक्ता तु वैदेही ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—एवमुक्ता=इस प्रकार कही गई । वैदेही=सीता । प्रियवादिनी=मधुर भाषिणी । प्रणयात्=स्नेह से । संक्रुद्धा=क्रोधित । भर्तारं=राम को ॥३॥

अन्वय—एवम् उक्ता प्रियार्हा प्रियवादिनी वैदेही प्रणयात् एव संक्रुद्धा भर्तारं इदं अब्रवीत् ॥३॥

सरलार्थ—इस प्रकार राम के द्वारा कही गई प्राणों से भी प्यारी मधुरभाषिणी जानकी स्नेह के कारण क्रोधित होकर अपने पति से बोली ॥३॥

सीता उवाच—

श्लोक—"किमिदं भाषसे राम ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—भाषसे=कहते हो । लघुतया=छोटी समझ कर । ध्रुवं=निश्चय ही । अपहास्यं=हंसी के योग्य श्रुत्वा=सुनकर ॥४॥

अन्वय—हे राम ! इदं वाक्यं लघुतया ध्रुवं किं भाषसे । हे नवरोत्तम ! श्रुत्वा मे अपहास्यम् ॥४॥

सरलार्थ—हे राम ! आप मुझे छोटी जानकर यह वचन कैसे कह रहे हो हे नर श्रेष्ठ आपके वचन को सुनकर मुझे हंसी आती है ॥४॥

श्लोक—"वीराणां राजपुत्राणाम् ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—राजपुत्राणां=राजकुमारों के। शास्त्रज्ञ विदुषां=शास्त्र जानने वाले पंडितों के। इरितम्=कहाहुआ। अनर्ह्यम्=निन्दनीय। अशस्यं=अप्रशंसनीय ॥५॥

अन्वय—वीराणां राजपुत्राणां तथा हे नृप शास्त्रज्ञविदुषां कृते त्वया इरितम् अनर्ह्यम् अशस्यं तथा न श्रोतव्यम् ॥५॥

सरलार्थः—वीर राजपुत्रों के तथा शास्त्र के जानने वाले पंडितों के लिये तुम्हारे द्वारा कथित विषय निन्दनीय अप्रशंसनीय तथा सुनने लायक नही है ॥५॥

श्लोकः—"आर्यपुत्र पिता माता।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थः—स्नुषा=पुत्रवधू। स्वानि=अपने। पुण्यानि=पुण्यों को भुञ्जानः=भोगते हुए। भाग्यं=भाग्य का। उपासते=अनुसरण करते है ॥६॥

अन्वय—हे आर्यपुत्र ! पिता माता भ्राता तथा पुत्रः स्नुषा स्वानि पुण्यानि भुञ्जाना: स्वं स्वं भाग्यं उपासते ॥६॥

सरलार्थः—हे आर्यपुत्र ! पिता माता, भाई, पुत्र वधू ये सब पुण्यादि कर्मो का फल भोगते हुये अपने अपने प्रारब्ध के अनुसार जीवन निर्वाह करते हैं ॥६॥

श्लोक—"भर्तु र्भाग्यं तु भार्यैका।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—भर्तुः=स्वामी का। भाग्यं=प्रारब्ध। भार्या=स्त्री आदिष्टा=आज्ञा को प्राप्त करके वस्तव्यम्=रहना चाहिये ॥७॥

अन्वयः—हे पुरुषर्षभ ! एका भार्या भर्तुः भाग्यं प्राप्नोति। अतः एव अहं आदिष्टा वने वस्तव्य म्॥७॥

सरलार्थः—हे नरश्रेष्ठ ! केवल स्त्री ही पुरुष के भाग्य का अनुसरण करती है। अतः आपके साथ मुझे भी वनवास की आज्ञा मिली है। इसलिये मुझे भी वन में रहना चाहिये ॥७॥

श्लोक—"न पिता नात्मजो वात्मा।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ--आत्मजः=पुत्र । आत्मा=स्वयं । सखीजनः=मित्रवर्ग। गतिः=सहारा ॥८॥

अन्वय—इह प्रेत्य च नारीणां न पिता न आत्मजः वा आत्मा न माता न सखीजनः सदा एक पतिः गतिः भवति ॥८॥

सरलार्थः—इस संसार में न तो पिता न पुत्र अथवा न अपना शरीर ही, न माता, और न मित्रमण्डल ही सहारा होता है परन्तु इस लोक और परलोक में स्त्रियों के लिए उनका पति ही सहारा होता है ॥८॥

श्लोक—यदि त्वं प्रस्थितो दुर्ग । इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ--प्रस्थितः=रवाना हुये । दुर्ग=भयंकर । वनं=वनको अग्रतः=आगे आगे । कुशकण्टकान्=दर्भ और कांटों को । मृद्नन्ती=कुचलती हुई ॥९॥

अन्वयः—हे राघव ! यदि त्वं अद्यैव दुर्ग वनं प्रस्थितः कुशकण्टकान् मृद्नन्ती ते अग्रतः गमिष्यामि ॥९॥

सरलार्थः—हे राम ! अगर तुम आज ह ं भयंकर जंगल में जाने के लिये प्रस्थान करते हो मैं भी दर्भ और कांटों को कुचलती हुई तुम्हारे आगे आगे चलूंगी ॥९॥

श्लोकः—"ईर्ष्यारोपौ वहिष्कृत्य ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थः—ईर्ष्यारोपौ=डाह और क्रोध को । वहिष्कृत्य=दूर करके । भुक्तशेषम्=खाने से वचे हुये । उदकमिव=जल की तरह । विश्रब्धः= विश्वस्त ॥१०॥

अन्वयः—भुक्तशेषं उदकम् इव ईर्ष्यारोपौ वहिष्कृत्य हे वीर ! विश्रब्धः मां नय मयि पापं न विद्यते ॥१०॥

सरलार्थ—खाने से वचेहुये पानी को तरह डाह और क्रोध को दूर करके हे वीर ! विश्वस्त होकर मुझे भी ले चलिये मेरे में कोई पाप नहीं है॥१०॥

श्लोकः—"प्रासादाग्रे विमानै र्वा ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—प्रासादाग्रे=महल में विमानैः=वायुयानों से। विहायस-गतेन=प्राकाश की सैर से। भर्तुः=स्वामी की। पादच्छाया=चरणों की छाया। विशिष्यते==अधिक होती है ॥११॥

अन्वय:—प्रासादाग्रे विमानैः विहायसगतेन सर्वावस्थागता अहं भर्तुः पादच्छाया विशिष्यते ॥११॥

सरलार्थ:—महलो में रहना, विमानों के द्वारा भ्रमण करना और अणिमादि सिद्धियों के बल से आकाश गमन करना मैं पसन्द नही करती हूं। हरतरह से मैं तो इन सबसे विशिष्ट स्वामी के चरणों की छाया को मानती हूं ॥११॥

श्लोक—"अनुशिष्टास्मि मात्रा च।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ:—अनुशिष्टा=उपदिष्ट। मात्रा=माता के द्वारा। पित्रा=पिता के द्वारा। विविधाश्रयम्=भिन्न २ आश्रयों को। वर्तितव्यम्=बरतना चाहिये ॥१२॥

अन्वय—मात्रा पित्रा च विविधाश्रयं अनुशिष्टा अस्मि यथा मया वर्तितव्यम् संप्रति वक्तव्या न अस्मि ॥१२॥

सरलार्थ—मेरे पिता और माता ने मुझे अनेकों प्रकार से शिक्षा दी है। मुझे किसके साथ कैसा वर्ताव करना चाहिये इस विषयमें मैं अच्छी तरह जानकार हूं। इसबारे मे मुझे कहने की आवश्यकता नहीं है ॥१२॥

श्लोकः—"अहं दुर्गं गमिष्यामि।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—दुर्गं=भीषण। पुरुषवर्जितम्=पुरुषों से रहित। नानामृगगणाकीर्णं=अनेक प्रकार के हरिणों से समन्वित। शार्दूलगणसेवितम्=सिंहों के समूह से युक्त ॥१३॥

अन्वय—अहं पुरुषवर्जितम् नानामृगगणाकीर्णं शार्दूलगणसेवितम् दुर्गं गमिष्यामि ॥१३॥

सरलार्थ:—मैं पुरुषों से रहित अनेक विध हरिणों के समूह से समन्वित तथा सिंहों के गणों से सेवित भीषण वन को जाऊंगी ॥१३॥

श्लोकः—"सुखं वने निवत्स्यामि ।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थः—निवत्स्यामि=रहूंगी । पितुः=पिता के । अचिन्तयती=नहीं सोचती हुई । त्रीन् लोकान्=मृत्यु पाताल और स्वर्ग को । पतिव्रतम्=पतिव्रत धर्म को । चिन्तयन्ती=सोचती हुई ॥१४॥

अन्वयः—यथा पितुः भवने सुखं वने त्रीन् लोकान् अचिन्तयती निवत्स्यामि ॥१४॥

सरलार्थ—जिस तरह मैं पिता के घर में रहती हूं उसी तरह मैं तीनों लोकों को नहीं सोचती हुई और पतिव्रतधर्म का चिन्तन करती हुई सुख पूर्वक वन में रहूंगी ॥१४॥

श्लोक—"शुश्रूषमाणा ते नित्यं ।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ—शुश्रूषमाणा=सेवा करती हुई । त्वया सह=तुम्हारेसाथ । रंस्ये=रमण करूंगी । ब्रह्मचारिणी=ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करती हुई । मधुगंधिषु=मीठी २ सुगंध से परिपूर्ण ॥१५॥

अन्वय—हे वीर ! ब्रह्मचारिणी नियता ते नित्यं शुश्रूषमाणा मधुगंधिषु वनेषु त्वया सह रंस्ये ॥१५॥

सरलार्थ—हे वीर ! नियम पूर्वक रहकर ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करती हुई तुम्हारी सेवा करूंगी और मीठी मीठी सुगन्ध से भरे हुये वनों में तुम्हारे साथ विचरण करूंगी ॥१५॥

श्लोकः—"त्वं हि कर्तुं वने शक्तः ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थः—संपरिपालनम्=संरक्षण । कर्तुं=करने के लिये । शक्तः=समर्थ । मानद=आदर देने वाले । इह=इस वन में ॥१६॥

अन्वयः—हे राम ! त्वं इह अन्यस्य जनस्य अपि संपरिपालनम् कर्तुं वने शक्तः किं पुनः मम ॥१६॥

सरलार्थः—हे राम ! आप तो इस जंगल में रह कर दूसरे लोगों की भी रक्षा कर सकते हैं तो फिर मेरी रक्षा करना आपके लिये कौन सी बड़ी बात है ? ॥१६॥

श्लोक:—"साहं त्वया गमिष्यामि ।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ:—उद्यता=तत्पर। निवर्तयितुं=लौटाने के लिये। अद्य=आज। गमिष्यामि=जाऊंगी। न संशय:=संदेह नहीं ॥१७॥

अन्वय:—सा अहं अद्य वनं गमिष्यामि न संशय: हे महाभाग! त्वया उद्यता अहं निवर्तयितुं न शक्या ॥१७॥

सरलार्थ:—मैं आज ही तुम्हारे साथ वन को चलूंगी इसमें कोई सन्देह नहीं है। वन गमन के लिये तत्पर मैं तुम्हारे द्वारा लौटाने योग्य नहीं हूं ॥१७॥

श्लोक:—"फलमूलाशना नित्यं।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ:—फलमूलाशना=फल और मूल को खाने वाली। करिष्यामि=करूंगी। त्वया सह=तुम्हारे साथ। निवसन्ती=रहती हुई ॥१८॥

अन्वय:—फलमूलाशना नित्यं भविष्यामि न संशय:, त्वया सह निवसन्ती ते दु:खं न करिष्यामि ॥१८॥

सरलार्थ:—तुम्हारे साथ रहकर नित्य मैं फल और मूलों का भोजन करूंगी इसमें सन्देह नहीं है। तुम्हारे साथ रहती हुई तुम्हें कष्ट नहीं दूंगी ॥१८॥

श्लोक:—"अग्रतस्ते गमिष्यामि ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ:—ते = तुम्हारे। अग्रत: = आगे आगे। त्वयि भुक्तवति=तुम्हारे खाने पर। भोक्ष्ये=भोजन करूंगी। शैलान्=पर्वतों को। पल्वलानि=छोटे तालाब। सरांसि=सरोवरों को ॥१९॥

अन्वय:—ते अग्रत: गमिष्यामि त्वयि भुक्तवति भोक्ष्ये परत: शैलान् पल्वलानि सरांसि च इच्छामि ॥१९॥

सरलार्थ:—आपके आगे-आगे रास्ता साफ करती हुई चलूंगी और आपके भोजन कर लेने पर जो कुछ बचेगा, उसे ही खाकर रहूंगी। हे नाथ! मेरी बड़ी इच्छा है कि आपके साथ निर्भय हो वन में सब ओर घूम घूम कर पर्वतों, छोटे छोटे तालाबों और सरोवरों को देखूं ॥१९॥

श्लोकः—"हंसकारण्डवाकीर्णाः ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थः—हंसकारण्डवा कीर्णाः=हंस और कारण्डव पक्षियों से युक्त । पद्मिनीः=कमलिनी । पुष्पिताः=फूलों से समन्वित ॥२०॥

अन्वयः—सुखिनी हंसकारण्डवा कीर्णाः साधु पुष्पिताः पद्मिनीः त्वया वीरेण संगता द्रष्टुं इच्छेयं ॥२०॥

सरलार्थः—मैं तुम्हारे जैसे वीर के साथ रह कर हंस कारण्डवादि नाना पक्षियों से समन्वित विकसित कमलिनी के फूलों को देखना चाहती हूं ॥२०॥

श्लोकः—"अभिषेकं करिष्यामि ।" इत्यानि ॥२१॥

शब्दार्थः—अभिषेकं=स्नान । अनुव्रता = व्रत का अनुसरण करती हुई । विशालाक्षा=दीर्घ नेत्र वाले ॥२१॥

अन्वय—हे विशालाक्ष ! तासु नित्यं अनुव्रता अभिषेकं करिष्यामि परमनन्दिनी त्वया सह रंस्ये ॥२१॥

सरलार्थः—हे राम ! मैं आपके चरणों में अनुराग रखकर प्रतिदिन उन जलाशयों में स्नान करूंगी । तुम्हारे साथ सुखपूर्वक रहूंगी ॥२१॥

श्लोकः—"एवं वर्ष सहस्राणि ।" ॥२२॥

शब्दार्थः—वर्ष सहस्राणि=हजारों वर्ष । शतं=सौ । व्यक्तिक्रमं=कष्ट । न वेत्स्यामि=नहीं समझूंगी । न मतः=इष्ट नहीं है ॥२२॥

अन्वयः—एवं त्वया सह वर्षसहस्राणि शतं वा अपि व्यक्तिक्रमं न वेत्स्यामि मे स्वर्गः अपि न मतः ॥२२॥

सरलार्थः—इस प्रकार तुम्हारे साथ सैकड़ों या हजारों वर्षों तक भी यदि आपके साथ रहने का सौभाग्य मिले तो मुझे कभी कष्ट का अनुभव नहीं होगा । आपके सिवाय तो मुझे स्वर्ग का निवास भी रुचिकर नहीं हो सकता है ॥२२॥

श्लोकः—"स्वर्गेऽपि च विना वासो ।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ:—स्वर्गेऽपि=स्वर्ग में भी। नरव्याघ्र=नरकेसरी। रोचये= पसन्द करती हूं। त्वयाविना=तुम्हारे सिवाय ॥२३॥

अन्वय:—हे राघव! यदि स्वर्गे अपि विना वास: भविता हे नर व्याघ्र! त्वया विना अहं तदपि न रोचये ॥२३॥

सरलार्थ:—हे राम! अगर तुम्हारे सिवाय मुझे स्वर्ग में रहना पड़े तो मैं पसन्द नहीं करती हूं हे नर केसरी! तुम्हारे अभाव में मुझे स्वर्ग भी रुचिकर प्रतीत नहीं होता है ॥२३॥

श्लोक—अहं गमिष्यामि वनं सुदुर्गमम्।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—मृगायुतं=हजारों हिरनों से युक्त। वानरवारणै:=बन्दर और हाथियो से युक्त। उपगृह्य=पकड़ कर। संयता=जितेन्द्रिय ॥२६॥

अन्वय—अहं वानरवारणै: मृगायुतं सुदुर्गमं वनं गमिष्यामि यथा पितुर्गृहे संयता तव एव पादौ उपगृह्य वने निवत्स्यामि ॥२४॥

सरलार्थ—मैं बन्दर, हाथी औ रहजारों हरिणों से परिपूर्ण भयंकर वन में जाऊंगी, जिस प्रकार पिता के घर में संयत होकर रहती हूं उसी प्रकार तुम्हारे चरणों में अनुराग रखकर वन में रहूंगी ॥२४॥

श्लोक:—"अनन्यभावामनुरक्तचेतसं।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थ—अनन्यभावां=अन्य में भक्ति नहीं रखने वाली को। अनु-रक्त चेतसं=अनुरक्त मन वाली को। विमुक्तां=छोड़ी हुई को। याचनां= प्रार्थना को। गुरुता=भार। मया=मेरे से ॥२५॥

अन्वय—अनन्यभावां अनुरक्त चेतसं त्वया विमुक्तां मरणाय निश्चितां मां नयस्व याचनां साधु कुरुष्व, अत: मया ते गुरुता न भविष्यति ॥२५॥

सरलार्थ—मैं आपके सिवाय अन्य किसी में भक्ति नही रखती हूं और तुम्हारे द्वारा छोड़ी जाने पर निश्चित ही मैं मर जाऊंगी। मेरी इस प्रार्थना को सफल कीजिये। इतना मात्र ध्यान रखने से मेरे से तुम्हें कोई भार नहीं पड़ेगा ॥२५॥

श्लोक—"तां परिष्वज्य बाहुभ्यां।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—तां=सीता को। परिष्वज्य=आलिंगन करके। बाहुभ्यां=भुजाओं से। विसंज्ञां=वेहोश। परिश्वासयन्=आश्वासन देते हुये ॥२६॥

अन्वय—विसंज्ञाम् इव तां दुःखितां बाहुभ्यां परिष्वज्य तदा परिश्वासयन् रामः वचनं उवाच ॥२६॥

सरलार्थ—मूर्च्छित सी उस दुःखी सीता को भुजाओं से आलिङ्गन कर तब उसको आश्वासन देते हुए राम कहने लगे ॥२६॥

श्लोक—"न देवि तव दुःखेन।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थ—तव=तुम्हारे। दुःखेन = कष्ट से। स्वर्गमपि = स्वर्ग को भी। न अभिरोचये=पसंद नहीं करता हूं। स्वयंभोः=ब्रह्मा के ॥२७॥

अन्वय—हे देवि ! तव दुःखेन स्वर्गम् अपि न अभिरोचये, स्वयंभोः इव सर्वतः मे किंचित् भयं न अस्ति ॥२७॥

सरलार्थ—हे देवी ! तुम्हारे कष्ट से मैं स्वर्ग को भी नहीं चाहता हूं साक्षात् ब्रह्मा की तरह मुझे किसी से कुछ भी भय नहीं है ॥२७॥

श्लोक—"तव सर्वमभिप्रायमविज्ञाय।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थ—तव=तुम्हारा। अभिप्रायम्=हृदय की बात। अविज्ञाय=बिना समझे। रक्षणे=रक्षा करने में ॥२८॥

अन्वय—हे शुभानने ! तव सर्वं अभिप्रायं अविज्ञाय रक्षणे शक्तिमान् अपि अरण्ये वासं न रोचये ॥२८॥

सरलार्थ—हे सीता तुम्हारे दिल की बात को अच्छी तरह समझे विना रक्षण करने में समर्थ होने पर भी जंगल में तुम्हारे वास को मैं पसन्द नहीं करता था ॥२८॥

श्लोक—"सा हि दिष्टानवद्याङ्गि।" इत्यादि ॥२९॥

शब्दार्थ—दिष्टा=आज्ञा दी गई। अनवद्याङ्गी=निर्मल अङ्ग वाली। अनुगच्छस्व=अनुगमन करो। भीरुः=डरपोक ॥२९॥

अन्वय—हे मदिरेक्षणे ! अनवद्याङ्गी सा वनाय दिष्टा। हे भीरु ! मां अनुगच्छस्व सहधर्मचरी भव ॥२९॥

सरलार्थः—हे सीता ! निर्मल अङ्गों वाली तुझको वनगमन के लिये मैं आज्ञा प्रदान करता हूं। हे भीरु ! तुम मेरे पीछे पीछे चलो और मेरे साथ अपने कर्तव्यों का पालन करो।

श्लोकः—"अनुकूलं तु सा भर्तुः।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ—अनुकूलं=अनुकूल। ज्ञात्वा=जानकर। गमनम्=जाना। क्षिप्रं=शीघ्र। प्रमुदिता=प्रसन्न। दातुम्=देने के लिये ॥३०॥

अन्वय—सा देवी भर्तुः आत्मनः गमनं अनुकूलं ज्ञात्वा क्षिप्रं प्रमुदिता सती दातुं एव प्रचक्रमे ॥३०॥

सरलार्थः—वह सीता अपने स्वामी तथा स्वयं के वनगमन को अनुकूल समझकर शीघ्र प्रसन्न होती हुई ब्राह्मणों तथा दीन-दुःखियों को दान देने लगी ॥३०॥

—०००—

चतुर्थः सर्गः

लक्ष्मणवनानुगमनाभ्यनुज्ञा

श्लोकः—"एवं श्रुत्वा स संवादम्।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—एवं=इस प्रकार। संवादं=वार्तालाप को। पूर्वमागतः=पहले से उपस्थित थे। बाष्पपर्याकुलमुखः=आंसुओं से भीगा हुआ चेहरा। शोकं=चिन्ता को। सोढुं=सहन करने को ॥१॥

अन्वयः—एवं संवादं श्रुत्वा पूर्वम् आगतः बाष्पपर्याकुलमुखः सः लक्ष्मणः शोकं सोढुं अशक्नुवन् ॥१॥

सरलार्थः—जिस समय श्रीराम और सीता में बातचीत हो रही थी, लक्ष्मण वहां पहले से उपस्थित थे। उन दोनों का संवाद सुनकर उनका मुखमण्डल आंसुओं से भीग गया। भाई के विरह का शोक अब उनके लिये भी असह्य हो उठा ॥१॥

श्लोकः—"सः भ्रातुश्चरणौ गाढम् ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—भ्रातुः = भाई के। चरणौ=पैरों को। गाढं=जोर से। निपीड्य=पकड़ कर। महाव्रतं = महान् व्रत को पालन करने वाले राम को ॥२॥

अन्वयः—सः रघुनन्दनः भ्रातुः चरणौ गाढं निपीड्य अतिशयां सीतां महाव्रतं राघवं च उवाच ॥२॥

सरलार्थ—रघुनन्दन लक्ष्मण ने श्री रामचन्द्रजी के दोनों पैर जोर से पकड़ लिये और यशस्विनी सीता तथा महान् व्रत का पालन करने वाले श्री राम से कहा ॥२॥

श्लोक—"यदि गन्तुं कृता बुद्धिः ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थः—गन्तुं=जाने के लिये। मृगगजायुतम्=हजारों हरिण और हाथियों से युक्त। धनुर्धरः = धनुर्धारी। अनुगमिष्यामि = अनुगमन करूंगा ॥३॥

अन्वयः—यदि मृगगजायुतं वनं गन्तुं बुद्धिः कृता धनुर्धरः सह त्वां वनं अग्रे अनुगमिष्यामि ॥३॥

सरलार्थ—हे आर्य! हजारों जंगली पशुओं हरिण तथा हाथियों से भरे हुये वन में जाने का यदि आपने निश्चय कर ही लिया है, तो मैं भी धनुष धारण करके आपके आगे-आगे चलूंगा ॥३॥

श्लोकः—"मया समेतोऽरण्यानि ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—समेतः=युक्त। अरण्यानि=जंगल। रम्याणि=सुन्दर। विचरिष्यसि=भ्रमण करोगे। यूथैः=झुण्डों से ॥४॥

अन्वय:—समन्तम:=पक्षिभि: भृङ्गयूथै: संघुष्टानि रम्याणि अरण्यानि मया समेत: विचरिष्यसि ॥४॥

सरलार्थ:—चारों ओर से पक्षीगण तथा भौरों के झुण्डों से गुंजित सुन्दर जंगलो मे मेरे साथ विचरण करोगे ॥४॥

श्लोक:—"न देव लोका क्रमणम् ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ:—देवलोकाक्रमणं = स्वर्ग का अतिक्रमण । अमरत्वं=अमर होना । लोकानां ऐश्वर्यं=संसार का ऐश्र्य । न कामये=नहीं चाहता हूं ॥५॥

अन्वय:—अहं त्वया विना देवलोकाक्रमणं न अमरत्वं न लोकानां ऐश्वर्यं च न कामये ॥५॥

सरलार्थ—आपके बिना मैं स्वर्ग में जाना, अमर होना, तथा सम्पूर्ण लोकों का ऐश्वर्य प्राप्त करना भी नहीं चाहता ॥५॥

श्लोक—"एवं ब्रुवाण: सौमित्रि: ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—ब्रुवाण:=बोलते हुये । सौमित्रि:=लक्ष्मण । वनवासाय= वनवास के लिये । सान्त्वै:=आश्वासनों से । निषिद्ध:=रोके गये ॥६॥

अन्वय—एवं ब्रुवाण: वनवासाय निश्चित: सौमित्रि: रामेण बहुभि: सान्त्वै: निषिद्ध: पुन: अब्रवीत् ॥६॥

सरलार्थ—इस प्रकार बोलते हुये और वनवास के लिये निश्चय किये हुये लक्ष्मण को राम ने अनेकों सान्त्वनापूर्ण वचनों से समझाया और उन्हें वन में जाने से रोका । तब लक्ष्मण फिर से कहने लगा ॥६॥

श्लोक—"अनुज्ञातस्तु भवता ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ—अनुज्ञात:=आज्ञा दे रक्खी है । मे=मुझको । निवारणम्= रोकना । पूर्वमेव=पहले ही ॥७॥

अन्वय—यत् भवता पूर्वं एव अहं अनुज्ञात: अस्मि, इदानीं मे पुन: निवारणं किं क्रियते ॥७॥

सरलार्थ:—भैया ! आपने तो पहले से ही मुझे अपने साथ रहने की आज्ञा दे रक्खी है, फिर इस समय मुझे क्यों रोकते हैं ? ॥७॥

श्लोक—"रामस्त्वनेन वाक्येन ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ:—सुप्रीतः=प्रसन्न । प्रत्युवाच=प्रत्युत्तर देने लगे । व्रज=जाओ । आपृच्छस्व = पूछो । सहृज्जनम्=इष्ट बन्धुओं को ।॥८॥

अन्वय:—अनेन वाक्येन सुप्रीतः रामः तं प्रत्युवाच हे सौमित्रे ! व्रज सर्वम् एव सुहृज्जनम् आपृच्छस्व ॥८॥

सरलार्थ—लक्ष्मण की इस बात से श्री रामचन्द्रजी को बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने कहा—"सुमित्रानन्दन ! जाओ, माता आदि सभी सुहृदों से चलने की आज्ञा लेलो ॥८॥

श्लोक:—"ये च राज्ञो ददौ दिव्ये ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—राज्ञः=जनकजी के । दिव्ये=अनुपम, अलौकिक । वरुणः=वरुण देव । ददौ=दिया । रौद्रदर्शने=भयंकर ॥९॥

अन्वय—महात्मा वरुणः स्वयं राज्ञः जनकस्य दिव्ये महायज्ञे ये रौद्र-दर्शने धनुषी ददौ ॥९॥

सरलार्थ—महात्मा वरुण ने स्वयं महाराज जनकजी के उस अलौकिक यज्ञ में देखने में भयंकर दो धनुष दिये थे ।।९॥

श्लोक—"अभेद्य कवचे दिव्ये ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—अभेद्यकवचे=दो शक्तिशाली कवच । तूणी=दो तरकस अक्षयसायकौ=कभी बाणों से खाली नहीं होने वाले । आदित्य विमलाभौ=सूर्य के समान चमकीले । खड्गौ=दो तलवार । हेमपरिष्कृतौ=सोने से मढ़ेहुये ॥१०॥

अन्वय—दिव्ये अभेद्य कवचे अक्षय सायकौ तूणी आदित्य विमलाभौ हेम परिष्कृतौ द्वौ खड्गौ ॥१०॥

सरलार्थः—महात्मा वरुण ने अलौकिक दो कवच तथा कभी वाणों से खाली नहीं होने वाले दो तरकस एवं सूर्य के समान देदीप्यमान सोने से मढ़े हुये दो खड्ग दिये ॥१०॥

श्लोकः—"सत्कृत्य निहितं सर्वम् ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—सत्कृत्य=पूजाकर के । आचार्य सद्मनि=वसिष्ठजी के घर में । सर्वं आयुधं=सभी शस्त्रों को । आदाय=लेकर । क्षिप्रं=जल्दी । आव्रज = आजाओ ॥११॥

अन्वय—हे लक्ष्मण ! आचार्यसद्मनि सर्वं एतत् सत्कृत्य निहितम् सर्वं आयुधं आदाय क्षिप्रं आव्रज ॥११॥

सरलार्थः—हे लक्ष्मण आचार्य वसिष्ठजी के घर में इन सभी शस्त्रों की पूजा करके ये रक्खे गये हैं । तुम इन शस्त्रों को लेकर शीघ्र आजाओ ॥११॥

—००—

पञ्चमः सर्गः

सीतारामलक्ष्मणवनगमनम्

श्लोक—"दत्वा तु सह वैदेह्या ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—दत्वा=देकर । वैदेह्या सह=जानकी के साथ । द्रष्टुं=देखने के लिये । राघवौ=राम और लक्ष्मण । जग्मतुः = गये ॥१॥

अन्वयः—वैदेह्या सह ब्राह्मणेभ्यः बहुधनं दत्वा राघवौ सीतया सह पितरं द्रष्टुं जग्मतुः ॥१॥

सरलार्थ—जानकी के साथ ब्राह्मणों को दान में बहुतसा धन देकर राम और लक्ष्मण, सीता के साथ पिता का दर्शन करने के लिये गये ॥१॥

श्लोकः—"पदाति सानुजं दृष्ट्वा ।" ॥२॥

शब्दार्थ—पदातिं=पैदल चलने वाले को। सानुजं=लक्ष्मण के साथ दृष्ट्वा=देखकर। शोकोपहत चेतस: = चिंता से व्याकुल मनवाले ॥२॥

अन्वय—तदा जना ससीतं सानुजं पदातिं दृष्ट्वा शोकोपहतचेतस: बहुजना: वाच: ऊचु: ॥२॥

सरलार्थ—उस समय अयोध्या वासियों ने सीता और लक्ष्मण के साथ राम को पैदल चलते हुये देखकर शोक से व्याकुल दिलवाले इस प्रकार खेद के साथ कहने लगे ॥२॥

श्लोक—"या न शक्या पुरा द्रष्टुं।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ:—भूतं:=प्राणियों के द्वारा। आकाशगै:=आकाश में उडने-वाले। राजमार्गगतां=राजपथ में पैदल चलती हुई सीता को ॥३॥

अन्वय:—पुरा या आकाशगै: भूतै: द्रष्टुं न शक्या अद्य तां सीतां जना: राजमार्गगतां पश्यन्ति ॥३॥

सरलार्थ:—पहले जिस सीता को आकाश में विचरने वाले प्राणी भी नही देख पाते थे, उस सीता को राज मार्ग में चलती हुई लोग देखते हैं ॥३॥

श्लोक:—"तत: कमलपत्राक्ष:।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—कमलपत्राक्ष:=कमलनयन। निरुपम:=अनुपम। सूतं=सुमन्त्र को। आख्याहि=कहो ॥४॥

अन्वय—तत: निरुपम: महान् कमल पत्राक्ष: श्याम: राम: तं सूतं उवाच माम् इति पितु: आख्याहि ॥४॥

सरलार्थ—उसके बाद अनुपम महान् कमलनयन भगवान् राम सूत सुमन्त्र से बोले; आप मेरे आने की महाराज को सूचना दो ॥४॥

श्लोक—"स राम प्रेषित: क्षिप्रम्।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ:—रामप्रेषित:=राम के द्वारा भेजा गया । सन्तापकलुषेन्द्रियम्=चिन्ता से म्लान इन्द्रियों वाले दशरथ को । प्रविश्य=घुसकर । नि:श्वसन्तं=सांस खींचते हुये ॥५॥

अन्वय:—रामप्रेषित: स: सूत: क्षिप्रं प्रविश्य संतापकलुषेन्द्रियम् नि:श्वसन्तं नृपतिं ददर्श ह ॥५॥

सरलार्थ:—राम के द्वारा भेजे गये ब्रह्म सुमन्त्र ने भीतर जाकर संताप से अत्यन्त दु:खी और लम्बी सांस खींचते हुये राजा को देखा ॥५॥

श्लोक—"उपरक्तमिवादित्यम् ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—उपरक्तम्= राहु से ग्रस्त । भस्मच्छन्नम्=राख से ढके । अनलं=अग्नि को । निस्तोयं=बिना जलवाला । तटाकमिव=सरोवर की तरह ॥६॥

अन्वय—उपरक्तम् आदित्यम् इव भस्मच्छन्नम् अनलम् इव निस्तोयम् तटाकम् इव जगतीपतिं अपश्यत् ॥६॥

सरलार्थ—राहु से ग्रस्त सूर्य की तरह राख से ढके हुये अग्नि की तरह निर्जल तालाब की तरह उस राजा दशरथ को देखा ॥६॥

श्लोक—"आलोक्य तं महाप्राज्ञ: ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ:—आलोक्य = देखकर तं=उसको । महाप्राज्ञ:=बुद्धिमान् परमाकुलचेतसं=अत्यन्त व्याकुल मनवाले । अनुशोचन्तं=चिन्ता करते हुये । प्राञ्जलि:=हाथ जोड़ कर ॥७॥

अन्वय:—महाप्राज्ञ: सूत: परमाकुलचेतसं रामं एव अनुशोचन्तं आलोक्य प्राञ्जलि: अब्रवीत् ॥७॥

सरलार्थ—महान् बुद्धिमान् सुमन्त्र अत्यन्त दु:खी चित्त वाले राम की ही चिन्ता करने वाले उस दशरथ को देखकर हाथ जोड कर कहने लगे ॥७॥

श्लोक—"अयं स पुरुष व्याघ्र।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—पुरुषव्याघ्रः=नर केसरी। द्वारि=दरवाजे पर। दत्वा=देकर। उपजीविनां=सेवकों को ॥८॥

अन्वय—अयं सः पुरुषव्याघ्रः ते सुतः ब्राह्मणेभ्यः उपजीविनाम् सर्वं धनं दत्वा द्वारि तिष्ठति ॥८॥

सरलार्थ—यह नरकेसरी तुम्हारे पुत्र राम ब्राह्मणों तथा सेवकों को समस्त ऐश्वर्य का दान देकर दरवाज़े पर खड़े हैं ॥८॥

श्लोक—"स त्वां पश्यतु भद्रं ते।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—सुहृदयः=सब सम्बन्धि रिश्तेदारों को। आपृच्छ्य=पूछकर। त्वां=तुमको। दिदृक्षते=देखना चाहते है ॥९॥

अन्वयः—सः त्वां पश्यतु ते भद्रं सत्यपराक्रमः रामः सर्वान् सुहृदः आपृच्छ्य इदानीं त्वां दिदृक्षते ॥९॥

सरलार्थः—वह राम आपके दर्शन करें। तुम्हारा कल्याण हो। सत्यपराक्रमी श्री राम अपने सब सुहृदों से मिलकर बिदा ले चुके हैं, और अब आपका दर्शन करना चाहते हैं ॥९॥

श्लोक—"गमिष्यन्तं महारण्यम्।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—गमिष्यन्तं=जानेवाले को। राजगुणैः=राजोचित गुणों से। वृत्तं=युक्त। रश्मिभिः=किरणों से ॥१०॥

अन्वय—हे जगतीपते! महारण्यं गमिष्यन्तं रश्मिभिः आदित्यम् इव सर्वैः राजगुणैः वृत्तं तं पश्य ॥१०॥

सरलार्थ—हे जगत के स्वामी? महान् दण्डकारण्य में जानेवाले किरणों से प्रकाशित सूर्य की तरह सब राजोचित गुणों से सम्पन्न राम को देखिये ॥१०॥

श्लोक—"सः सत्य वाक्यो धर्मात्मा ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ:—सत्यवाक्य:=सत्यवचन वाले । धर्मात्मा=धर्माचरण करने वाले । सागरोपम:=समुद्र के समान । निष्पङ्क:=निर्मल ॥११॥

अन्वय:—सः सत्यवाक्यः धर्मात्मा गांभीर्यात् सागरोपमः निष्पङ्कः आकाश इव नरेन्द्रः तं प्रत्युवाच ॥११॥

सरलार्थ—वे सत्य वचन वाले धर्मात्मा राजा दशरथ ने जोकि गंभीरता से समुद्र के समान है और निर्मल आकाश की तरह जिनका चरित्र है सुमन्त्र से बोले ॥११॥

श्लोक—"सुमन्त्रानय मे दारान् ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ:—दारान्=रानियों को । आनय=बुलाओ । परिवृत:=युक्त । द्रष्टुं=देखने के लिये ॥१२॥

अन्वय—हे सुमन्त्र ! मे दारान् ये केचित् इह मामकाः सर्वैः दारैः परिवृतः राघवं द्रष्टुं इच्छामि ॥१२॥

सरलार्थ—राजा दशरथ ने सुमन्त्र से कहा—हे सुमन्त्र तुम मेरे सम्बन्धी तथा मेरी स्त्रियों को बुला लाओ । मैं अपनी रानियों के साथ राम को देखन. चाहता हूं ॥१२॥

श्लोक—"आगतेषु च दारेषु ।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—आगतेषु=आने पर । दारेषु=स्त्रियों के । समवेक्ष्य=देखकर ॥१३॥

अन्वय—महीपतिः दारेषु आगतेषु समवेक्ष्य राजा तं सूतं उवाच हे सुमन्त्र मे सुतं आनय ॥१३॥

सरलार्थ:—दशरथ ने अपनी स्त्रियों को आई हुई देखकर सुमन्त्र से कहा—हे सुमन्त्र तुम मेरे पुत्र राम को बुला ले आओ ॥१३॥

श्लोक—"सः सूतो राममादाय।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ—आदाय=लेकर। मैथिलीं=सीता को। जगाम=गये। अभिमुखः=सामने। तूर्णं=शीघ्र ॥१४॥

अन्वय—तदा सः सूतः लक्ष्मणं मैथिलीं रामं आदाय जगतीपतेः सकाशं अभिमुखः तूर्णं जगाम ॥१४॥

सरलार्थ—तब वह सुमन्त्र लक्ष्मण जानकी के साथ राम को साथ लेकर दशरथजी के सामने शीघ्र ही पहुँचा ॥१४॥

श्लोक—"स राजा पुत्र मायान्तम्।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ—आयान्तं=आते हुये। दूरात्=दूर से ही। कृताञ्जलिम्=हाथ जोड़े हुये। आर्तः=दुःखी। स्त्रीजनसंवृतः=स्त्रियों से घिरे हुये ॥१५॥

अन्वय—स राजा दूरात् कृताञ्जलिं आयान्तं पुत्रं दृष्ट्वा स्त्रीजन-संवृतः अति आसनात् तूर्णं उत्पात ॥१५॥

सरलार्थ—वह राजा दशरथ दूर से ही हाथ जोड़े हुये अपने पुत्र को आते हुये देखकर रानियों से घिरे हुये दुःखी होकर शीघ्र ही आसन से उठ गये ॥१५॥

श्लोक—"सोऽभिदुद्राव वेगेन।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—अभिदुद्राव=दौड़े। वेगेन=वेग से। विशांपतिः=राजा दशरथ। असप्राप्य=प्राप्त न करके। दुःखार्त्तः=दुःख से पीड़ित। मूर्च्छितः=वेहोश ॥१६॥

अन्वय—सः विशांपतिः रामं दृष्ट्वा वेगेन अभिदुद्राव, तं असंप्राप्य दुःखार्तः भुवि मूर्च्छितः पपात ॥१६॥

सरलार्थ—वह राजा दशरथ राम को आते हुये देखकर वेग से दौड़े। राम को मिलने के पूर्व ही दुःख से पीड़ित वे राजा मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े ॥१६॥

श्लोक:—"अथ रामो मुहूर्तस्य ।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ:—मुहूर्तस्य=कुछ समय के पश्चात् । लब्धसंज्ञं=होश में आये हुये । भूत्वा=होकर । शोकार्णवपरिप्लुतम्=शोक सागर में डूबे हुये ॥१७॥

अन्वय:—अथ रामः प्राञ्जलिः भूत्वा मुहूर्तस्य लब्धसंज्ञं शोकार्णव-परिप्लुतम् महीपतिं उवाच ॥१७॥

सरलार्थ:—तत्पश्चात् राम ने हाथ जोड़कर कुछ समय के बाद होश में आये हुये तथा शोक सागर में डूबे हुये राजा दशरथ से कहा ॥१७॥

श्लोक:—"आपृच्छे त्वां महाराज ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ:—आपृच्छे=पूछता हूं । नः=हमारे । प्रस्थितं=रवाना हुये । दण्डकारण्यं=दण्डक वन को । कुशलेन=कुशलता के साथ ॥१८॥

अन्वय:—हे महाराज ! त्वां आपृच्छे, नः सर्वेषां ईश्वरः असि दण्डकारण्यं प्रस्थितं मां त्वं कुशलेन पश्य ॥१८॥

सरलार्थ:—हे महाराज, आप कुशल तो हैं न ? आप हम सब के मालिक हो । दण्डकारण्य के लिये प्रस्थान करने वाले मुझको आप कुश-लता के साथ देखिये ॥१८॥

श्लोक:—"लक्ष्मणं चानुजानीहि ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ:—अनुजानीहि=आज्ञा दीजिये । अन्वेतु=अनुसरण करें । तथ्यैः=सत्य । वार्यमाणौ=रोकने पर भी । न इच्छतः=नहीं चाहते हैं ॥१९॥

अन्वय:—लक्ष्मणं अनुजानीहि सीता मां वनं अन्वेतु बहुभिः तथ्यैः कारणैः वार्यमाणौ न च इच्छतः ॥१९॥

सरलार्थ—आप लक्ष्मण तथा सीता को वन में मेरे साथ जाने के लिये आज्ञा दीजिये । बहुत से सच्चे कारणों से मेरे द्वारा मना करने पर भी ये दोनों रुकना नहीं चाहते हैं ॥१९॥

श्लोक—"अनुजानीहि सर्वान्नः।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—सर्वान्=हम सबको। शोकं=चिन्ता को। उत्सृज्य=छोड़ कर। प्रजापतिः इव = ब्रह्मा की तरह। आत्मजान् = अपने पुत्रों को ॥२०॥

अन्वय—हे मानद! शोकं उत्सृज्य नः सर्वान् प्रजापतिः आत्मजान् इव लक्ष्मणं मां सीतां च अनुजानीहि ॥२०॥

सरलार्थः—हे आदरणीय! आप चिन्ता छोड़कर हम सबको, जैसे ब्रह्मा अपनी सन्तानों को आज्ञा देते हैं उसी तरह लक्ष्मण मुझे और सीता को आज्ञा दीजिये ॥२०॥

श्लोक—"प्रतीक्षमाणमव्यग्रम्।" इत्यादि ॥२१॥

शब्दार्थ—प्रतीक्षमाणं=राह देखते हुये। अव्यग्रं=निश्चिन्त। वनवासाय=वनवास के लिये। संप्रेक्ष्य=देख कर ॥२१॥

अन्वय—जगतीपतेः अनुज्ञां वनवासाय प्रतीक्षमाणम् राघवं अव्यग्रं संप्रेक्ष्य राजा उवाच ॥२१॥

सरलार्थ—दशरथजी की आज्ञा की वनवास के लिये प्रतीक्षा करते हुये राम को निश्चिन्त देखकर राजा दशरथ बोले ॥२१॥

श्लोक—"अहं राघव कैकेय्या।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ—वरदानेन=वरदान से। कैकेय्याः=कैकेयी के। अद्य= आज। धर्मभृतांवर=धर्माचरण करने वालों में श्रेष्ठ ॥२२॥

अन्वय—हे राघव! अहं कैकेय्याः वरदानेन मोहितः अयोध्यायां अद्य त्वम् एव धर्म भृतांवरः रामः ॥२२॥

सरलार्थ—हे रामचन्द्र! मैं कैकेयी के वरदान से मोहित हो गया हूं। अयोध्या में आज तुम ही धर्माचरण करने वालों में सर्वश्रेष्ठ हो ॥२२॥

श्लोक—"प्रत्युवाचाञ्जलिं कृत्वा।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ—अञ्जलिं कृत्वा=हाथ जोड़ कर। वाक्यकोविदः=बोलने में पंडित। वर्षसहस्राय=हजार वर्ष तक ॥२३॥

अन्वय—वाक्यकोविदः अञ्जलिं कृत्वा पितरं प्रत्युवाच हे नृपते! भवान् वर्ष सहस्राय पृथिव्याः पतिः भवतु ॥२३॥

सरलार्थ—बोलने में चतुर राम ने हाथ जोड़कर पिता से कहा, हे राजन् आप ही हजार वर्ष के लिये पृथिवी के स्वामी बनें ॥२३॥

श्लोक—"अहं त्वरण्ये वत्स्यामि।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—अरण्ये=जंगल में। राज्यस्य = राज्य की। काङ्क्षिता= अभिलाषा। नव पञ्चवर्षाणि = चौदह वर्ष तक। विहृत्य=भ्रमण कर ॥२४॥

अन्वयः—अहं तु अरण्ये वत्स्यामि मे राज्यस्य काङ्क्षिता न नवपञ्च-वर्षाणि वनवासे विहृत्य ॥२४॥

सरलार्थः—मैं तो जङ्गल में रहूंगा, मुझे राज्य की अभिलाषा नहीं है। चौदह वर्ष पर्यन्त वनवास में भ्रमण करके मैं पुनः अयोध्या लौटूंगा ॥२४॥

श्लोकः—"पुनः पादौ ग्रहीष्यामि।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थः—पादौ=चरणों को। ग्रहीष्यामि=पकड़ूंगा। युद्धे=युद्ध में। त्वया=तुम्हारे द्वारा। वरः=वरदान। दत्तः=दिया गया है ॥२५॥

अन्वयः—हे नराधिप! ते प्रतिज्ञां पुनः पादौ ग्रहीष्यामि हे वरद! त्वया युद्धे कैकेय्यै वरः दत्तः ॥२५॥

सरलार्थः—हे राजन्! तुम्हारी प्रतिज्ञा का पालन करके मैं फिर से तुम्हारे चरणों में पड़ूंगा। हे नृपश्रेष्ठ! आपके द्वारा युद्ध में कैकेयी को वरदान दिया गया है ॥२५॥

श्लोक—"दीयतां निखिलेनैव।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—दीयताम्=दीजिये। निखिलेनैव=सम्पूर्ण। विमर्शः=सोच-विचार। वसुमती=पृथ्वी। भरताय=भरत को ॥२६॥

अन्वय—हे पार्थिव! निखिलेन एव दीयताम् त्वं सत्यः भव भरताय वसुमती प्रदीयताम् मा विमर्श ॥२६॥

सरलार्थ—हे राजन्! समस्त ऐश्वर्य भरत को दे दीजिये और आप अपनी प्रतिज्ञा को सत्य कीजिये। समस्त भूमण्डल भरत को दीजिये इसमें सोच-विचार करने की आवश्यकता नहीं है ॥२६॥

श्लोक—"नहि मे काङ्क्षितं राज्यम्।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थ—न काङ्क्षितम्=नहीं चाहता हूं। राज्यं=राज्य। आत्मनि=अपने विषय में। निदेशं=आज्ञा को। कर्तुं=करने को ॥२७॥

अन्वयः—आत्मनं प्रियं सुखं वा राज्यं मे न काङ्क्षितम् यथा तव एव निदेशं कर्तुं रघुनन्दनः अस्मि ॥२७॥

सरलार्थः—मैं अपने विषय में प्रिय सुख एव राज्य को नहीं चाहता हूं आपकी ही आज्ञा का पालन करने के लिये मैं वास्तव में रघुनन्दन हूं ॥२७॥

श्लोकः—"अपगच्छतु ते दुःखं।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थः-अपगच्छतु=दूर होवे। बाष्पपरिप्लुतः=आंसुओं से समन्वित। सरितांपतिः=नदियों का स्वामी। न क्षुभ्यति=क्षुब्ध नहीं होता है ॥२८॥

अन्वयः—ते दुःखं अपगच्छतु बाष्परिप्लुतः मा भूत् दुर्धषः सरितांपतिः समुद्रः नहि क्षुभ्यति ॥२८॥

शब्दार्थः—तुम्हारा दुःख दूर हो जावें, आंसूओं से मत घिरजाओ। नदियों का स्वामी महान् सागर कभी भी अपनी मर्यादा को नहीं छोडता है ॥२८॥

श्लोक—"त्वामहं सत्यमिच्छामि।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—त्वां=तुमको। सत्यं=सत्य प्रतिज्ञा वाले। अनृतं=झूठ। सत्येन = सत्य से। सुकृतेन=पुण्य से ॥२६॥

अन्वय—हे पुरुषर्षभ ? त्वां अत्र सत्यं इच्छामि न अनृतम् तव प्रत्यक्षं ते सत्येन सुकृतेन शपे ॥२६॥

सरलार्थ:—हे पुरुषोत्तम! आप प्रतिज्ञा से सच्चे हो ऐसा मैं चाहता हूं न कि आपकी प्रतिज्ञा असत्य हो जावे। मैं तुम्हारे सामने आपके सत्य एवं पुण्य की शपथ खाकर कहता कहता हूं ॥२६॥

श्लोक:—"माचोत्कंठां कृतादेव।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ:—उत्कंठां=अभिलाषा को। रंस्यामहे=रमण करेंगे। प्रशान्त हरिणा कोर्णे=शान्त हरिणों से समन्वित। नाना शकुनि नादिते=अनेक-विध पक्षियों से शब्दायमान ॥३०॥

अन्वय:—वयं प्रशान्त हरिणा कीर्णे नाना शकुनिनादिते रंस्यामहे उत्कंठां मा कुरु ॥३०॥

सरलार्थ—हम सब शान्त हरिणों से समन्वित तथा अनेक विध पक्षियों के कलरव से गुंजित वन में आनन्द करेंगे। आप किसी प्रकार की चिन्ता न करें ॥३०॥

श्लोक:—"एवं स राजा व्यसनाभिपन्न:।" इत्यादि ३१॥

शब्दार्थ:—व्यसनाभिपन्न:=दु:ख को प्राप्त हुआ। तापेन=चिंता से पीड्यमान:=दु:खी। आलिङ्य=भेंट कर। सुविनष्टसंज्ञ:=बेहोश ॥३१॥

अन्वय:—एवं व्यसनाभिपन्न: स: राजा तापेन दु:खेन पीड्यमान: पुत्रं आलिङ्य सुविनष्टसंज्ञ: मोहंगत: किंचित् न चिचेष्ट ॥३१॥

सरलार्थ:—इस प्रकार पुत्र के विरह रूप दु:ख से संतप्त राजा दशरथ चिन्ता से और विरहजन्य दु:ख से दु:खित होता हुआ पुत्र को

आलिंगन देकर बेहोश होता हुआ मूच्छित हो गया और उसे कुछ भी ध्यान नहीं रहा ॥३१॥

श्लोकः—"देव्यः समस्ता रुरुदुः समेताः ।" इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थः—समस्ताः=सब । देव्यः=रानियाँ । नरदेव पत्नीं=कैकेयी को । वर्जयित्वा=छोडकर । रुदन्=रोता हुआ । हाहाकृतं=हाहाकार । बभूव=हुआ ॥३२॥

अन्वय—तां नरदेव पत्नीं वर्जयित्वा समस्ताः देव्यः समेताः रुरुदः सुमन्त्रः अपि रुदन् मूर्च्छां जगाम तत्र सर्वम् हाहाकृतं बभूव ॥३२॥

सरलार्थः—उस महाराज दशरथ की पत्नी कैकेयी को छोड़कर समस्त रानियाँ मिल कर विलाप करने लगीं । सुमन्त्र भी विलाप करते हुये मूच्छित हो गये और उस राजमहल में चारों ओर से हाहाकार ध्वनि सुनाई देती थी ॥३२॥

—०००—

षष्ठः सर्गः

चित्रकूटे भरत राम संवादः

श्लोकः—"ततः पुरुष सिंहानां ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—पुरुषसिंहानां=राम आदि चारों भाईयों की । शोचतां= चिंता करते हुये । रजनी=रात्रि । वृतानां=घिरे हुये । व्यत्यवर्तत= बीत गई ॥१॥

अन्वय—ततः सुहृद्गणैः तैः वृतानां पुरुष सिंहानां सोचताम् एव दुःखेन रजनी व्यत्यवर्तत ॥१॥

सरलार्थ—उसके बाद अपने सुहृदयजनों के बीच में बैठे हुये पुरुष श्रेष्ठ श्रीराम आदि चारों भाइयों की वह रात्रि पिता की मृत्यु के दुःख से

श्लोक:—"रजन्यां सुप्रभातायाम् ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—सुहृद्वृता:=मित्रों से घिरे हुये । सुप्रभातायां=प्रात:-कालीन । मन्दा किन्यां=गंगा में । हुतं=होम । जप्यं=जप । उपागमन्=पास गये ॥२॥

अन्वय—सुहृद्वृता: ते भ्रातर: सुप्रभातायां रजन्यां, मन्दाकिन्यां हुतं जप्यं कृत्वा रामम् उपागमन् ॥२॥

सरलार्थ—सवेरा होने पर भरत आदि तीनों भाई अपने इष्ट-मित्रों के साथ मन्दाकिनी के तट पर गये और स्नान होम एवं जप आदि आदि करके पुन: श्रीराम के पास लौट आये ॥२॥

श्लोक—"तूष्णीं ते समुपासीना: ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—सुहृन्मध्ये=मित्रों के बीच में ! मामिका=मेरी । सान्त्विता=संतुष्ट कर दिया । मम=मुझे । दत्तं = दिया ॥३॥

अन्वय—ते तूष्णीं समुपासीना: कश्चित् किंचित् न अब्रवीत् सुहृन्मध्ये भरत: रामं वचनं अब्रवीत् ॥३॥

सरलार्थ:—वे चारों भाई चुपचाप बैठे थे कोई किसी से कुछ भी बात चीत नहीं करता था । उस समय मित्रजनों के बीच में बैठे हुये भरत ने श्रीराम से कहा ॥३॥

श्लोक—"सान्त्विता मामिका माता ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ— तत्=उस राज्य को । ददामि=देता हूं अकण्ट कम्=निर्विघ्न । राज्यं=राज्य को । भुङ्क्ष्व=भोगिये ॥४॥

अन्वय—मामिका माता सान्त्विता मम इदं राज्यम् दत्तम् अहं तत् तव एव ददामि अकण्टकं राज्यं भुङ्क्ष्व ॥४॥

सरलार्थ—हे आर्य ! पिताजी ने वरदान देकर मेरी माता को सन्तुष्ट कर दिया और माता ने यह राज्य मुझे दे दिया; अब मैं अपनी ओर से इसे आपकी ही सेवा में अर्पित करता हूं । आप ही इसका पालन कीजिये ॥४॥

श्लोक—"श्रेण्यस्त्वां महाराज।" इत्यादि

शब्दार्थ—श्रेण्यः=प्रजा। त्वां=तुमको। प्रतपन्तं=तपते हुए। राज्य स्थितम्=राज्यसिंहासन पर आसीन। अरिंदमं=शत्रुओं का दमन करने वाले ॥५॥

अन्वय—हे महाराज! अग्र्याः श्रेण्यः त्वां सर्वशः प्रतपन्तं आदित्यं इव अरिंदमं राज्यस्थितं पश्यन्तु ॥५॥

सरलार्थ—हे महाराज! समाज के मुखिया एवं आपके प्रजाजन प्रकाशमान सूर्य की तरह शत्रुओं का दमन करने वाले आपको सिंहासनासीन देखना चाहते हैं ॥५॥

श्लोक—"तस्य साध्वनुमन्यन्त।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—नागराः=नगरनिवासी। तस्य=भरत की। विविधाजनाः=भिन्न २ लोगों ने। साध्वनुमन्यत=भलीभांति अनुमोदन किया ॥६॥

अन्वय—रामं प्रति अनुयाचतः तस्य भरतस्य वचः श्रुत्वा नागराः विविधाजनाः साधु अमन्यत ॥६॥

सरलार्थः—इस प्रकार श्रीराम से राज्यग्रहण के लिये प्रार्थना करते हुये भरजी की बात सुनकर नगर के भिन्न भिन्न मनुष्यों ने उसका भली भांति अनुमोदन किया ॥६॥

श्लोकः—"तमेवं दुःखितं प्रेक्ष्य।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—दुःखितं=दुःखी। प्रेक्ष्य=देखकर। विलपन्तं=विलाप करते हुए। कृतात्मा=सुशिक्षितबुद्धि। समाश्वासयत्=आश्वासन दिया ॥७॥

अन्वयः—आत्मवान् कृतात्मा रामः यशस्विनम् विलपन्तं तं एवं दुःखितं प्रेक्ष्य समाश्वसयत् ॥७॥

सरलार्थ—तब अत्यन्त धीर एवं पवित्र अन्तःकरण वाले भगवान् श्री रामने यशस्वी और विलाप करते हुये भरत को दुःखी देख कर इस प्रकार समझाया ॥७॥

राम उवाचः—

श्लोक—"नात्मनः कामकारो हि।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थः—अनीश्वरः=असमर्थ, परतंत्र। न कामकारः=स्वेच्छाचारी नहीं है। कृतान्तः=मृत्यु, काल। इतश्चेतरतः=इधर उधर। परिकर्षति=खींचता है ॥८॥

अन्वयः—अयं पुरुषः आत्मनः कामकारः न अनीश्वरः इतश्चेतरतः कृतान्तः एनं परिकर्षति ॥८॥

सरलार्थः—इस संसार में मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार कुछ नहीं कर सकता; क्योंकि यह पराधीन होने के कारण असमर्थ है। काल इसे इधर उधर खींचता है ॥८॥

श्लोकः—"सर्वे क्षयान्ता निचयाः।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थः—सर्वे=सब। निचय। समुच्चये। पतनान्ताः=पतन ही अन्त होता है। संयोगाः=संयोग। विप्रयोगान्ताः=वियोग अन्त वाले होते है। जीवितम्=जीवन। मरणान्तं=मरण अन्त वाला ॥९॥

अन्वय—सर्वे निचयाः क्षयान्ताः समुच्चयाः पतनान्ताः भवन्ति। संयोगाः विप्रयोगान्ताः जीवितम् मरणान्तं भवति ॥९॥

सरलार्थ—सभी निचय क्षय अन्त वाले होते हैं और सभी प्रकार का संग्रह भी पतनान्त होता है। संयोग वियोग अन्तवाला होता है तथा जीवन मृत्यु अन्तवाला होता है ॥९॥

श्लोक—"यथा फलानां पक्वानाम्।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—पक्वानां=पके हुये। अन्यत्र=कहीं पर। पतनात् भयं न=गिरने से भय नहीं है। मरणात् भयं न=मृत्यु से भय नहीं है १०

अन्वय—यथा पक्वानां फलानां अन्यत्र पतनात् भयं न एवं जातस्य नरस्य अन्यत्र मरणात् भयं न ॥१०॥

सरलार्थ—जिस प्रकार पके हुये फलों के कहीं पर गिरने से कोई भय नहीं है उसी प्रकार उत्पन्न हुये मानव का एक दिन कहीं पर नाश अवश्यं भावी हैं अतः उसे भी मृत्यु भय नहीं रखना चाहिये ॥१०॥

श्लोक—"अत्येति रजनी या तु ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—रजनी=रात । अत्येति=बीत जाती है । न प्रतिनिवर्तते=नहीं लौटती हैं । उदकार्णवम्=सागर में । याति=मिलती है ॥११॥

अन्वय—या रजनी अत्येति सा तु न प्रतिनिर्वतते पूर्णा यमुना-उदकार्णवं समुद्रं याति एव ॥११॥

सरलार्थ—जिस प्रकार जलराशि से परिपूर्ण यमुना समुद्र में मिल जाती है परन्तु वहां से वापिस लौटती नहीं है उसी प्रकार दिनरात लगातार बीत रहे हैं और संसार में प्राणियों की आयु का तीव्रगति से नाश कर रहे हैं ॥११॥

श्लोक—"वयसः पतमानस्य ।" इत्यानि ॥१२॥

शब्दार्थ—पतमानस्य=नष्ट होती हुई । वयसः=उम्रका । अनिवर्तिनः=नहीं लौटने वाले । स्त्रोतसः=प्रवाह का । सुखे=सुखमें । नियोक्तव्यः=लगाना चाहिये । सुख भाजः=सुख भोगने वाली ॥१२॥

अन्वय—पतमानस्य वयसः अनिवर्त्तिनः स्त्रोतसः वा आत्मा सुखे नियोक्तव्यः प्रजाः सुख। भाजः स्मृताः ॥१२॥

सरलार्थ—इस जगह में कोई भी प्राणी भावी वश प्राप्त होने वाले जन्म मरण का उल्लङ्घन नहीं कर सकता; जिसको लांघने का कोई उपाय नहीं है । अवस्था दिन दिन ढल रही है, वह लौटकर आ नहीं सकती यह सोच कर आत्मा को कल्याण के साधन के लिये धर्म में लगानी चाहिये; क्योंकि सभी लोग अपना कल्याण चाहते हैं ॥१२॥

श्लोक—"स स्वस्थो भव मा शोको ।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—स्वस्थः=निश्चिन्त । भव=हो जाओ । शाको मा=चिता-न करो यात्वा=जाकर। आवस=निवास करो । तां पुरीं=उस अयोध्या नगरी को । वशिना=जितेन्द्रिय पिता के द्वारा ।।१३।।

अन्वय—स्वस्थः भव शोकः मा तां पुरीं यात्वा आवस हे वदतां वर ! तथा वशिना पित्रा नियुक्तः असि ।।१३।।

सरलार्थ—हे भरत ! तुम शान्त हो जाओ, शोक न करो और यहां से जाकर अयोध्या में निवास करो; क्योंकि जितेन्द्रिय पिताजी की तुम्हार लिये ऐसी ही आज्ञा है ।।१३।।

श्लोक—"यत्राहमपि तेनैव नियुक्तः ।" इत्यादि ।।१४।।

शब्दार्थ—यत्र=जिस दण्डकारण्य में । पुण्यकर्मणा=पवित्र कर्मवाले । शासनम्=आज्ञा । करिष्यामि=पालन करूंगा १४

अन्वय—पुण्यकर्मणा तेन एव अहम् अपि यत्र नियुक्तः तत्र एव अहं आत्तस्य पितुः शासनं करिष्यामि १४

शरलार्थ—पुण्य कर्मा पिताजी ने मुझे जिस दण्डकारण्य में रहने का आदेश दिया है, वहीं रहकर मैं उन पूज्य पिताजी की आज्ञा का पालन करूंगा ।।१५।।

श्लोक—"न मया शासनं तस्य ।" इत्यादि ।।१५।।

शब्दार्थ—मया=मेरे द्वारा । तस्य=पिताजी का । शासनं=आदेश । त्यक्तुं=छोडने के लिए । न्याय्यम्=उचित है । मान्यः=आदरणीय १५

अन्वय—हे अरिंदम ! मया तस्य शासनं त्यक्तुं न न्याय्यम् । सः त्वया अपि सदा मान्यः सः वै बन्धुः सः नः पिता ।।१५।।

सरलार्थ—हे भरत ! मेरे द्वारा पिताजी की आज्ञा का उल्लंघन किया जाना कदापि उचित नहीं है । वे तुम्हारे लिये भी सर्वदा सम्मान के योग्य हैं; क्योंकि वे ही हमारे हितैषी बन्धु और जन्मदाता थे ।।१५।।

श्लोकः—"एवमुक्त्वा तु विरते।" इत्यादि ॥१६॥

भरत उवाच—

शब्दार्थः—अर्थवत्=अर्थ गंभीर। वचनं=वचन। उक्त्वा=कहकर। विरते=चुप हो जाने पर। धार्मिकः=धर्मपरायण। चित्रं=अद्भुत, विशिष्ट वचन ॥१६॥

अन्वयः—अर्थवत् एवं वचनं उक्त्वा रामे विरते सति धार्मिकः भरतः धार्मिकं चित्रं वचः उवाच ॥१६॥

सरलार्थः—महात्मा श्री रामचंद्रजी अपने छोटे भाई भरत से पिता की आज्ञा का पालन कराने के उद्देश्य से अर्थयुक्त वचन कह कर चुप हो गये। तव धर्म परायण भरत ने श्रीराम से इस प्रकार अद्भुत वचन कहा ॥१६॥

श्लोकः—"अमरोपमसत्त्वस्त्वम्।" ॥१७॥

शब्दार्थ—अमरोपमसत्वः=देवताओं की भांति सत्व गुण से युक्त। सत्यसङ्करः=सत्य प्रतिज्ञा वाले। सर्वः=भूत भविष्य जानने वाले ॥१७॥

अन्वय—हे राघव! त्वं अमरोपमसत्वः= महात्मा सत्यसङ्करः सर्वज्ञः सर्वदर्शी बुद्धिमान् च असि ॥१७॥

सरलार्थ—हे राम! आप देवताओं की भांति सत्त्वगुण से युक्त, महात्मा, सत्य प्रतिज्ञ, सर्वज्ञ, सव के साक्षी और बुद्धिमान् हैं ॥१७॥

श्लोक—"प्रोषिते मयि यत्पापम्।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—प्रोषिते=विदेश में चले जाने पर। मत्कारणात्=मेरे लिये। क्षुद्रया=उस नीच विचार वाली। मे=मुझे। अनिष्टं=अभीष्ट नहीं है। प्रसीदतु=प्रसन्न हो जाइये ॥१८॥

अन्वय—प्रोषिते मयि क्षुद्रया मात्रा मत्कारणात् यत्पापं कृतम् तत् मे अनिष्टं भवान् मम प्रसीदतु ॥१८॥

सरलार्थ—मेरे नन्हिहाल में चले जानेपर, उस समय नीच विचार रखने वाली मेरी माता ने मेरे लिये जो पाप कर डाला, मुझे अभीष्ट नहीं है। अतः आप उसे क्षमा करके मुझ पर प्रसन्न हों ॥१८॥

श्लोक—धर्मबन्धेन बद्धोऽस्मि। इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—धर्मबन्धेन=धर्म के बन्धन से। बद्धः अस्मि=बंधा हुआ हूं। इमां=कैकेयी को। न हन्मि=नहीं मारता हूं। तीव्रेण दण्डेन=कठोर दण्ड से। दण्डार्हाम्=दण्डनीय ॥१९॥

अन्वय—इह धर्मबन्धेन बद्धः अस्मि तेन इमां दण्डार्हां पापकारिणीम् मातरं तीव्रेण दण्डेन न हन्मि ॥१९॥

सरलार्थ—मैं धर्म के बंधन में बंधा हुआ हूं, इसीलिये इस पापाचारिणी एवं दण्डनीय माता को मैं कठोर दण्ड देकर मार नहीं डालता ॥१९॥

श्लोक—"गुरुः क्रियावान् वृद्धश्चेति।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—गुरुः=मार्गदर्शक। क्रियावान्=आचार को जानने वाले। संसदि=सभा में। न परिगर्हे=निन्दा नहीं करता हूं। दैवतं=देव सदृश ॥२०॥

अन्वय—गुरुः क्रियावान् पिता वृद्धः राजा प्रेतः अहं संसदि दैवतं तातं न परिगर्हे ॥२०॥

सरलार्थ—गुरु आचार को जानने वाले बूढे पिता दशरथजी परलोकवासी हो गये हैं अतः मैं इस सभा में देवतुल्य पिताजी की निन्दा नहीं करता हूं ॥२०॥

श्लोक—"को हि धर्मार्थयो र्हीनम्।" इत्यादि ॥२१॥

शब्दार्थ—धर्मार्थयोः=धर्म और अर्थ से। हीनं=रहित। ईदृशं=ऐसा। किल्बिषम्=पाप। चिकीर्षुः=करने की इच्छा वाला। धर्मज्ञः=धर्म जानने वाले ॥२१॥

अन्वय—कः धर्मज्ञः धर्मवित् स्त्रियः प्रियं चिकीर्षुः सन् धर्मार्थयोः हीनं ईदृशं किल्बिषं कर्म कुर्यात् ॥२१॥

सरलार्थ—कौन धर्मज्ञ तथा धर्मपरायण ऐसा मनुष्य है जो धर्म को जानते हुये भी स्त्री का प्रिय करने की इच्छा से ऐसा धर्म और अर्थ से रहित निन्दित पाप कर सकता है ॥२१॥

श्लोक—"अन्तकाले हि भूतानि ।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ—अन्तकाले=मृत्यु के समय पर। भूतानि=प्राणी। मुह्यन्ति=बुद्धि भ्रष्ट होती है। पुरा श्रुतिः=प्राचीन कहावत। सा श्रुतिः=वह किंवदन्ती ॥२२॥

अन्वय—अन्तकाले भूतानि मुह्यन्ति इति पुराश्रुतिः सा श्रुतिः एवं कुर्वता राजा लोके सत्यतां कृता ॥२२॥

सरलार्थ—संसार में एक प्राचीन किंवदन्ती है कि अन्तकाल में सब प्राणियों की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। राजा दशरथ ने ऐसा कठोर कर्म करके उस किंवदन्ती को सत्य कर दिया ॥२२॥

श्लोक—"पितु हि समतिक्रान्तम् ।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ—साधु मन्यते=समर्थन करता है। लोके=संसार में। समतिक्रान्तं=उल्लङ्घन किया है ॥२३॥

अन्वय—हि पितुः समतिक्रान्तं यः पुत्रः साधु मन्यते लोके तत् अपत्यं मतम्; अतः अन्यथा विपरीतम् ॥२३॥

सरलार्थ—पिताजी ने क्रोध, मोह और साहस के कारण ठीक समझ कर जो धर्म का उल्लङ्घन किया है, उसका आप संशोधन करदें। आप पिता के सत्पुत्र हैं अतः उनके अनुचित कर्म का समर्थन न कीजिये ॥२३॥

श्लोक—"कैकेयीं मां च तातं च ।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थः—तातं = पिताजी को। पौरजानपदान्=पुरवासी तथा राष्ट्र की प्रजा को। त्रातुं=रक्षा करने के लिये ॥२४॥

अन्वय—कैकेयीं मां तातं सुहृदः नः बान्धवान् सर्वान् पौर जानपदान् भवान् त्रातु सर्वम् ॥२४॥

सरलार्थ—कैकेयी, मैं, पिताजी, मित्रगण, बन्धुबान्धव, पुरवासी तथा राष्ट्र की प्रजा इन सबकी रक्षा के लिये आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करें ॥२४॥

श्लोक—"क्व चारण्यं क्व च क्षात्रं।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थ—अरण्यं=वनवास। क्षात्रं=क्षत्रिय धर्म। जटाः=जटा धारण व्याहतं=परस्पर विरूद्ध ॥२५॥

अन्वय—क्व अरण्यं क्व च क्षात्रं क्व जटाः क्व च पालनम् भवान् ईदृशं व्याहतं कर्म कर्तुं न अर्हति ॥२५॥

सरलार्थः—कहां वनवास और कहाँ क्षात्र धर्म, कहाँ जटा धारण और कहाँ प्रजा का पालन। ऐसे परस्पर विरोधी कर्म आपको नहीं करने चाहिये ॥२५॥

श्लोक—"अथ क्लेशजमेव त्वं।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—क्लेशजं=कष्ट साध्य। धर्मं चरितुं=धर्म का आचरण करने के लिये। पालयन्=पालन करते हुये। क्लेशं=कष्ट को। आप्नुहि=प्राप्त करो ॥२६॥

अन्वयः—अथ त्वं क्लेशजम् एव धर्मं चरितुं इच्छसि धर्मेण चतुर-वर्णान् पालयन् क्लेशं आप्नुहि ॥२६॥

सरलार्थ—यदि आप क्लेश साध्य धर्म का ही आचरण करना चाहते हैं, तो धर्मानुसार चारों वर्णों का पालन करते हुये कष्ट उठाइये ॥२६॥

श्लोकः—"श्रुतेन बालः स्थानेन।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थः—श्रुतेन=विद्या में। स्थानेन=पद में। जन्मना=आयु में भवति तिष्ठति=आपके रहने पर। पालयिष्यामि=पालन करूंगा ॥२७॥

अन्वय—श्रुतेन, स्थानेन जन्मना भवतः अहम् बालः सः भवति तेष्ठति भूमिं कथं पालयिष्यामि ॥२७॥

सरलार्थः—विद्या पद और आयु में मैं आपसे बाल हूं अतः आपके रहने पर वह मैं भूमि का कैसे पालन करूंगा ॥२७॥

श्लोकः—"आक्रोशं मम मातु श्च ।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थः—मम=मेरी । मातुः=माता का । आक्रोशं=कलङ्क को प्रमृज्य=धोकर । किल्विपात्=पाप से । रक्ष=बचाइये ॥२८॥

अन्वयः—हे पुरुषर्षभ ! मम मातुः आक्रोशं प्रमृज्य किल्विपात् अद्य तत्र भवन्तं पितरं रक्ष ॥२८॥

सरलार्थः—हे पुरुषश्रेष्ठ ! आज आप मेरे तथा माता के कलङ्क को धोकर पूज्य पिताजी को इस निन्दा से बचाइए ॥२८॥

श्लोकः—"शिरसा त्वाऽभियाचे ।" इत्यादि ॥२९॥

शब्दार्थः—शिरसा=मस्तक से । त्वा=तुम को । अभियाचे=याचना करता हूं । कुरुष्व=कीजिये । सर्वेषु भूतेषु=सब प्राणियों में ॥२९॥

अन्वय—अहं शिरसा त्वा अभियाचे, महेश्वरः सर्वेषु भूतेषु इव मयि वान्धवेषु च करुणां कुरुष्व ॥२९॥

सरलार्थः—मैं आपके चरणों में मस्तक नवाकर याचना करता हूं । जिस तरह भगवान् शङ्कर सब प्राणियों पर दया करते हैं उसी प्रकार मेरे पर तथा सब बन्धुओं पर दया कीजिए ॥२९॥

श्लोक—"अथवा पृष्ठतः कृत्वा ।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ—पृष्ठतः कृत्वा=मेरी प्रार्थना ठुकराकर । इतः=यहां से । भवता सार्धम्=आपके साथ ॥३०॥

अन्वय—अथवा पृष्ठतः कृत्वा इतः भवान् वनं एव गमिष्यति अहं अपि भवता सार्धं गमिष्यामि ॥३०॥

सरलार्थ—यदि आप मेरी प्रार्थना को ठुकराकर यहां से वन गमन ही करेंगे तो मैं भी आपके साथ वनको चलूंगा ॥३०॥

श्लोक—"पुनरेवं ब्रुवाणं तम्।" इत्यादि ॥३१॥

शब्दार्थ—एवं ब्रुवाणं=इस प्रकार कहने वाले। लक्ष्मणाग्रजः=राम। प्रत्युवाच=प्रत्युत्तर देने लगे। सुसत्कृतः=संमानित ॥३१॥

अन्वय—पुनः एवं ब्रुवाणं तं भरतं ततः ज्ञातिमध्ये सुसत्कृतः श्रीमान् लक्ष्मणाग्रजः प्रत्युवाच ॥३१॥

सरलार्थ—फिर जब इस प्रकार प्रार्थना करते हुए भरत को कुटुम्बी-जनों के द्वारा सम्मानित श्री राम ने उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया ॥३१॥

राम उवाच—

श्लोक—"पुरा भ्रातः पिता नः।" इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थ—पुरा=प्राचीन समय में। समुद्वहन्=विवाह करते हुये। मातामहे=नाना को। समाश्रौषीत्=प्रतिज्ञा की थी। अनुत्तमम्=श्रेष्ठ। राज्यशुल्कं=राज्य देने की शर्त ॥३२॥

अन्वय—हे भ्रातः पुरा नः पिता ते मातरं समुद्वहन् मातामहे अनुत्तमं राज्य शुल्कं समा श्रौषीत् ॥३२॥

सरलार्थ—हे भैय्या भरत! पहले हमारे पिताजी ने तुम्हारी माता के साथ विवाह करते हुए तुम्हारे नाना से (कैकेयी के पुत्र को) राज्य देने की शर्त की थी ॥३२॥

श्लोक—"देवासुरे च संग्रामे।" इत्यदि ॥३३॥

शब्दार्थ—संग्रामे=युद्ध में। देवासुरे=देव और दैत्यों। पार्थिवः=राजा। आराधितः= सेवा किये गये। संप्रहृष्टः=संतुष्ट। वरं=वरदान को। ददौ=दिया ३३

सरलार्थ—इसके बाद देवासुर संग्राम में तुम्हारी माता ने महाराज दशरथ की बड़ी सेवा की। इससे संतुष्ट होकर राजाने तुम्हारी माता को वरदान दिया ॥३३॥

श्लोक:—"ततः सा सम्प्रतिश्राव्य ।" ॥३४॥

शब्दार्थ:—संप्रतिश्राव्य=प्रतिज्ञा करवा कर। वर वर्णिनी=श्रेष्ठवर्ण वाली। द्वौ वरौ=दो वरदान। अयाचत=मांगे ३४

अन्वय—ततः वर वर्णिनी यशस्विनी सा तव माता, संप्रतिश्राव्य द्वौ वरौ नर श्रेष्ठं अयाचत ॥३४॥

सरलार्थ:—उसके बाद श्रेष्ठ वर्णवाली तुम्हारी यशस्विनी माता कैकेयी ने उसकी पूर्ति के लिये प्रतिज्ञा कराकर पिताजी से दो वरदान मांगे ॥३४।

श्लोक:—"तव राज्यं नरव्याघ्र ।" ॥३५॥

शब्दार्थ:—मम=मेरा। प्राव्रजनं=वनवास। नियुक्तः=प्रेरित। तस्यै=कैकेयी को। प्रददौ=दिये।

अन्वय:—हे नरव्याघ्र! तव राज्यं तथा मम प्राव्रजनं राजा तया नियुक्तः तस्यै तत् वरं प्रददौ ३५

सरलार्थ:—हे नर श्रेष्ठ! तुम्हारे लिये राज्य और मेरे लिये वनवास। पिताजी ने उनकी प्रेरणा से वे दोनों वरदान पूरे कर दिये ॥३५॥

श्लोक:—"तेन पित्राऽहमप्यत्र ।" इत्यादि ॥३६॥

शब्दार्थ—पित्रा=पिताजी के द्वारा। नियुक्तः=आदेश दिया गया। वरदानिकम्=वरदान सम्बन्धि ॥३६॥

अन्वय—हे पुरुषर्षभ! तेन पित्रा नियुक्तः अहम् अपि वरदानिकं चतुर्दश वर्षाणि वने वासं नियुक्तः अस्मि ॥३६॥

सरलार्थ:—हे पुरुष श्रेष्ठ! उन पिताजी की ओर से वरदान सम्बन्धि मुझे चौदह वर्ष तक वन में रहने का आदेश प्राप्त हुआ है ॥३६॥

श्लोक:—"सोऽहं वनमिदं प्राप्तः ।" इत्यादि ॥३७॥

शब्दार्थ—निर्जनं=सूनसान। लक्ष्मणान्वितः=लक्ष्मण के सहित। अप्रतिद्वन्दः=सुख दुःख आदि द्वन्द्वों के प्रति विमुख होकर। सत्यवादे=सत्य की रक्षा में ॥३६॥

अन्वयः—सः अहं सीतया लक्ष्मणान्वितः इदं निर्जनं वनं प्राप्तः अप्रति द्वन्द्वः पितुः सत्यवादे स्थितः॥३७॥

सरलार्थः—वह मैं सीता और लक्ष्मण के साथ इस निर्जन जंगल में चला आया। सुख दुःख आदि प्रति द्वन्द्वों से विमुख होकर पिताजी के सत्य की रक्षा में स्थित रहूंगा ॥३७॥

श्लोक—"भवानपि तथेत्येव।" इत्यादि ॥३८॥

शब्दार्थः—क्षिप्रं=जल्दी। अभिषिञ्चनात्=अभिषेक करार ॥३८॥

अन्वयः—भवान् अपि तथा इति हे राजेन्द्र! क्षिप्रं एव अभिषिञ्चनात् पितरं सत्यवादिनं कर्तुं अर्हति ॥३८॥

सरलार्थ—तुम भी उनकी आज्ञा मान कर उन्हें सत्यवादी बनाओ और जहां तक संभव हो राज्य पर शीघ्र अपना अभिषेक करवालो ॥३८॥

श्लोक—"सत्यमेवानृशंसं च।" इत्यादि ॥३९॥

शब्दार्थ—सत्यम्=सत्य का पालन। अनृशंसं=दयारूप धर्म। सनातनम्=प्राचीन। सत्यात्मकं=सत्यस्वरूप। सत्ये=सत्य में ॥३९॥

अन्वय—सत्यम् एव अनृशंसं राजवृत्तं सनातनं भवति। तस्मात् राज्यं सत्यात्मकं लोकः सत्ये प्रतिष्ठितः ॥३९॥

सरलार्थ—सत्य का पालन ही राजाओं का दया प्रधान धर्म है—सनातन आचार है, अतः राज्य सत्यस्वरूप है। सत्य में ही संपूर्ण जगत् प्रतिष्ठित है ॥३९॥

श्लोक—"भूमिः कीर्तिर्यशो लक्ष्मीः।" इत्यादि ॥४०॥

शब्दार्थः—भूमिः=जमीन। लक्ष्मीः=राजलक्ष्मी। प्रार्थयन्ति=स्वीकार करते हैं। समनुवर्तन्ते=अनुकरण करती है। भजेत्=अंगीकार करें ॥४०॥

अन्वय—भूमिः कीर्तिः यशः लक्ष्मीः पुरुषं प्रार्थयन्ति सत्यं समनुवर्तन्ते ततः सत्यमेव भजेत् ॥४०॥

सरलार्थ:—भूमि कीर्ति यश और राजलक्ष्मी पुरुष का वरण करती है और सत्य का ही अनुसरण करती है इसलिये मनुष्य को चाहिये कि सत्य का ही सेवन करें ॥४०॥

भरत उवाच—

श्लोक:—"त्रस्तगात्रस्तु भरत: ।" इत्यादि ॥४१॥

शब्दार्थ:—त्रस्तगात्र=भयभीत शरीर के अवयव वाला । सज्जमानया=सुशोभित । कृताञ्जलि:=हाथ जोड कर ॥४१॥

अन्वय:—त्रस्तगात्र: स: भरत: लज्जमानया वाचा कृताञ्जलि: सन् इदं वाक्य पुन: राघवं अब्रवीत् ॥४१॥

सरलार्थ—भयभीत शरीरवाला वह भरत सुशोभित वाणी से हाथ जोड़कर यह वचन फिर से राम को कहने लगे ॥४१॥

श्लोक—"रक्षितुं सुमहद्राज्यम् ।" इत्यादि ॥४२॥

शब्दार्थ—रक्षितुं=रक्षा करने के लिये । एक:=एकाकी । रञ्जयितुं=प्रसन्न करने के लिये । पौरजानपदान्=नगरवासी तथा राष्ट्र निवासियों को ॥४२॥

अन्वय:—अहम् एक: सुमहत् राज्यं रक्षितुं तथा सदानुरक्तान् पौरजानपदान् रञ्जयितुं न उत्सहे ॥४२॥

सरलार्थ:—मैं अकेला इतने बड़े राज्य की रक्षा करने के लिये तथा अनुरक्त प्रजाजनों को प्रसन्न करने के लिये समर्थ नहीं हूं ॥४२॥

श्लोक:—'इदं राज्यं महाप्राज्ञ ।" इत्यादि ॥४३॥

शब्दार्थ:—प्रतिपद्य=स्वीकार करके । स्थापय=स्थापना करो । परिपालने=पालन करने में ॥४३॥

अन्वय:—हे महा प्राज्ञ ! इदं राज्यं प्रतिपद्य स्थापय, हे काकुत्स्थ ? लोकस्य परिपालने शक्तिमान् असि ॥४३॥

सरलार्थ—हे महान् विद्वान् ! इस महान् राज्य को स्वीकार करके स्थापना करिये । हे राम ! तुम ही संसार का पालन करने में शक्तिशाली हो ॥४३॥

श्लोक—एवमुक्त्वापतद् भ्रातुः ।' इत्यादि ॥४४॥

शब्दार्थ—पादयोः=पैरों में । उक्त्वा=कहकर । अपतत्=गिर गये । भृशं=अत्यन्त ।' संप्रार्थयमास=प्रार्थना की ॥४४॥

अन्वय—तदा भरतः एवम् उक्त्वा भ्रातुः पादयोः अपतत् हे राघव ! इति प्रियं वदन् भृशं संप्रार्थयामास ॥४४॥

सरलार्थ—तब भरतजी इस प्रकार कहकर भाई राम के चरणों में गिर पड़े । हे राम ! इस प्रकार मधुर बोलते हुये बार-बार प्रार्थना करने लगे ॥४४॥

श्लोक—"तमङ्के भ्रातरं कृत्वा ।" इत्यादि ॥४५॥

शब्दार्थ—अङ्के=गोद में । नलिनपत्राक्षं=कमल तुल्य नेत्र वाले । मत्तहंसस्वरः=मधुर हंस के तुल्य स्वर वाले ॥४५॥

अन्वय—मत्तहंसस्वरः रामः स्वयं श्यामं नलिनपत्राक्षं तं भ्रातरं अङ्के कृत्वा वचनम् अब्रवीत् ॥४५॥

सरलार्थ—हंस के समान मधुर कण्ठ वाले श्री राम खुद श्याम और कमल के तुल्य नेत्र वाले उस भाई भरत को गोद में बैठाकर कहने लगे ॥४५॥

श्लोक—"लक्ष्मीश्चंद्रादपेयाद्वा ।" इत्यादि ॥४६॥

शब्दार्थ—अपेयात्=चली जावे, दूर हो जावे । हिमवान्=हिमालय । वेलां=मर्यादा को । अतीयात्=उल्लङ्घन करे ॥४६॥

अन्वय—लक्ष्मीः चंद्रात् अपेयात् हिमवान् वा हिमं त्यजेत् सागरः वेलां अतीयात् अहं पितुः प्रतिज्ञां न त्यक्ष्यामि ॥४६॥

सरलार्थ—चन्द्रमा से उसकी प्रभा अलग हो जाय, हिमालय हिम का परित्याग करदें अथवा समुद्र अपनी सीमा को लांघकर आगे बढ़ जाय; किन्तु मैं पिता की प्रतिज्ञा नहीं तोड़ सकता ॥४६॥

श्लोक—कामाद्वा तात लोभाद्वा । इत्यादि ॥४७॥

शब्दार्थ—कामात्=इच्छा से, कामना से। लोभात्=लालच से। तुभ्यं = तुम्हारे लिये। मनसि = मन में। वर्तितव्यम् = बरताव करना चाहिये ॥४७॥

अन्वय—हे तात ! मात्रा कामात् लोभात् वा इदं तुभ्यं कृतम्, तत् मनसि न कर्तव्यम् मातृवत् वर्तितव्यम् ॥४७॥

सरलार्थ—माता कैकेयी ने कामना से अथवा लोभवश तुम्हारे लिये यह जो कुछ किया है, उसको मन में न लाना और उसके प्रति सदा वैसा ही बर्ताव करना, जैसा अपनी पूजनीया माता के प्रति करना उचित है ॥४७॥

पादुका प्रदानम्

श्लोक—एवं ब्रुवाणं भरतम् । इत्यादि ॥४८॥

शब्दार्थ—तेजसा=प्रकाश से। आदित्यसंकाशं=सूर्य के तुल्य। प्रतिपत्=प्रतिपदा। ब्रुवाणं=बोलते हुये को ॥४८॥

अन्वय—भरतः तेजसा आदित्यसंकाशं प्रतिपच्चन्द्रदर्शनम् एवं ब्रुवाणं कौसल्यासुतं अब्रवीत् ॥४८॥

सरलार्थ—भरत तेज से सूर्य के समान और प्रदिपदा के चांद के समान मनोहर इस प्रकार बोलते हुए राम कहने लगे ॥४८॥

श्लोक—अधिरोहार्य पादाभ्यां । इत्यादि ॥४९॥

शब्दार्थ—पादाभ्यां=पैरों से। पादुके=खड़ाऊं। हेम भूषिते=सुवर्ण से सुशोभित। सर्वलोकस्य=संसार का। योग क्षेमं=अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति योग कहलाता है और प्राप्त वस्तु की रक्षा क्षेम ॥४९॥

अन्वय—पादाभ्यां हेम भूषिते पादुके अधिरोहार्य, एते हि सर्वलोकस्य योगक्षेमं विधास्यतः ॥४९॥

सरलार्थ—ये दो स्वर्ण भूषित पादुकाएं आपके चरणों में अर्पित हैं। आप इन पर अपने चरण रक्खें। ये ही सम्पूर्ण जगत् के योग क्षेम का निर्वाह करेंगी ॥४९॥

श्लोक—सोऽधिरुह्य नरव्याघ्रः। इत्यादि ॥५०॥

शब्दार्थ—नरव्याघ्रः=नर केसरी। व्यवमुच्य=निकाल कर। सुमहातेजाः=महान् तेजस्वी। प्रायच्छत=देदी ॥५०॥

अन्वयः—सुमहातेजाः सः नरव्याघ्रः अधिरुह्य पादुके व्यवमुच्य भरताय महात्मने प्रायच्छत् ॥५०॥

सरलार्थः—नर श्रेष्ठ श्री रामचन्द्रजी ने वे पादुकाएं पैरों के नीचे रखकर फिर उन्हें हटा दिया और उन्हें महात्मा भरत को दे दिया ॥५०॥

श्लोक—सः पादुके संप्रणम्य। इत्यादि ॥५१॥

शब्दार्थ—संप्रणम्य = प्रणाम कर। जटा चीरधरः = जटा और वल्कल वस्त्रधारी। अब्रवीत्=बोले ॥५१॥

अन्वय—स पादुके संप्रणम्य रामं वचनं अब्रवीत् चतुर्दश वर्षाणि अहं जटाचीर धरः भविष्यामि ॥५१॥

सरलार्थ—उस भरत ने पादुकाओं को प्रणाम करके राम से कहा। मैं चौदह वर्ष पर्यन्त जटा और वल्कल वस्त्रों को धारण करूंगा ॥५१॥

श्लोक—फलमूलाशनो वीर। इत्यादि ॥५२॥

शब्दार्थ—फलमूलाशनः=फल और मूल का भोजन करने वाला। भवेयं=होऊंगा। आकांक्षन्=प्रतीक्षा करते हुये। नगराद्बहिः=नगर से बाहर ॥५२॥

अन्वय—हे वीर रघुनन्दन! फलमूलाशनः भवेयम् नगरात् बहिः वसन् तव आगमनम् आकाङ्क्षन् ॥५२॥

सरलार्थ—हे वीर राम! मैं फल और मूल का भोजन करते हुये रहूंगा। नगर से बाहर रहते हुए आपके आगमन की प्रतीक्षा करूंगा ॥५२॥

श्लोक—तव पादुकयोर्न्यस्य । इत्यादि ॥५३॥

शब्दार्थ—पादुकयोः=खड़ाऊं को । न्यस्य=रख कर । राज्यतन्त्रं= राज्य शासन को । संपूर्णे=पूरा हो जाने पर ॥५३॥

अन्वय—हे परन्तप ! तव पादुकयोः न्यस्य राज्यतन्त्रं विधास्यामि चतुर्दश वर्षे अहनि सम्पूर्णे रघुत्तमं न द्रक्ष्यामि ॥५३॥

सरलार्थ—हे परमतपस्वी भैया ! तुम्हारी पादुकाओं को सिंहासन पर रख कर राज्य का शासन करूंगा और चौदह वर्ष व्यतीत हो जाने पर तुम्हें नहीं देखूंगा ॥५३॥

श्लोक—न द्रक्ष्यामि यदि त्वां तु । इत्यादि ॥५३॥

शब्दार्थ—न द्रक्ष्यामि=नहीं देखूंगा । त्वां=तुम को । हुताशनं= अग्नि में । प्रवेक्ष्यामि=प्रवेश करूंगा । प्रतिज्ञाय=प्रतिज्ञा कर । परिष्वज्य= आलिङ्गन कर के ॥५४॥

अन्वय—यदि त्वां न द्रक्ष्यामि हुताशनं प्रवेक्ष्यामि तथा इति प्रतिज्ञाय तं सादरं परिष्वज्य ॥५४॥

सरलार्थ—अगर तुमको चौदह वर्ष पूरे हो जाने पर नहीं देखूंगा तो मैं अग्नि में प्रवेश कर लूंगा । राम ने भी भरत की बात को स्वीकार के और उसको आदर के साथ गले लगाया ॥५४॥

श्लोक—शत्रुघ्नं च परिष्वज्य । इत्यादि ॥५५॥

शब्दार्थ—शत्रुघ्नं=शत्रुघ्न को । परिष्वज्य=आलिङ्गन कर । रक्ष= रक्षा करो । रोषं=गुस्से को । माकुरु=मत करो ॥५५॥

अन्वय—शत्रुघ्नं परिष्वज्य इदं वचनं अब्रवीत् मातरं कैकेयीं रक्ष तां प्रति रोषं मा कुरु ॥५५॥

सरलार्थ—राम ने शत्रुघ्न को आलिङ्गन करके यह वचन कहा— माता कैकेयी की रक्षा करो, उसके प्रति क्रोध मत करो ॥५५॥

श्लोक—मया च सीतया चैव । इत्यादि ॥५५॥

शब्दार्थ—शप्तः=सौगन्ध दी गई है । इत्युक्त्वा=ऐसा कह कर । अश्रुपरीताक्षः=आंखों में आंसू भर कर ॥५६॥

अन्वय—हे रघुनन्दन ! मया सीतया च त्वं शप्तः असि इत्युक्त्वा अश्रुपरीताक्षः भ्रातरं विससर्जह ॥५६॥

सरलार्थ—हे रघुनन्दन ! मेरे और सीता के द्वारा सौगन्ध ली गई है ऐसा कह कर श्री राम ने आंखों में आंसू भर कर अपने प्यारे भाई भरत को जाने के लिये आज्ञा दी ॥५६॥

श्लोकः—"स पादुके ते भरतः स्वलंकृते ।" इत्यादि ॥५७॥

शब्दार्थः—स्वलंकृते=सुशोभित । महोज्ज्वले=प्रकाशमान । संपरिगृह्य=लेकर । प्रदक्षिणं चकार=प्रदक्षिणा की ॥५७॥

अन्वयः—धर्मवित् सः भरतः महोज्ज्वले स्वलंकृते पादुके सम्परिगृह्य राघवं उत्तमम् अग्रमूर्ध्नि धृत्वा प्रदक्षिणं चकार ॥५७॥

सरलार्थः—धर्मात्मा भरतजी ने देदीप्यमान तथा सुशोभित उन दोनों पादुकाओं को मस्तक पर रख कर राम तथा गुरुजनों की प्रदशिणा की ॥५७॥

श्लोकः—"अथानुपूर्व्यात् प्रतिपूज्य तं जनम् ।" इत्यादि ॥५८॥

शब्दार्थः—आनुपूर्व्यात्=क्रम से । प्रतिपूज्य=पूजा करके । प्रकृतीः=प्रजाजन । स्वधर्मे=अपने कर्तव्य पालन में । व्यसर्जयत्=छोड़ दिया ॥५८॥

अन्वय—स्वधर्मे हिमवान् इव अचलः स्थितः राघववंशवर्धनः तं जनं अथ आनुपूर्व्यात् मन्त्रीन् गुरून् प्रकृतीः तथा अनुजौ प्रतिपूज्य व्यसर्जयत् ॥५८॥

सरलार्थः—अपने कर्तव्य पालन करने में हिमालय की भांति दृढ़ श्रीराम ने क्रम से गुरु मन्त्री प्रजाजन तथा दोनों भाइयों का यथा योग्य क्रमपूर्वक सत्कार करके विदा किया ॥५८॥

श्लोक:—तं मातरो वाष्पगृहीत कण्ठः ।" इत्यादि ॥५६॥

शब्दार्थ:—तं=राम को । वाष्पगृहीतकण्ठ्य:=आंसुओं से गला भर कर। मातर:=माताएं। आमन्त्रयितुं=बुलाने के लिए। नशेकु:=समर्थ नहीं हुई। मातॄ:=माताओं। अभिवाद्य=प्रणाम करके। रुदन्=रोते हुये। कुटीं=पर्णशाला में। प्रविवेश=प्रवेश किया ॥५६॥

अन्वय:—वाष्पगृहीतकण्ठ्य: मातर: दु:खेन तं आमन्त्रयितुं न शेकु: स: राम: सर्वा: मातॄ: अभिवाद्य रुदन् स्वौ कुटीं प्रविवेश ॥५६॥

सरलार्थ:—आंसुओं से जिसका गला भर गया है ऐसी वे माताएं भी दु:ख से राम को बुला न सकीं। राम उन सब माताओं को प्रणाम करके रोते-रोते अपनी पर्णशाला में चले गये ॥५६॥

अयोध्या प्रवेश: भरतस्य नंदिग्रामवासश्च

श्लोक:—"ततो निक्षिप्य मातॄस्ता: ।" इत्यादि ॥६०॥

शब्दार्थ:—मातॄ:=माताओं को। निक्षिप्य=रखकर। दृढव्रत:= दृढव्रत धारी। शोकसंतप्त:=शोक से दु:खी ॥६०॥

अन्वय:—अथ दृढव्रत: शोकसंतप्त: भरत: तत: ता: मातॄ: अयोध्यायां निक्षिप्य गुरून् इदं अब्रवीत् ॥६०॥

सरलार्थ:—उसके वात दृढव्रती शोक से दु:खी महात्मा भरत अपनी माताओं को अयोध्या में रखकर अपने गुरुजनों से कहने लगे ॥६०॥

श्लोक:—"नन्दिग्रामं गमिष्यामि ।" इत्यादि ॥६१॥

शब्दार्थ:—नन्दिग्रामं=नन्दी ग्राम को। व:=आप सबको। सहिष्ये= सहन करूंगा। राघवं विना=राम के सिवाय ॥६१॥

अन्वय:—नन्दिग्रामं गमिष्यामि अद्य व: सर्वान् आमन्त्रये तत्र राघवं विना इदं सर्वं दु:खं सहिष्ये ॥६१॥

सरलार्थ:—अब मैं नन्दि ग्राम को जाऊंगा इसके लिए आप सब गुरुजनों की आज्ञा चाहता हूं। वहां पर राम के अभाव में यह सारा दु:ख सहन करूंगा ॥६१॥

श्लोक:—गतश्चाहो दिवं राजा वनस्थ: स गुरुर्मम। इत्यादि ॥६२॥

शब्दार्थ:—दिवं गत: = स्वर्ग सिधारे। वनस्थ:=वनवासी। गुरु:= ज्येष्ठ भ्राता। प्रतीक्ष्ये=प्रतीक्षा करूंगा ॥६२॥

अन्वय:—अहो राजा दिवं गत: स: मम गुरु: वनस्थ: राज्याय रामं प्रतीक्ष्ये स: हि राजा महायशा: ॥६२॥

सरलार्थ:—महाराज दशरथ स्वर्ग को सिधार गये और मेरे परम पूज्य गुरु श्रीराम वन में निवास करते हैं, अत: मैं भी नन्दिग्राम में रहकर राज्य के लिए श्री रामचन्द्रजी की ही प्रतीक्षा करूंगा; क्योंकि महायशस्वी राम ही हम लोगों के राजा हैं ॥६२॥

श्लोक:—"एतच्छ्रुत्वा शुभं वाक्यम्।" इत्यादि ॥६३॥

शब्दार्थ:—श्रुत्वा=सुन कर। शुभं वाक्यं=सुन्दर वचन को। अब्रुवन्=बोले ॥६३॥

अन्वय:—महात्मन: भरतस्य एतत् शुभं वाक्यं श्रुत्वा सर्वे मंत्रिण: पुरोहित: वसिष्ठ: च अब्रुवन् ॥६३॥

सरलार्थ:—महात्मा भरत के ये सुन्दर वचन सुनकर सब मन्त्री और पुरोहित वसिष्ठजी बोले ॥६३॥

श्लोक:—सु भृशं श्लाघनीयं च।" इत्यादि ॥६४॥

शब्दार्थ:—सुभृशं=अत्यन्त। श्लाघनीयं=प्रशंसनीय। वात्सल्यात्= प्रेम से ॥६४॥

अन्वय:—हे भरत! त्वया सु भृशं श्लाघनीयं=यत् उक्तम् भ्रातृ-वात्सल्यात् तत् वचनं तथा अनुरूपम् एव ॥६४॥

सरलार्थ:—हे भरत ! भ्रातृ भक्ति से प्रेरित होकर तुमने जो वचन कहा है, वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। वास्तव में वह तुम्हारे ही योग्य है ॥६४॥

श्लोकः—स वल्कल जटाधारी ।" इत्यादि ॥६५॥

शब्दार्थ:—धीरः=धैर्यशाली। मुनिवेषधरः=मुनियों का वेष धारण करने वाले। जटाचीरधरः=जटा और वल्कल धारण करने वाले ॥६५॥

अन्वयः—तदा वल्कल जटाधारी मुनिवेषधरः प्रभुः स धीरः भरतः स सैन्यः नंदिग्रामे अवसत् ॥६५॥

सरलार्थ:—तब वल्कल और जटा धारण किये हुये, मुनि का वेष बनाये परम धैर्यवान् भरत सेना सहित नन्दिग्राम में रहने लगे ॥६५॥

श्लोकः—"ततस्तु भरतः श्रीमान् ।" इत्यादि ॥६६॥

शब्दार्थ:—आर्य पादुके=राम की पादुकाओं का। अभिषिच्य=अभिषेक कर। तदधीनः=उन पादुकाओं के अधीन रहकर ॥६६॥

अन्वयः—ततः श्रीमान् भरतः आर्य पादुके अभिषिच्य तदा तदधीनः सर्वदा राज्यं कारयामास ॥६६॥

सरलार्थ:—उसके बाद श्रीमान् भरत ने अपने बड़े भाई की उन पादुकाओं को राज्य पर अभिषिक्त किया और स्वयं सदा उनके अधीन रहकर वे राज्य का सब कार्य देखने लगे ॥६६॥

——०○——

अरण्यकाण्डम्

प्रथमः सर्गः

पञ्चवट्यां स्वर्णमृगदर्शनम्

श्लोकः—"स रावणवचः श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—मृगो भूत्वा=हरिण बन कर । आश्रमद्वारि=राम के आश्रम के दरवाजे पर । विचचार=विचरने लगा ॥१॥

अन्वयः—तदा रावणवचः श्रुत्वा सः मारीचःराक्षसः मृगो भूत्वा रामस्य आश्रमद्वारि विचचार ॥१॥

सरलार्थ—तब रावण की बात सुनकर वह मारीच नाम का राक्षस हरिण का रूप धारण करके श्रीराम के आश्रम के सामने विचरने लगा ॥१॥

श्लोक—सतु रूपं समास्थाय ।इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—समास्थाय = धारण कर । महदद्भुतदर्शनम् = अत्यन्त अनोखा दिखाई देने वाला । मणि प्रवर शृङ्गाग्रः=नीलम की नुकीली सींग वाला । सितासितमुखाकृतिः = सफेद और काले रंग से युक्त मुखाकृति वाला ॥२॥

अन्वय—मणिप्रवर शृङ्गाग्रः सितासितमुखाकृतिः सः महदद्भुत-दर्शनम् रूपं समास्थाय ॥२॥

सरलार्थ—उस समय मारीच राक्षस ने बड़ा ही अद्भुत दर्शन वाला रूप बनाया । उसके सींगों के ऊपरी भाग इन्द्रनीलमणि के बने हुये जान पड़ते थे । उसकी मुखाकृति कहीं सफेद और काले रंग से युक्त थी ॥२॥

श्लोक—रक्त पद्मोत्पलमुख: । इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—रक्तपद्मोत्पल मुख:=लाल कमल के तुल्य मुख वाला। इन्द्रनीलोत्पलश्रवा:=नील कमल के समान कान वाला। किंचिदत्युन्नतग्रीव:= कुछ ऊंची गर्दन वाला ॥३॥

अन्वय—स: रक्तपद्मोत्पल मुख: इन्द्रनीलोत्पलश्रवा: किंचिदत्युन्नत-ग्रीव: इन्द्रनील निभोदर: आसीत् ॥३॥

सरलार्थ—उसका मुख रक्त कमल के सदृश था। उसके कान नील कमल के समान और गर्दन कुछ ऊंची थी। उसके पेट का भाग इन्द्रनील-मणि की कान्ति धारण कर रहा था ॥३॥

श्लोक—मधूकनिभपार्श्वश्च । इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—मधूकनिभपार्श्व:=महुए के फूल के रंग की तरह कोख वाला। कञ्जकिंजल्कसंनिभ:=कमल के पराग के समान। वैदूर्यसंकाशखुर:= वैदूर्यमणि के समान खुर वाला। तनुजंघ:=पतली जांघ वाला। सुसंहत:= सुडौल मांसलसंधियों से युक्त ॥४॥

अन्वय—मधूकनिभपार्श्व: कञ्जकिंजल्कसंनिभ: वैदूर्यसंकाशखुर: तनु-जंघ: सुसंहत: आसीत् ॥४॥

सरलार्थ—उसकी कोख महुए के फूल के रंग के समान थी, कमल के पराग के समान सुन्दर और उसके खुर वैदूर्य मणि के समान थे। जंघे पतली और उसका शरीर सुडौल मांसल संधियों से युक्त था ॥४॥

श्लोक—इन्द्रायुध सवर्णेन । इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ—इन्द्रायुधसवर्णेन = इन्द्र धनुष के समान रंग-बिरंगी। विराजित:=सुशोभित। नानाविधै: रत्नै: वृत: = नाना प्रकार की रत्नमय बुंदकियों से विभूषित ॥५॥

अन्वय—इन्द्रायुधसवर्णेन ऊर्ध्वं पुच्छेन विराजित: मनोहरस्निग्धवर्ण: नानाविधै: रत्नै: वृत: ॥५॥

सरलार्थ—उसकी पूंछ ऊपर से इन्द्र धनुष के समान रंग की थी। उसकी देह बड़ी ही मनोहर और चिकनी थी और वह नाना प्रकार की रत्न-मय बुंदकियों से विभूपित दिखाई देता था ।।५।।

श्लोक—रौप्यबिन्दुशतैश्चित्रम् । इत्यादि ।।६।।

शब्दार्थ—रौप्यविन्दुशतैः चित्रम्=सैकड़ों चांदी के समान बुंदकियों से मनोहर । चित्रं भूत्वा = अनोखा रूप बनाकर । विटपानां = वृक्षों के । किसलयान्=कोमल पत्तों को ।।६।।

अन्वय—प्रियनन्दनः रौप्यबिन्दुशतैः चित्रं भूत्वा विटपानां किसलयान् भक्षयन् विचचार ।।६।।

सरलार्थ—मनोहर दर्शन वाला वह सैकड़ों चांदी के समान बुंदकियों से लुभावना रूप धारण कर वृक्षों के सुकोमल किसलयों को खाता हुआ आश्रम के सामने विचरने लगा ।।६।।

श्लोक—तस्मिन्नेव ततः काले । इत्यादि ।।७।।

शब्दार्थ—वैदेही=सीता । शुभ लोचना=सुन्दर नेत्रों वाली । कुसुमा-पचयव्यग्रा = फूल तोड़ने में संलग्न । अभ्यवर्तत = लांघती उधर आ निकलीं ।।७।।

अन्वयः—ततः तस्मिन् एव काले शुभ लोचना कुसुमापचयव्यग्रा वैदेही पादपान् अभ्यवर्तत ।।७।।

सरलार्थ—तत्पश्चात् उसी समय सुन्दर नेत्रों वाली विदेहनन्दिनी सीता, जो फूल तोड़ने में लगी थीं। कनेर अशोक आदि पौधों को लांघती-हुई उधर आ निकली ।।७।।

श्लोक—तं वै रुचिरदन्तोष्ठं । इत्यादि ।।८।।

शब्दार्थ—रुचिरदन्तौष्ठं=सुन्दर दांत और ओठ वाले । समुद्वीक्षत= देखा । विस्मयोत्फुल्लनयना=आश्चर्य से चकित नेत्र वाली ।।८।।

अन्वय—रुचिरदन्तोष्ठं तं सस्नेहं समुदैक्षत विस्मयोत्फुल्लनयना सस्नेहं समुदैक्षत ॥८॥

सरलार्थ—उसके दांत और ओठ बड़े सुन्दर थे तथा शरीर के रोए चांदी के समान थे। उसके ऊपर दृष्टि पड़ते ही जानकी की आंखें आश्चर्य से खिल उठीं और वे बड़े स्नेह से उसकी ओर निहारने लगी ॥८॥

श्लोक—"उवाच सीता संहृष्टा।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—संहृष्टा=प्रसन्न। छद्मना=कपट से। हृतचेतना=नष्ट ज्ञान वाली। हरति=हरण करता है ॥९॥

अन्वयः—छद्मना हृष्ट चेतना संहृष्टा सीता उवाच हे आर्यपुत्र? अभिरामः असौ मृगः मे मनः हरति ॥९॥

सरलार्थ—कपट से नष्ट हुई चेतना वाली एवं रूप को देख कर मुग्ध हुई सीता कहने लगी—हे आर्यपुत्र! सुन्दर यह हरिण मेरे मन को आकर्षित करता है ॥९॥

श्लोकः—"आनयैनं महाबाहो।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थः—क्रीडार्थं=खेल के लिये। नः=हमारे स्वरसंपत्=मधुर स्वर रूप संपत्ति। आनय=ले आइये ॥१०॥

अन्वयः—हे महाबाहो! एनं आनय नः क्रीडार्थं भविष्यति अहो रूपम् अहो लक्ष्मीः शोभना स्वर संपत् च अस्ति ॥१०॥

सरलार्थ—हे आर्यपुत्र! यह मृग बड़ा ही सुन्दर है, आप इसे ले आइये। यह हम लोगों के मन बहलाव के लिये रहेगा। इसका सौन्दर्य और कान्ति बड़ी अनोखी है और इसका स्वर भी बहुत मधुर है ॥१०॥

श्लोकः—"इति सीता वचः श्रुत्वा।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थः—वचः श्रुत्वा=वचन सुनकर। तेन रूपेण=उस सुन्दरता से प्रचोदितः=प्रेरित। दृष्ट्वा=देखकर ॥११॥

अन्वयः—इति सीता वचः श्रुत्वा अद्भुतं मृगं दृष्ट्वा तेन रूपेण लोभितः सीतया च प्रचोदितः ॥११॥

सरलार्थ—इस प्रकार सीता के वचन को सुनकर और अद्भुत मृग के सौन्दर्य को देखकर, उस सौन्दर्य से मोहित तथा सीता से प्रेरित राम कहने लगे ॥११॥

श्लोक—"उवाच राघवो हृष्टः।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—हृष्टः=प्रसन्न। वैदेह्याः=सीता के उल्लसितां=जागृत। स्पृहां = इच्छा को ॥१२॥

अन्वयः—हृष्टः राघवः भ्रातरं लक्ष्मणं वचः उवाच हे लक्ष्मण ! वैदेह्याः इमां उल्लसितां स्पृहां पश्य ॥१२॥

शब्दार्थः—प्रसन्नचित्त श्रीराम ने भाई लक्ष्मण से कहा—हे लक्ष्मण ! देखो सीता के मन में इस मृग को पाने के लिये कितनी प्रबल इच्छा जाग उठी है ॥१२॥

श्लोकः—"रूप श्रेष्ठ तया ह्येषः।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थः—रूप श्रेष्ठतया=सुन्दरता में श्रेष्ठ होने से। कस्य= किसका। जाम्बूनद मय प्रभम्=सुवर्ण के समान कान्ति वाले ॥१३॥

अन्वयः—रूप श्रेष्ठतया नन्दनवने अपि अद्य एषः मृगः न भविष्यति जाम्बूनदमय प्रभम् इदं रूपं दृष्ट्वा कस्य मनः विस्मयं न व्रजेत् ॥१३॥

सरलार्थः—सौन्दर्य में सर्व श्रेष्ठ होने के कारण इन्द्र के नन्दन वन में भी ऐसा सुन्दर हरिण नहीं होगा। सुवर्ण के समान कान्ति वाले इसके रूप को देख कर किसका मन आश्चर्य में नहीं डूबता है ॥१३॥

श्लोकः—"ना रत्नमयं दिव्यं।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थः—नाना रत्नमयं=अनेक प्रकार के रत्नों से बने। दिव्यं= अलौकिक। परार्ध्यं=श्रेष्ठ। त्वचि=मृगचर्म पर ॥१४॥

अन्वय:—नानारत्नमयं दिव्यं रूपं दृष्ट्वा कस्य मनः विस्मयं न व्रजेत् एतस्य मृगरत्नस्य परार्ध्ये का अचन त्वचि ।१४॥

सरलार्थ:—नाना रत्नों से वि भूषित इसके सुवर्णमय दिव्य रूप को देखकर किसके मनमें विस्मय नहीं होगा । इस मृग श्रेष्ठ की उत्तम सुवर्णमय चर्म पर वैदेही आसीन होगी ॥१४॥

श्लोक:—"उपवेक्ष्यति ।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ—उपवेक्ष्यति=बैठेगी । मया सह=मेरे साथ । सुमध्यमा=सुडौल । संनद्धः=सजधजकर तैयार । यंत्रितः=सावधान ॥१५॥

अन्वय:—मया सह सुमध्यमा वैदेही उपवेक्ष्यति इह त्वं सन्नद्धः भव यंत्रितः मैथिलीं रक्ष ॥१५॥

सरलार्थ:—इसके सुवर्णमय चर्म पर मेरे साथ सुडौल विदेह नन्दिनी सीता विराजमान होगी । यहां पर तुम तैर होकर सतर्क हो जाओ । सावधान होकर सीता की रक्षा करो ॥१५॥

श्लोक:—"यावद्गा गच्छामि सौमित्रे ।" इत्यादि॥१६॥

शब्दार्थ:—आनयितुं=लाने के लिये । द्रुतम्=शीघ्र । मृगत्वचि=मृग चर्म में । स्पृहां=अभिलाषा को ॥१६॥

अन्वय:—हे सौमित्रे ! द्रुतं मृगं मानयितुं यावत् गच्छामि हेलक्ष्मण ! वैदेह्याः मृगत्वचि गतां स्पृहां पश्य ॥१६॥

सरलार्थ:—हे लक्ष्मण ! देखो मृग का चमड़ा हस्तगत करने के लिये सीता को कितनी उत्कंठा हो रही है । मैं इस मृग को लाने के लिये शीघ्र जा रहा हूं । तुम सावधान होकर सीता की रक्षा करना ॥१६॥

श्लोक:—"त्वचा प्रधानया ह्येषः । इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ:—त्वचा=चमड़े से । अप्रमत्तेन=सावधानी से । भाव्यम्=रहना चाहिये ॥१७॥

अन्वयः—त्वचा प्रधानया एषः मृगः अद्य न भविष्यति सीतया सह आश्रमस्थेन ते अप्रमत्तेन भाव्यम् ॥१७॥

सरलार्थः—सुंदर चमडे से प्रधानता रखने वाला यह मृग कहीं नहीं होगा सीता के साथ तुम्हें आश्रम में सावधान होकर रहना चाहिये ॥१७॥

"मारीच प्रवञ्चना वधश्च"

श्लोकः—"तमेव मृगमुद्दिश्य ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—ज्वलन्तम्=प्रकाशमान । पन्नगम्=सूर्य । ब्रह्मविनिर्मितम् ब्रह्मा से बनाये हुये । मुमोच=छोड दिया ॥१८॥

अन्वय—तं मृगं उद्दिश्य ज्वलन्तं पन्नगम् इव ब्रह्मनिर्मितं ज्वलितं दीप्तं अस्त्रं मुमोच ॥१८॥

सरलार्थ—सूर्य की किरणों के समान एक प्रज्वलित बाण निकाल कर उसे धनुप पर रखा । फिर धनुप को जोर से खींच कर उस ब्रह्मा के बनाये बाण को मृग के ऊपर छोड़ दिया ॥१८॥

श्लोकः—"स भृशं मृगरूपस्य ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थः—स भृशं=अत्यन्त । विनिर्भिद्य=भेदकर । अशनिसंनिभः= वज्र के समान तेज । बिभेद=चीर डाला ॥१९॥

अन्वयः—अशनिसंनिभः शरोत्तमः मृगरूपस्य मारीचस्य स भृशं हृदयं विनिर्भिद्य बिभेद ॥१९॥

सरलार्थः—वज्र के समान तीक्ष्ण उस श्रीराम के श्रेष्ठ बाण ने मृग का रूप धारण करने वाले मारीच के अच्छी तरह हृदय को बींधकर तोड़ डाला ॥१९॥

श्लोकः—"स प्राप्तकालमाज्ञाय ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ:—प्राप्तकालं=उचित समय को। आज्ञाय=समझ कर। राघवस्य सदृशं = राम के तुल्य। स्वनं=आवाज ॥२०॥

अन्वय:—तत: स: प्राप्तकालं आज्ञाय राघवस्य सदृशं हा सीते हा लक्ष्मण! इति स्वनं चकार ॥२०॥

सरलार्थ:—तत्पश्चात् उस मायावी मारीच ने उचित समय को जानकर राम के समान हा सीते! हा लक्ष्मण! इस प्रकार आवाज दी ॥२०॥

श्लोक—हा सीते लक्ष्मणेत्येवम्। इत्यादि ॥२१॥

शब्दार्थ—आक्रुश्य=चिल्ला कर। महास्वनं=बड़ी आवाज से। ममार=मर गया ॥२१॥

अन्वय—स: अयं राक्षस: हा सीते! हा लक्ष्मण! इति महास्वनम् आक्रुश्य ममार श्रुत्वा सीता कथं भवेत् ॥२१॥

सरलार्थ—वह राक्षस मारीच हा सीते! हा लक्ष्मण! इस तरह बड़े जोर की आवाज से चिल्लाकर मर गया। उस शब्द को सुनकर सीता की दशा होगी ॥२१॥

श्लोक—लक्ष्मण: महाबाहु: कामवस्थां। इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ—महाबाहु:=महान् बलशाली। कामवस्थां=किस दिशा को। संचिन्त्य=सोच कर। हृष्टतनूरुह:=शरीर के रोंगटे खड़े हो गये ॥२२॥

अन्वय—महाबाहु: लक्ष्मण: कां अवस्थां गमिष्यति इति संचित्य धर्मात्मा राम: हृष्टतनूरुह: अभवत् ॥२२॥

सरलार्थ—मारीच का ऐसा शब्द सुनकर महान् बलशाली लक्ष्मण की क्या दशा होगी ऐसा सोचकर धर्मात्मा राम के शरीर के रोंगटे खड़े हो गये ॥२२॥

श्लोक—तत्र रामं भयं तीव्रम्। इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ—विषादजम्=शोक से उत्पन्न। तीव्रं=अत्यन्त। हत्वा=मारकर। तत्स्वनम्=उसकी आवाज को। श्रुत्वा=सुनकर ॥२३॥

अन्वय—तत्र मृगरूपं राक्षसं हत्वा तत्स्वनं च श्रुत्वा विषादजं तीव्रं भयं रामं आविवेश ॥२३॥

सरलार्थ—वहां पर मृग के रूप के धारण करने वाले उस मायावी राक्षस को मारकर और उसकी आवाज को सुनकर शोक से उत्पन्न तीव्र भय राम के अङ्ग-अङ्ग में व्याप्त हो गया ॥२३॥

श्लोकः—"निहत्य पृषतं चान्यं।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थः—निहत्य = मारकर। पृषतं = मृग को। अन्यं = दूसरे। आदाय = लेकर। त्वरमाणः = शीघ्रता करते हुये। ससार = प्रस्थान किया ॥२४॥

अन्वयः—राघवः अन्यं पृषतं निहत्य मांसम् आदाय तदा जनस्थानं अभिमुखं त्वरमाणः ससार ॥२४॥

सरलार्थः—श्रीराम ने दूसरे मृग को मारकर और मांस लेकर उस समय जनस्थान के प्रति जाने के लिये शीघ्रता करते हुये प्रस्थान किया ॥२४॥

लक्ष्मणं प्रति सीता पारुष्यम्

श्लोक—"आर्त्तस्वरं तु तं भर्तुः।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थः—आर्त्तस्वरं=करुणाभरी आवाज को। भर्तुः=स्वामी का। विज्ञाय=जानकर। गच्छ=जाओ। जानीहि = समझो ॥२५॥

अन्वयः—सीता वने भर्तुः सदृशं आर्तस्वरं विज्ञाय लक्ष्मणं उवाच राघवं जानीहि गच्छ ॥२५॥

सरलार्थः—सीता ने जंगल में अपने पति के समान करुणाभरी आवाज को जानकर लक्ष्मण से कहा। हे लक्ष्मण! इस ध्वनि को राम की समझो और जाओ ॥२५॥

श्लोक—"न हि मे जीवितं स्थाने।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—हृदयं=दिल। क्रोशतः = चिल्लाते हुए। परमार्तस्य= अत्यन्त दुःखी राम का। श्रुतः=सुना है ॥२६॥

अन्वय—मे जीवितं हृदयं वा स्थाने न हि अवतिष्ठते मया भृशम् क्रोशतः परमार्तस्य शब्दः श्रुतः ॥२६॥

सरलार्थ—जब से मैंने अत्यन्त चिल्लाते हुये परमदुःखी राम का शब्द सुना है तब से मेरा जीवन और हृदय अस्थिर हो गया है ॥२६॥

श्लोक—आक्रन्दमानं तु वने। इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थ—आक्रन्दमानं=करुण क्रन्दन करते हुये। भ्रातरं=भाई को। त्रातुं=बचाने के लिये। अभिधाव=दौड़ो। शरणैषिणम्=शरण चाहने वाले को ॥२७॥

अन्वयः—त्वं वने आक्रन्दमानं भ्रातरं त्रातुं अर्हसि तथा तं शरणैषिणं भ्रातरं क्षिप्रं अभिधाव ॥२७॥

सरलार्थः—तुम्हें वन में चिल्लाते हुए अपने भाई की रक्षा करनी चाहिये। शरण चाहने वाले भाई को बचाने के लिए शीघ्र दौड़ो ॥२७॥

श्लोक—"न जगाम तयोक्तस्तु।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थ—न जगाम=नहीं गये। शासनम्=आदेश को। आज्ञाय= मानकर। क्षुभिता=दुःखी ॥२८॥

अन्वय—भ्रातुः शासनं आज्ञाय तयोक्तः न जगाम.ततः तत्र क्षुभिता जनकात्मजा तम् उवाच ॥२८॥

सरलार्थ—सीता के इतना कहने पर भी लक्ष्मण नहीं गये। वे अपने भाई की आज्ञा पर विचार कर सीता की ही रक्षा में खड़े रहे। यह देखकर जनककुमारी क्षुब्ध होकर बोली ॥२८॥

श्लोक—यस्त्वमस्यामवस्थायाम् इत्यादि ॥२९॥

शब्दार्थ—अस्यां अवस्थायां=इस अवस्था में । लोभात्=लोभ से । यत्कृते=जिस हेतु ॥२९॥

अन्वय—यः त्वं अस्यां अवस्थायां भ्रातरं न अभिपत्स्यसे यत्कृते लोभात् नूनं राघवं न अनुगच्छसि ॥२९॥

सरलार्थ—जो तुम इस सङ्कट अवस्था में पड़े हुए भाई को बचाने के लिये नहीं दौड़ते हो । जिस हेतु लोभ से तुम निश्चय ही राम का अनुसरण नहीं करते हो ॥२९॥

श्लोकः—"एवं ब्रुवाणां वैदेहीं ।" इत्यादि ॥३९॥

शब्दार्थ—बाष्पशोकसमन्विताम्=आंसू और चिंता से समन्वित । एवं ब्रुवाणां=इस प्रकार कहती हुई । त्रस्तां=भयभीत ॥३०॥

अन्वय—लक्ष्मणः एवं ब्रुवाणां बाष्पशोकसमन्वितां त्रस्तां मृगवधूम् इव तां सीतां अब्रवीत् ॥३०॥

सरलार्थः—सीता की दशा डरी हुई मृगी के समान हो रही थी । उन्होंने शोक में डूबकर आंसू बहाते हुए जब लक्ष्मण से उपर्युक्त बातें कहीं, तो उन्होंने इस प्रकार उत्तर दिया ॥३०॥

श्लोक—पन्नगासुर गन्धर्व देवदानव राक्षसैः । इत्यादि ॥३१॥

शब्दार्थ—पन्नगासुरगन्धर्व देवदानवराक्षसैः=नाग, असुर गन्धर्व देव दानव और राक्षसों के द्वारा । ते भर्ता=तुम्हारा स्वामी ! जेतुं=जीतने के लिये ॥३१॥

अन्वय—हे वैदेहि ! तव भर्ता पन्नगासुर गन्धर्व देवदानव राक्षसैः जेतुं अशक्यः न संशयः ॥३१॥

सरलार्थ—हे देवि ! आप विश्वास करें, नाग असुर गन्धर्व देव-दानव और राक्षसों के द्वारा आपके पति परास्त नहीं किये जा सकते हैं ॥३१॥

श्लोक—अवध्यः समरे रामः । इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थ—समरे = युद्ध में। राघवं विना=राम के सिवाय। हातुं=छोड़ने के लिये। अवध्यः=मारे जाने योग्य नहीं है ॥३२॥

अन्वय—त्वं राघवं वक्तुं न अर्हसि समरे रामः अवध्यः राघवं विना त्वां हातुं अस्मिन् वने न उत्सहे ॥३२॥

सरलार्थः—हे सीता ! इस प्रकार तुम्हें नहीं कहना चाहिये, राम युद्ध में अवध्य है। राम के सिवाय तुम्हें अकेली इस वन में छोड़ना नहीं चाहता ॥३२॥

श्लोकः—"राक्षसा विविधा वाचः।" इत्यादि ॥३३॥

शब्दार्थः—विविधाः=अनेक तरह की। वाचः=वाणी। व्याहरन्ति=बोलते हैं। हिंसा विहाराः = सज्जनों को दुःख देना ही जिनका खेल है ॥३३॥

अन्वयः—हे वैदेहि ! हिंसा विहाराः राक्षसाः विविधाः वाचः महावने व्याहरन्ति चिन्तयितुं न अर्हसि ॥३३॥

सरलार्थः—हे देवि ! सज्जनों को दुःख देना ही जिनका खेल है ऐसे राक्षसगण इस महा अरण्य में अनेक प्रकार की वाणी बोलते हैं अतः तुम्हें इस प्रकार राम की चिंता नहीं करनी चाहिये ॥३३॥

श्लोकः—लक्ष्मणेनैवमुक्ता तु।" इत्यादि ॥३४॥

शब्दार्थः—लक्ष्मणेन=लक्ष्मण के द्वारा। एवमुक्ता=इस प्रकार कही गई। संरक्तलोचना = क्रोध से रक्त नेत्र वाली ॥३४॥

अन्वयः—लक्ष्मणेन एवम् उक्ता क्रुद्धा संरक्तलोचना सत्यवादिनं लक्ष्मणं परुषं वाक्यं अब्रवीत् ॥३४॥

सरलार्थः—लक्ष्मण के द्वारा इस प्रकार कही गई क्रोध से रक्त नयन वाली सीता ने सत्यवादी लक्ष्मण को कठोर वचन कहे ॥३४॥

सीता उवाच—

श्लोक—"अनार्य करुणारम्भ ।" इत्यादि ॥३५॥

शब्दार्थ—अनार्यः=दुर्जन । नृशंस=क्रूर । कुलपांसनः=कुलकलंक । व्यसनं=दुःख ॥३५॥

अन्वय—अनार्य ! करुणारम्भ ! नृशंस ! हे कुलपांसन ! अहं रामस्य महद् व्यसनं तव प्रियं मन्ये ॥३५॥

सरलार्थ—हे अनार्य, क्रूर और कुल कलंक लक्ष्मण ! मेरा कहना तुम नहीं मानते हो इससे मालूम होता है कि राम के इस महान् दुःख को तुम प्रिय (इष्ट) मानते हो ऐसा मैं मानती हूं ॥३५॥

श्लोकः—"रामस्य व्यसनं दृष्ट्वा ।" इत्यादि ॥३६॥

शब्दार्थः—व्यसनं=दुःख को । दृष्ट्वा=देखकर । प्रभापसे=कहते हो । सपत्नेषु=शत्रुओं के विषय में ॥३६॥

अन्वयः—हे लक्ष्मण ! रामस्य व्यसनं दृष्ट्वा तेन एतानि प्रभापसे सपत्नेषु पापं यद् भवेत् न चित्रम् ॥३६॥

सरलार्थ—हे लक्ष्मण ! राम के इस प्रकार महान् दुःख को देखकर भी तुम इसीलिए इस तरह बात करते हो । तुम्हारे जैसे छिपे शत्रुओं के विषय में ऐसा पाप होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है ॥३६॥

लक्ष्मण उवाच—

श्लोक—न सहे ईदृशं वाक्यम् । इत्यादि ३७॥

शब्दार्थ—न सहे=सहन नहीं करता हूं । श्रोत्रयोः मध्ये=कानों के बीच में । तप्तनाराचसंनिभम्=तपे बाण के समान ॥३७॥

अन्वयः—हे जनकात्मजे ! वैदेहि ! उभयोः श्रोत्रयोः मध्ये तप्तनाराच संनिभम् ईदृशं वाक्यं न सहे ॥३७॥

सरलार्थ—हे सीता ! दोनों कानों के बीच में लगे हुए तपे बाण के समान तुम्हारी इस कठोर वचन को सहन नहीं करता हूं ॥३७॥

श्लोक—"उप शृण्वन्तु सर्वे।" इत्यादि ॥३८॥

शब्दार्थ—उपशृण्वन्तु=सुनिये। परुषं=कठोर। न्यायवादी=न्यायप्रिय वनेचराः=वनदेवियों! त्वया=तुम्हारे द्वारा ॥३८॥

अन्वय—सर्वे उपशृण्वन्तु मे वनेचराः साक्षिणः यथा न्यायवादी अहं त्वया परुषं वाक्यं उक्तः ॥३८॥

सरलार्थ—हे वन के देवताओ? आप सब सुनिये। मेरे सभी आप वनवासी साक्षी हैं। जैसे कि न्याय प्रिय मुझको सीता ने अत्यन्त कठोर वचन कहे है ॥३८॥

श्लोक—"धिक्त्वामद्य।" इत्यादि ॥३९॥

शब्दार्थ—विनश्यन्तीं=नष्ट होती हुई को। विशङ्कसे=सन्देह करती हो। दुष्टस्वभावेन=बुरेस्वभाव से। मां=मुझ को ॥३९॥

अन्वय—अद्य विनश्यन्तीं त्वां धिक् यत् गुरु वाक्ये व्यवस्थितम् मां स्त्रीत्वात् दुष्टस्वभावेन एवं विशङ्कसे ॥३९॥

सरलार्थ—हे देवि! आज इस प्रकार मतिभ्रम से नष्ट होती हुई तुमको धिक्कार है। अपने ज्येष्ठ भ्राता की आज्ञा का पालन करते हुए मेरे प्रति स्त्री सुलभदुष्टता से इस तरह सन्देह करती हो ॥३९॥

श्लोक—"गच्छामि यत्र काकुत्स्थः।" इत्यादि ॥४०॥

शब्दार्थ—यत्र काकुत्स्थः=जहां राम है। स्वस्ति=कल्याण हो। त्वां=तुमको। रक्षन्तु=रक्षा करें ॥४०॥

अन्वय—हे वरानने! विलाशाक्षि! यत्र काकुत्स्थः गच्छामि ते स्वस्ति अस्तु समग्राः वनदेवताः त्वां रक्षन्तु ॥४०॥

सरलार्थ—हेसुमुखि! हे विशाल नयने! जहां मेरे पूज्य भैय्या हैं वहां मैं भी जाता हूं। तुम्हारा कल्याण हो। सब वन देवताएं तुम्हारी रक्षा करें ॥४०॥

श्लोक—"निमित्तानि हि घोराणि।" इत्यादि ॥४१॥

शब्दार्थ—निमित्तानि=शकुन। घोराणि=भयंकर। प्रादुर्भवन्ति=उत्पन्न होते है ॥४१॥

अन्वय—मे यानि घोराणि निमित्तानि प्रादुर्भवन्ति आगतः पुनः रामेण सह त्वां पश्येयम् ॥४१॥

सरलार्थ—मुझे जो घोर निमित्त पैदा हो रहे है, आया हुआ फिर मैं राम के साथ तुम्हें देखूं ॥४१॥

श्लोक—तथा परुषमुक्त स्तु ॥४२॥

शब्दार्थ—परुषं=कठोर। कुपितः=क्रोधी भृशं=अत्यन्त। प्रतस्थे=प्रस्थान किया ॥४२॥

सरलार्थः—उस प्रकार कठोर वचन कहने से क्रोधित लक्ष्मण ने शीघ्र ही राम की ओर प्रस्थान कर दिया ॥४२॥

—०००—

द्वितीयः सर्गः

सीतापहरणम्

श्लोक—"तदासाद्य दशग्रीवः।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—आसाद्य=प्राप्तकर। दशग्रीवः=रावण। परिव्राजकरूपधृत्=भिक्षु का रूप धारण करने वाला ॥१॥

अन्वय—तत् आसाद्य क्षिप्रं अन्तरं आस्थितः परिव्राजकरूपधृत् दशग्रीवः वैदेहीं अभिचक्राम ॥१॥

सरलार्थः—लक्ष्मण के चले जाने पर मौका पाकर वह रावण भिक्षु का रूप धारण करके शीघ्र ही सीता के समीप गया ॥१॥

श्लोकः—शुभां रुचिरदन्तोष्ठीं।' इत्यादि" ॥२॥

शब्दार्थः—शुभां=सुन्दर। रुचिदन्तोष्ठीं=मनोहर दांत और ओठ वाली को। आसीनां=बैठी हुई को। पर्णशालायां=कुटी में। वाष्पशोका भिपीडितामृ=आंसू और चिन्ता से दुःखी ॥२॥

अन्वयः—शुभां रुचिर दन्तोष्ठीं पूर्णचन्द्रनिभाननाम् वाष्पशोकाभिपीडिताम् पर्णशालायां आसीनाम् ॥२॥

सरलार्थः—सुन्दर मनोहर दांत और ओठ वाली पूर्ण चांद की भांति सुन्दर मुख वाली और कुटी में बैठी हुई सीता को रावण कहने लगा ॥२॥

श्लोकः—"दृष्ट्वा काम शराविद्धः। इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—काम शराविद्धः=कामदेव के बाणों से पीडित। उदीरयन्=उच्चारण करता हुआ। प्रश्रितं=विनययुक्त। रहिते=एकान्त में। ब्रह्मघोषम्=वेदमंत्र की ध्यान को ॥३॥

अन्वय—दृष्ट्वा कामशराविद्धः राक्षसाधिपः ब्रह्मघोषं उदीरयन् रहिते प्रश्रितं वाक्यं अब्रवीत् ॥३॥

सरलार्थ—सुन्दरी सीता को देखकर कामदेव के बाणों से पीडित वेदमन्त्रों का उच्चारण करता हुआ एकान्त में स्नेहयुक्त वचन कहने लगा ॥३॥

रावण उवाच—

श्लोक—"नैव देवी न गंधर्वी।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—एवंरूपा=ऐसे रूपवाली। महीतले=पृथ्वी पर। किन्नरी=किन्नरों की स्त्री। ॥४॥

अन्वय—नैव देवी न गंधर्वी न यक्षी न किन्नरी महीतले मया एवंरूपा नारी दृष्ट पूर्वा न ॥४

सरलार्थ—देवता, गंधर्व, यक्ष और किन्नर जाति की स्त्रियों में भी तुम्हारे जैसी सुन्दरी नारी मैंने आज से पहले कभी नहीं देखी। पृथ्वी पर ऐसी रूपवती स्त्री दूसरी कोई नहीं है ॥४॥

श्लोक—"का त्वं भवसि रुद्राणां।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—मरुतां=देवताओं की। वरारोहे=सुन्दर सुडौल शरीर वाली। वसूनां=कुबेर की ॥५॥

अन्वयः—हे शुचिस्मिते ? रुद्राणां मरुतां त्वं का भवसि हे वरारोहे ? वसूनां त्वं देवता मे प्रति भासि ॥५॥

सरलार्थः—हे मन्द मन्द मुस्कानवाली ! रुद्र तथा देवताओं की तुम कौन हो अर्थात् उनके साथ तुम्हारा क्या रिश्ता है। हे सुडौल शरीर वाली ! तुम कुबेर की देवता हो ऐसा मुझे मालूम होता है। ॥५॥

श्लोक—"नेहागच्छन्ति गंधर्वाः" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थः—इह=यहां पर। नागच्छन्ति=नहीं आते हैं। वासः=निवास ॥६॥

अन्वयः—इह गन्धर्वाः देवाः किन्नराः न आगच्छन्ति अयं राक्षसानां वासः त्वं इह कथं आगता ॥६॥

सरलार्थः—इस दण्डकारण्य में गंधर्व देता और किन्नर आदि कोई नहीं आते हैं। यह राक्षसों के निवास की जगह है। तुम यहां पर कैसे आई हो ॥६॥

सीता उवाच—

श्लोक—"दुहिता जनकस्याहम्।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ—दुहिता=लडकी। मैथिलस्य=मिथिलावासी। रामस्य=राम की। महिषी=पटरानी ॥७॥

अन्वय—अहं मैथिलस्य महात्मनः जनकस्य दुहिता रामस्य प्रिया महिषी सीता नाम्ना अस्मि ते भद्रम् ॥७॥

सरलार्थ—मैं मिथिला नरेश महात्मा जनकजी की पुत्री हूं और राम की प्रिय पटरानी सीता इस नाम से प्रसिद्ध हूं तुम्हारा कल्याण हो ॥८॥

श्लोकः—"विशाला क्षो महाबाहुः ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—विशालाक्षः=बड़े नेत्र वाले । सर्व भूतहितेरतः=समस्त-प्राणियों के कल्याण के लिये तत्पर । कामार्तः=काम से पीड़ित ॥८॥

अन्वय—विशालाक्षः महाबाहुः सर्वभूत हितेरतः कामार्तः महातेजाः स्वयं पिता दशरथः ॥८॥

सरलार्थ—विशाल नेत्र वाले, बड़ीभुजाओं वाले, तथा समस्त प्राणियों के हितमें तत्पर काम से पीड़ित महान् तेजस्वी पिता दशरथ हैं ॥८॥

श्लोक—"कैकेय्याः प्रिय कामर्थं ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—प्रिय कामार्थं=अभिलाषापूर्ति के लिये । नाभ्यषेचयत्=अभिषेक नहीं किया ॥९॥

अन्वय—सः दशरथः कैकेय्याः प्रियकामार्थं तं रामं नाभ्यषेचयत् अभिषेकाय पितुः समीपं आगतं रामम् ॥९॥

सरलार्थ—उस राजा दशरथ ने कैकेयी की अभिलाषापूर्ति के हेतु उस राम का अभिषेक नहीं किया । अभिषेक के लिये पिता के पास आये हुए राम को इस प्रकार कहा गया ॥९॥

श्लोक—"कैकेयी मम भर्तारम् ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—भर्तारं=स्वामी को । घृणंवचः=निष्ठुरवचन । समाज्ञप्तां=आदेश दिया है । शृणु=सुनिये ॥१०॥

अन्वयः—कैकेयी मम भर्तारं इति घृतं वचः उवाच हे राघव इदं शृणु तव पित्रा मम समाज्ञप्तम् ॥१०॥

सरलार्थ—कैकेयी ने मेरे पति को ऐसा निष्ठुर वचन कहा है कि हे राम ! यह सुनो, तुम्हारे पिता ने मुझे आदेश दिया है ॥१०॥

श्लोक—"भरताय प्रदातव्यम् ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—भरताय=भरत को । इदं अकण्टकं=यह निर्विघ्न । नव वर्षाणि पञ्च च=चौदह वर्ष तक ॥११॥

अन्वय—इदं अकण्टकं राज्यं भरताय प्रदातव्यम् त्वया खलु नव वर्षाणि पञ्च च वने वस्तव्यम् ॥११॥

सरलार्थ—इस समस्त निर्विघ्न राज्य को भरत को देना चाहिये और तुम्हें चौदह वर्ष पर्यन्त वनवास में रहना चाहिये ॥११॥

श्लोकः—"वने प्रव्रज काकुत्स्थ ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—वने=जंगल में । प्रव्रज=जाओ । अनृतात्=असत्य से । मोचय=छुडाओ । अकुतो भयः=निडर ॥१२॥

अन्वयः—हे काकुत्स्थ ! वने प्रव्रज पितरं अनृतात् मोचय तां कैकेयीं तथा इति उक्त्वा अकुतो भयः रामः ॥१२॥

सरलार्थ—हे राम ! तुम वन में जाओ और पिताजी को असत्य से बचाओ । उस कैकेयी को स्वीकार है ऐसा कहकर निडर रामने उसके वचन का पालन किया ॥१२॥

श्लोकः—"चकार तद्वचस्तस्या ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थः—तद्वचः=उसके वचन को । दृढव्रतः=दृढव्रती । दद्यात्=देना चाहिये । न प्रतिगृह्णीयात्=प्रतिग्रह नहीं करना चाहिये ॥१३॥

अन्वयः—दृढव्रतः मम भर्ता तस्याः तद्वचः चकार दद्यात् न प्रतिगृह्णीयात् सत्यं ब्रूयात् अनृतं न ॥१३॥

सरलार्थ:—दृढव्रती मेरे स्वामी राम ने उस कैकेयी के वचन का पालन किया, क्योंकि देना चाहिये न प्रतिग्रह स्वीकार करें, सत्य बोलना चाहिए झूठ नहीं यह उनका नियम था ॥१३॥

श्लोक:—"एतद् ब्राह्मण रामस्य।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ:—अनुत्तमम्=श्रेष्ठ। वैमात्र:=सौतेली माता से उत्पन्न। वीर्यवान्=पराक्रमी। व्रतं धृतम्=व्रत स्वीकार किया है ॥१४॥

अन्वय:—एतद् हे ब्राह्मण! रामस्य अनुत्तमं व्रतं धृतं तस्य वैमात्र: लक्ष्मण: नाम वीर्यवान् भ्राता अस्ति ॥१४॥

सरलार्थ:—हे ब्राह्मण! यह उस राम का श्रेष्ठ नियम है। उसका सौतेला भाई लक्ष्मण भी बड़ा पराक्रमी है ॥१४॥

श्लोक—"अन्वगच्छत् धनुष्पाणि:।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ—अन्वगच्छत्=अनुसरण किया। धनुष्पाणि:=धनुर्धारी। प्रव्रजन्तं=वनवास को जाते हुये। जटी=जटाधारी। सहानुज:=छोटे भ्राता के साथ ॥१५॥

अन्वय:—धनुष्पाणि: प्रव्रजन्तं मया सह अन्वगच्छत् जटी तापसरूपेण सहानुज: मया सह दण्डकारण्यं प्रविष्ट: इति सम्बन्ध: ॥१५॥

सरलार्थ:—धनुर्धारी जहाँ लक्ष्मण ने वन के लिये प्रस्थान किये हुये श्रीराम का मेरे साथ अनुसरण किया। जटाधारी तपस्वी के भेष से श्रीराम ने अपने छोटे भाई लक्ष्मण और मेरे साथ दण्डकारण्य में प्रवेश किया ॥१॥

श्लोक:—"प्रविष्ट: दण्डकारण्यम्।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—प्रविष्ट:=प्रवेश किया। दण्डकारण्यं=दण्डकवन को। गंभीरमोजसा=अत्यन्त तेज के साथ। विचाराम:=घूमते हैं ॥१६॥

अन्वय:—धर्मनित्य: जितेन्द्रिय: दण्डकारण्ये प्रविष्ट: हे द्विज श्रेष्ठ! गंभीरं वनं ओजसा विचराम: ॥१६॥

सरलार्थः—धर्म के ज्ञाता तथा जितेन्द्रिय श्रीराम ने दण्डकवन में प्रवेश किया है। हे द्विज श्रेष्ठ! हम सब इस गहन वनमें अपने पराक्रम से घूमते हैं ॥१६॥

श्लोकः—"स त्वं नाम च गोत्रं च। इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थः—त्वं=तुम। गोत्रं=गोत्रको। आचक्ष्व=बताओ तत्वतः= सत्य पूर्वक। एकः=एकाकी। चरसि=घूमते हो ॥१७॥

अन्वय—सः त्वं तत्त्वतः नाम गोत्रं कुलं च आचक्ष्व। हे द्विज! एकः त्वं दण्डकारण्ये किमर्थं चरसि ॥१७॥

सरलार्थः—वह तुम सत्य रूप से अपना नाम गोत्र तथा वंश बताओ। हे द्विज! तुम अकेले इस दण्डकारण्य में क्यों घूमते हो ॥१७॥

श्लोकः—"एवं ब्रुवत्यां सीतायां।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थः—एवं ब्रुवत्यां सीतायां=इसप्रकार सीता के कहने पर। तीव्रं= कठोर। प्रत्युवाच=जवाव दिया ॥१८॥

अन्वय—एवं ब्रुवत्यां राम पत्न्यां सीतायां महाबलः राक्षसाधिपः रावणः तीव्रं उत्तरं प्रत्युवाच ॥१८॥

सरलार्थः—इस प्रकार राम की पत्नी सीता के कहने पर महान् बलशाली राक्षसों के स्वामी रावण ने अत्यन्त कठोर जवाव दिया ॥१८॥

रावण उवाच—

श्लोक—"येन वित्रासिता लोकाः।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—वित्रासिताः=घवडा जाते हैं। लोकाः=संसार। सदेवासुरमानुषाः=देवता राक्षस और मनुष्यों के सहित ॥१९॥

अन्वय—येन सदेवासुरमानुषाः लोकाः वित्रासिताः हे सीते! अहं सः रक्षोगणेश्वरः रावणः नाम ॥१९॥

सरलार्थ—हे सीते ? जिसके नाम से देवता, असुर और मनुष्यों सहित सम्पूर्ण संसार थर्रा उठता है, वह राक्षसों का राजा रावण मैं ही हूं ॥१६॥

श्लोक:—"त्वां तु कांचन वर्णाभां ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ:—कांचन वर्णा भां=सुवर्ण के समान कान्तिवाली । त्वां=तुमको । कौशेय वासिनीम् = रेशमी साडी को पहनने वाली । स्वकेषु दारेषु = अपनी स्त्रियों में । रतिः=प्रेम ॥२०॥

अन्वयः—हे अनिन्दिते ! कांचन वर्णा भां त्वां कौशेयवासिनीं दृष्ट्वा स्वकेषु दारेषु रतिं नाधिगच्छामि ॥२०॥

सरलार्थः—तुम्हारे शरीर की कान्ति वैसे ही सुवर्ण के समान है । उसपर तुमने पीले रंग की रेशमी साडी धारण कर रक्खी है । तुम्हें देख कर अब मेरा मन अपनी स्त्रियों की ओर नही जाता अर्थात् ये मुझे तनिक भी नहीं भाती है ॥२०॥

श्लोक—"लङ्का नाम समुद्रस्य ।" इत्यानि ॥२१॥

शब्दार्थः—समुद्रस्य=सागर की । महापुरी=विशालनगरी । परिक्षिता=घिरी गई । गिरि मूर्धनि=पर्वत की चोटी पर ॥२१॥

अन्वयः—समुद्रस्य मध्ये मम महापुरी लङ्का नाम सागरेण परिक्षिप्तागिरि मूर्धनि निविष्टा ॥२१॥

सरलार्थः—सागर के बीच में मेरी लङ्का नाम की विशाल नगरी है, जो समुद्र से घिरी गई तथा पर्वत के शिखर पर बसी हुई है ॥२१॥

श्लोकः—"तत्र सीते मया सार्धं ।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थः—मया सार्धं=मेरे साथ । वनेषु=बगीचों में । विचरिष्यसि=विहरण करोगी । न स्पृहयिष्यसि = इच्छा नहीं करोगी ॥२२॥

अन्वयः—हे सीते ! तत्र मया सार्धं वनेषु विचरिष्यसि हे भामिनि ! अस्य वनवासस्य न स्पृहयिष्यसि ॥२२॥

सरलार्थ—हे सीते ! उस लंकापुरी के सुन्दर उद्यानों में तुम मेरे साथ विहरण करोगी, तथा हे भामिनि ! इस वनवास की तुम तनिक भी अभिलाषा नहीं करोगी ॥२२॥

श्लोक—"रावणेनैवमुक्ता तु ।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ—रावणेन = रावण के द्वारा । एवमुक्ता = इस प्रकार कही गई । कुपिता=क्रोधित । अनादृत्य=तिरस्कार करके ॥२३॥

अन्वय—रावणेन एवं उक्ता अन वद्याङ्गी कुपिता जनकात्मजा तं राक्षसं अनादृत्य प्रत्युवाच ॥२३॥

सरलार्थ—रावण के द्वारा इस प्रकार कही गई निर्मल अङ्गों वाली क्रोधित उस सीता ने उस राक्षस रावण का तिरस्कार करके जवाब दिया ॥२३॥

श्लोकः—"महागिरिमिवाकम्पम् ।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—अकम्पं=अचल । महेन्द्रसदृशं = इन्द्र के समान । महोदधिं इव=महासागर की भांति । अक्षोभ्यम्=प्रशान्त ॥२४॥

अन्वय—अहं महागिरिम् इव अकम्पं महेन्द्रसदृशं महोदधिम् इव अक्षोभ्यं पतिं अहं अनुव्रता अस्मि ॥२४॥

सरलार्थ—मैंने महान् पर्वतराज की तरह अचल, इन्द्र के समान तेजस्वी तथा महासागर के समान प्रशान्त पति राम को स्वीकार किया है ॥२४॥

श्लोक—"सर्व लक्षण सम्पन्नं ।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थः—सर्व लक्षणसम्पन्नं=समस्त लक्षणों से समन्वित । सत्य-सन्धं=सत्यप्रतिज्ञा वाले । न्यग्रोधपरिमण्डलम्=वरवृक्ष की भांति आश्रय देने वाले ॥२५॥

अन्वयः—अहं सर्व लक्षण सम्पन्नं न्यग्रोधपरिमण्डलम् सत्यसन्धं महा भागं रामं अनुव्रता अस्मि ॥२५॥

सरलार्थः—श्रीराम समस्त शुभ लक्षणों से युक्त, वट वृक्ष की भांति सबको अपनी छाया में आश्रय देने वाले, सत्य प्रतिज्ञ और महान् सौभाग्यशाली हैं। मैं उन्हीं की अनन्य अनुरागिणी हूं ॥२५॥

श्लोकः—"महाबाहुं महोरस्कं।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थः—महाबाहुं=महान् भुजाओं वाले। महोरस्कं=विशाल-वक्षस्थल वाले। नृसिंह=नर केसरी। सिंह संकाशम्=सिंह के समान ॥२६॥

अन्वयः—अहं महाबाहुं महोरस्कं सिंह विक्रान्त गामिनम् नृसिंह सिंहसंकाशं रामं अनुव्रता अस्मि ॥२६॥

सरलार्थः—मैं महान् भुजाओं वाले, विशाल वक्षः स्थल वाले तथा सिंह के पराक्रम का अनुसरण करने वाले नर केसरी सिंह के समान श्रीराम की अनन्य भक्त हूं ॥२६॥

श्लोकः—"पूर्णचन्द्राननं रामं।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थ—पूर्णचन्द्राननं=पूर्ण चांद के समान मुख वाले। राजवत्सं=राजपुत्र को। पृथुकीर्ति=महान् कीर्तिवाले। जितेन्द्रियं=जितेन्द्रिय ॥२७॥

अन्वयः—अहं पूर्ण चन्दाननं राजवत्सं जितेन्द्रियं पृथुकीर्ति महाबाहुं रामं अनुव्रता अस्मि ॥२७॥

सरलार्थ—मैं पूर्ण चांद के समान मुख कमल वाले, राजपुत्र, जितेन्द्रिय तथा महान् यशस्वी, महान् भुजाओं वाले श्रीराम की अनन्य भक्त हूं ॥२७॥

श्लोकः—"त्वं पुनर्जम्बूकः सिंहीम्।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थः—जम्बूकः=सियार। सिंहीम्=शेरनी को। सुदुर्लभां=अप्राप्य। आदित्यस्य=सूर्य की। प्रभा=किरण। स्प्रष्टुं=छूने के लिये ॥२८॥

अन्वयः—त्वं पुनः जम्बूकः सुदुर्लभां मां सिंहीम् इच्छसि यथा आदित्यस्य प्रभा तथा अहं त्वया स्प्रष्टुं न शक्या ॥२८॥

सरलार्थ:—अभागे ! तू सियार फिर सर्वथा दुर्लभ मुझ जैसी शेरनी (सिंहनी) को प्राप्त करने की इच्छा करता है । जैसे सूर्य की प्रभा पर कोई हाथ नहीं लगा सकता, उसी प्रकार तू मुझे छू भी नहीं सकता है ॥२८॥

श्लोक:—"क्षुधितस्य हि सिंहस्य ।" इत्यादि ॥२९॥

शब्दार्थ--तरस्विन:=पराक्रमी, बलशाली के । क्षुधितस्य = भूखे । सिंहस्य=शेर के आशी विषस्य=सांप के । दंष्ट्रां=दांतों को । आदातुं= पकडने के लिये ॥२९॥

अन्वय—क्षुधितस्य तरस्विन: मृगशत्रो: सिंहस्य आशीविषस्य वा वदनात् दंष्ट्रां आदातुं इच्छसि ॥२९॥

सरलार्थ:—भूखे बल शाली हरिणों के शत्रु सिंह के अथवा सांप के मुंह से दांतों को पकडना क्या तुम चाहते हो ॥२९॥

श्लोक—"मन्दरं पर्वत श्रेष्ठम् ।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ:—मन्दरं=मन्दराचल को । पाणिना=हाथ से । हर्तुं=हरण करने को । कालकूटं विषं=अत्यन्त उग्र जहर को । पीत्वा=पीकर॥३०॥

अन्वय:—त्वं पर्वत श्रेष्ठं मन्दरं पाणिना हर्तुं इच्छसि एवं कालकूटं विषं पीत्वा किं त्वं स्वस्तिमान् भवितुम् इच्छसि ॥३०॥

सरलार्थ:—तुम पर्वतराज मन्दराचल को क्या हाथ के द्वारा उठाना चाहते हो ? कालकूट नाम अत्यन्त तीव्र विष को पीकर क्या अपना कल्याण करना चाहते हो ॥३०॥

श्लोक:—"अक्षि सूच्या प्रमृजसि ।" इत्यादि ॥३१॥

शब्दार्थ:—अक्षि=आंखों को । सूच्या=सुई से । जिह्वया=जीभ से । क्षुरं=छुरे को । अधिगन्तुं=प्राप्त करने के लिये । लेढि=चाटना चाहते हो ॥३१॥

अन्वय—सूच्या अक्षि प्रमृजसि जिह्वया क्षुरं लेढि त्वं रामस्य प्रियां भार्यां अधिगन्तुं इच्छसि ॥३१॥

सरलार्थः—तुम आंखों को सुई से साफ करना चाहते हो। तुम जीभ से छुरे को चाटना चाहते हो। इस तरह तुम राम की प्रिय पत्नी को प्राप्त करना चाहते हो ॥३१॥

श्लोकः—"सीतायाः वचनं श्रुत्वा।" इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थ—दशग्रीवः=रावण। प्रतापवान्=बलशाली। हस्ते हस्तं= हाथमें हाथ को। समाहत्य=ठोक कर। स्वीकार=किया ॥३२॥

अन्वय—प्रतापवान् दशग्रीवः सीतायाः वचनं श्रुत्वा हस्ते हस्तं समाहत्य सुमहद् वपुः चकार ॥३२॥

सरलार्थ—बलशाली रावण ने इस प्रकार सीता के वचन को सुनकर ताल ठोक कर विशाल अपना शरीर बना लिया ॥३२॥

श्लोकः—"सद्यः सौम्यं परित्यज्य।" इत्यादि ॥३३॥

शब्दार्थः—सद्यः=शीघ्र। सौम्यं=सात्त्विक। तीक्ष्णं=भयानक। कालरूपाभं=मृत्यु के सदृश। वैश्रवणानुजः=कुबेर का छोटा भ्राता। भेजे= धारण किया ॥३३॥

अन्वय—सः वैश्रवणानुजः रावणः सद्यः सौम्यं रूपं परित्यज्य कालरूपाभं तीक्ष्णं स्वं रूपं भेजे ॥३३॥

सरलार्थ—उस कुबेर के छोटे भाई रावण ने अपना सात्त्विक रूप छोड़ कर, मृत्यु के सदृश अत्यन्त भयंकर रूप को धारण किया ॥३३॥

श्लोक—"संरक्त नयनः श्मश्रूमान्।" इत्यादि ॥३४॥

शब्दार्थ—संरक्त नयनः=लालनेत्रवाला। तप्तकांचनभूषणः=तपाये गये सोने के अलंकार वाला। क्रोधे=गुस्से में। नीलजीमूत संनिभः=नीले बादल के समान ॥३४॥

अन्वय—संरक्त नयनः श्मश्रूमान् तप्त कांचन भूषणः नीलजीमूतसंनिभः महता क्रोधे आविष्टः ॥३४॥

सरलार्थ—लाल नयन वाला, दाढ़ी वाला, तपाये गये सुवर्ण के अलंकारों से सम्पन्न तथा नीले बादल के समान वह रावण अत्यन्त क्रोध से युक्त हो गया ॥३४॥

श्लोकः—"जग्राह रावणः सीतां।" इत्यादि ॥३५॥

शब्दार्थ—जग्राह=पकड लिया। बुधः=बुधनामक ग्रह। खे=आकाश में। रोहिणीम् इव=रोहिणी नक्षत्र की तरह। वामेन=बाये से। मूर्धजेषु=बालों में ॥३५॥

अन्वयः—सः रावणः बुधः खे रोहिणीम् इव वामेन करेण पद्माक्षीं सीतां मूर्धजेषु जग्राह ॥३५॥

सरलार्थः—काम से मोहित उस रावण ने, जिस प्रकार बुध आकाश में रोहिणी नक्षत्र को खींचता है उसी प्रकार बाये हाथ से कमल के सदृश नयन वाली सीता को बालों में पकड लिया ॥३५॥

श्लोकः—"ऊर्वोस्तु दक्षिणेनैव।" इत्यादि ॥३६॥

शब्दार्थः—ऊर्वोः=जांघों को। दक्षिणेन=दाहिने। गिरिशृङ्गाभं=पर्वत शिखर के सदृश। तीक्ष्ण दंष्ट्रं=तेज दाँत वाले ॥३६॥

अन्वय—ऊर्वोः दक्षिणेन पाणिना परिजग्राह। तीक्ष्ण दंष्ट्रं महाभुजं गिरिशृङ्गाभं संपृष्ट्वा ॥३६॥

सरलार्थः—उस रावण ने सीता की जांघों को दाहिने हाथ से पकड़ लिया। तेज बड़े २ दांत वाले, बड़ी भुजाओं वाले और पर्वत के शिखर के समान भयंकर उस रावण को देखकर सब लोग भयभीत हो गये ॥३६॥

श्लोकः—"प्राद्रवन्मृत्यु संकाशम्।" इत्यादि ॥३७॥

शब्दार्थ—प्राद्रवन्=भाग गये। मृत्यु संकाशं=काल के तुल्य भयार्ताः=भयभीत। परुषैः वाक्यैः=कठोर वचनों से। भर्त्सयन्=धमकाता हुआ ॥३७॥

अन्वयः—ततः भयार्ताः वनदेवताः मृत्युसंकाशं तं दृष्ट्वा प्राद्रवन् सः महास्वनः परुषैः वाक्यैः तां भर्त्सयन् ॥३७॥

सरलार्थः—उसके वाद भयभीत वनदेवता काल के समान विकट उस रावण के रूप को देखकर भाग गये। वह वडी गर्जना करने वाला रावण उस सीता को कठोर वचनों से धमकाता हुआ रथ की तरफ ले गया ॥३७॥

श्लोक—"अंकेनादाय वैदेहीं।" इत्यादि ॥३८॥

शब्दार्थ—अंकेन=गोदी से। वैदेहीं आदाय=सीता को लेकर रथं=रथ में। आरोपयत्=विठला दिया। चुक्रोश=चिल्लाया। गृहीता=पकड़ी गई ॥३८॥

अन्वयः—सः तदा अंकेन वैदेहीं आदाय रथं आरोपयत्। रावणेन गृहीता यशस्विनी सा अतिचुक्रोश ॥३८॥

सरलार्थः—उस रावण ने तव गोदमें सीता को लेकर रथ में बिठला दिया। रावण के द्वारा पकडी गई उस कीर्ति मती सीता ने जोर से चिल्लाया ॥३८॥

श्लोकः—"रामेति सीता दुःखार्ता।" इत्यादि ॥३९॥

शब्दार्थः—दुःखार्ता=दुःख से पीडित। वने=वनमें। दूरंगते=दूर चले जाने पर। कामार्तः=काम से पीडित। पन्नगेन्द्रवधूम् इव=सर्पिणी की भांति ॥३९॥

अन्वय—वने दूरं गते रामं सीता हे राम इति चुक्रोश; कामार्तः सः पन्नगेन्द्रवधूम् इव तां अकामाम् ॥३९॥

सरलार्थः—वन में दूर चले गये रामको सीता हे राम! हे राम! करती हुई जोर से पुकारने लगी। काम से पीडित वह रावण निष्पाप उस सीता को सर्पिणी की भांति छटपटाती हुई लेकर चला गया ॥३९॥

श्लोकः—"विचेष्टमानामा दाय।" इत्यादि ॥४०॥

शब्दार्थः—विचेष्टमानां=छटपटाती हुई को । आदाय=लेकर । विहायसा=आकाशमार्ग से । ह्रियमाणा=हरण की जाती हुई ॥४०॥

अन्वयः—अथ रावणः विचेष्टमानां आदाय उत्पपात ततः राक्षसेन्द्रेण विहायसा ह्रियमाणा सा भृशं चुक्रोश ॥४०॥

सरलार्थः—उसके बाद रावण छटपटाती हुई उस सीता को लेकर चला गया । तत्पश्चात् रावण के द्वारा हरण की जाती हुई सीता जोर से चिल्लाने लगी ॥४०॥

श्लोकः—"भृशं चुक्रोश मत्तेव ।" इत्यादि ॥४१॥

शब्दार्थः—भृशं = अत्यन्तं । भ्रान्तचित्ता=भ्रान्त मनवाली । मत्तेव= पागल की तरह आतुरा=दुःखी । गुरुचित्त प्रसादकं=गुरुजनों के मन को प्रसन्न करने वाले ॥४१॥

अन्वय—हा महावाहो ! लक्ष्मण ! गुरुचित्त प्रसादक ! यथा आतुरा भ्रान्त चित्ता मत्तेव सा भृशं चुक्रोश ॥४१॥

सरलार्थ—हे महावाहु लक्ष्मण ! हे गुरुजनों के मन को प्रसन्न करने वाले ! जिस प्रकार भ्रान्त मनवाली पागल नारी की तरह वह सीता जोर जोर से पुकारने लगी ॥४१॥

श्लोक—"ह्रियमाणां न जानीषे ।" इत्यादि ॥४२॥

शब्दार्थ—कामरूपिणा=इच्छानुसार रूप बनाने वाले । रक्षसा= राक्षस के द्वारा । ह्रियमाणां=हरण की जाती हुई मुझ को । जीवितं= जीवन । धर्म हेतोः=धर्म की रक्षा के लिये ॥४२॥

अन्वय—धर्म हेतोः सुखं अर्थं जीवितं च परित्यजन् त्वं कामरूपिणा रक्षसा ह्रियमाणां मां न जानीषे ॥४२॥

सरलार्थ—धर्म की रक्षा के लिये सुख, भोग और जीवन को न्योछावर करने वाले तुम इच्छानुसार रूप धारण करने वाले राक्षस के द्वारा हरण की जाती हुई मुझ को क्यों नहीं जानते हो ॥४२॥

श्लोक—"ह्रियमाणामधर्मेण ।" इत्यादि ॥४३॥

शब्दार्थ:—अधर्मेण=दुराचारी के द्वारा । मां=मुझको । अविनीतानां=उद्दण्ड लोगों के विनेता=शासक ॥४३॥

अन्वय—हे राघव ! अधर्मेण ह्रियमाणां मां न पश्यसि ! हे परन्तप ! त्वं अविनीतानां नाम विनेता न ॥४३॥

सरलार्थ:—हे राम ! दुराचारी रावण के द्वारा हरण की जाती हुई मुझको क्या तुम नहीं देखते हो ! हे परमतपस्वी ! उद्दण्डों का दमन करने वाले क्या आप नहीं हैं ॥४३॥

श्लोक—"कथमेवंविधं पापम् ।" इत्यादि ॥४४॥

शब्दार्थ—पापं=पापी को । शाधि=दंड दीजिये । सद्यः=फौरन । अविनीतस्य=विनय रहित मनुष्य का । कर्मणः फलं=कर्मका फल ॥४४॥

अन्वय—एवं विधं पापं रावणं त्वं कथं न शाधि अविनीतस्य कर्मणः फलं ननु सद्यः दृश्यते ॥४४॥

सरलार्थ—इस प्रकार के महान् अत्याचारी रावण को दण्ड क्यों नहीं देते हो ? अविनयी मनुष्य को अपनी करतूत का फल शीघ्र मिलता है ॥४४॥

——oo——

तृतीयः सर्गः

विरहिणो रामस्य विलापः

श्लोक—"स राज पुत्रः प्रियया विहीनः ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—प्रियया=प्रिया से । विहीनः=वियुक्त । शोकेन=चिंता से । पीड्यमानः=दुःखी । भूयः=फिर से । विपादयन्=दुःखी करता हुआ ॥१॥

अन्वय:—प्रियया विहीनः सः राजपुत्रः शोकेन मोहेन च पीड्यमानः आर्तस्पः भ्रातरं विपादयन् भूयः तीव्रं विपादं प्रविवेश ॥१॥

सरलार्थ—अपनी प्रिया से वियुक्त होकर वह श्रीराम चिंता और मोह से दुःखी होकर अपने भाई लक्ष्मण को अधिक दुःखी करते हुए फिर से स्वयं तीव्र दुःख से अभिभूत हो गये ॥१॥

श्लोक:—"स लक्ष्मणं शोकवशाभिपन्नम् ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—विपुले=बड़े । निमग्नः=डूबेहुए । शोकवशाभिपन्नं=चिंता से परतन्त्र । व्यसनानुरूपं=दुःख के अनुकूल । विनिःश्वस्य=निःश्वास लेकर । रुदन्=विलाप करते हुये ॥२॥

अन्वय:—विपुले शोके निमग्नः सः रामः शोकवशाभिपन्नं लक्ष्मणं उष्णं विनिःश्वस्य सशोकं रुदन् व्यसनानुरूपं वाक्यं उवाच ॥२॥

सरलार्थ:—महान् शोक में निमग्न वह राम चिन्ता से दुःखी लक्ष्मण को गरम निःश्वास लेकर शोक सहित विलाप करते हुए दुःख के अनुकूल वचन कहने लगे ॥२॥

श्लोक:—"न मद्विधो दुष्कृत कर्मचारी ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—मद्विधः=मेरे जैसा । दुष्कृतकर्मचारी=पापकर्म करने वाला । वसुधरायां=पृथ्वी में । भिन्दन्=तोडते हुए । हृदयं=दिल को ॥३॥

अन्वयः—वसुन्धरायां मद्विधः दुष्कृत कर्मचारी द्वितीयः न अस्ति इति मन्ये परम्परायाः शोकानुशोकः हृदयं मनः च भिन्दन् मां एति ॥३॥

सरलार्थ—पृथ्वी पर मेरे जैसा पापकर्म करने वाला दूसरा कोई नहीं है ऐसा मैं मानता हूं। परम्परा से दुःख के पश्चात् दुःख ही दिल और मनको तोडता हुआ मुझे प्राप्त हो रहा है ॥३॥

श्लोक—"पूर्वं मया नूनमभीप्सितानि।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थः—अभीप्सितानि = अभिलषित । असकृत् = वार बार । विपाकः = कर्मफल । आपतितः = उपस्थित हो गया है । विशामि = प्रवेश करता हूं ॥४॥

अन्वयः—मया पूर्वं नूनं अभीप्सितानि पापानि कर्माणि असकृत् कृतानि तत्र अयं विपाकः अद्य आपतितः यत् अहं दुःखेन दुःखं विशामि ॥४॥

सरलार्थ—मैंने पूर्व जन्म में निश्चित इच्छित पाप कर्मो का आचरण वार वार किया है इसीलिए यह कर्मों का फल आज मुझे मिल गया है! आज मैं एक दुःख के वाद दूसरे दुःख का अनुभव कर रहा हूं ॥४॥

श्लोक—"राज्य प्रणाशः स्वजनै वियोगः।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—राज्य प्रणाशः = राज्य का नाश। स्वजनैः वियोगः = अपने आप्तजनों से विरह। जननी वियोगः = माता का विरह। शोकवेगं = चिंता के आवेग को। आपूरयन्ति = बढाते हैं ॥५॥

अन्वय—राज्य प्रणाशः स्वजनैः वियोगः पितुः विनाशः, जननी वियोगः हे लक्ष्मण! प्रविचिन्तितानि में शोकवेगं आपूरयन्ति ॥५॥

सरलार्थ—राज्य का नाश होना अर्थात् राज्य से भ्रष्ट होना, अपने परिवार से वियोग, पिताजी का देहान्त, और माता से विरह ये सब मैं ज्यों २ विचार करता हूं त्यों त्यों हे लक्ष्मण! मेरी चिन्ता के आवेग को वढाते रहते हैं ॥५॥

श्लोक—"सर्वं तु दुःखं मम लक्ष्मणेदम् ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थः—शरीरे=शरीर में । शान्तम्=समाप्त होना । वनम्=वन को । एत्य=आकर । सीता वियोगात्=सीता के विरह से । अभ्युदीर्णं= उत्पन्न । उपदीप्तः=प्रज्वलित ॥६॥

अन्वय—हे लक्ष्मण ! इदं सर्वं दुःखं मम शरीरे शान्तम् वनं एत्य सहसा उपदीप्तः काष्ठैः अग्निः इव सीता वियोगात् पुनः क्लेशं अभ्युदीर्णम् ॥६॥

सरलार्थः—हे लक्ष्मण ! यह सम्पूर्ण दुःख मेरे शरीर में ही शान्त हो गया था परन्तु वनमें आकर एकाएक प्रज्वलित लकडियों से अग्नि की तरह पुनः सीता के विरह से मेरा क्लेश बढ गया है ॥६॥

श्लोकः—"सा नूनमार्या मम राक्षसेन ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ—राक्षसेन=राक्षस के द्वारा । खं=आकाश को । उपेत्य= प्राप्त कर । व्युभ्याहृता=हरण की गई ।अपस्वरं=कर्णकटु । अभीक्ष्णम्= निरन्तर । सुस्वरविप्रलापा=सुन्दर विलाप करती हुई । विक्रन्दितवती= क्रन्दन किया, विलाप किया ॥७॥

अन्वय—राक्षसेन खं उपेत्य भीरुः सा मम आर्या व्युभ्याहृता सा भयेन अपस्वरं सुस्वर विप्रलापा अभीक्ष्णम् विक्रन्दितवती ॥७॥

सरलार्थ—राक्षस रावण के द्वारा आकाशमार्ग से डरपोक यह मेरी प्रिया सीता हरी गई है । वह भय से कर्णकटु तथा सुन्दर विलाप करती हुई निरन्तर बार बार करुण क्रन्दन करती थी ॥७॥

श्लोक—"मया विहीना विजने वने सा ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थं—मया=मेरे से । विहीना=रहित । रक्षोभिः=राक्षसों के द्वारा । आवृत्य=घिरी गई । विकृष्यमाणा=खींची जाती हुई । कुररीव=हरिणी की तरह । आयतकान्तनेत्रा=दीर्घ नयनं वाली । मुक्तवती=छोड दी ॥८॥

अन्वय—विजने वने मया विहीना सा रक्षोभिः आवृत्य विकृष्य माणा आयतकान्तनेत्रा सा दीना कुररीव नूनं विनादं मुक्तवती ॥८॥

सरलार्थ—निर्जन जंगल में मेरे से रहित अकेली छोड़ी गई वह राक्षसों के द्वारा घेरी जाकर खींची जाती हुई दीर्घनेत्र वाली सीता ने दीन हरिणी की भांति करुण पुकार की ॥८॥

श्लोक—"गोदावरीयं सरितां वरिष्ठा।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थः—सरितां=नदियों में। वरिष्ठा=श्रेष्ठ। नित्यकालं= सर्वदा। चिन्तयामि=सोचता हूं। याति=जाती है। एकाकिनी= अकेली ॥९॥

अन्वय—सरितां वरिष्ठा इयं गोदावरी मम प्रियाया नित्यकालम् प्रिया अपि अत्र गच्छेत् इति चिन्तयामि एकाकिनी सा कदाचित् न याति ॥९॥

सरलार्थः—नदियों में श्रेष्ठ यह गोदावरी मेरी प्राणप्रिया सीता की सदा प्यारी थी। अतः शायद वह वहां गई हो, ऐसा सोचता हूं। वह सीता कभी भी अकेली कहीं नहीं जाती है ॥९॥

श्लोकः—"पद्मानना पद्म विशाल नेत्रा।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थः—पद्म विशाल नेत्र=कमल के समान बड़ी आंखवाली। पद्मानि=कमलों को। आनेतुं=लाने के लिये। अभिप्रयाता=चली गई है। अयुक्तम्=ठीक नहीं है ॥१०॥

अन्वय—पद्मानना पद्मविशाल नेत्रा पद्मानि वा आनेतुं अभियाता तद् अपि अयुक्तम् सा कदाचित् मया विना पंकजानि नगच्छति ॥१०॥

सरलार्थः—कमल मुखी, कमल के समान बडे नेत्रवाली वह सीता कमलों को लेने वास्ते गई होगी परन्तु यह भी मेरा तर्क ठीक नहीं है क्योंकि वह कभी मेरे सिवाय कमल के फूल लेने के लिये नहीं जाती है ॥१०॥

श्लोक—"कामं त्विदं प्रस्थित वृक्षखण्डम् ।" इत्यादि ।।११।।

शब्दार्थ:—पक्षिगणैः=पक्षियों से । उपेतम्=युक्त । वृक्षषण्डम्=पेडोंका समूह । अति बिभेति=बहुत डरती है । भीरु:=डरपोक ।।११।।

अन्वय:—नानाविधैः पक्षिगणैः उपेतम् प्रस्थित वृक्षखण्डम् इदं वनं कामं प्रयाता तत् अपि अयुक्तम् सा भीरु: एकाकिनी अति बिभेति ।।११।।

सरलार्थ:—अनेक प्रकार के पक्षियों से युक्त वृक्ष समूह वाले इस वन में वह सीता स्वेच्छा से चली गई होगी यह भी तर्क संगत प्रतीत नहीं होता क्योंकि वह डरपोक अकेली बहुत डरा करती थी ।।११।।

श्लोक—'आदित्य भो लोक कृताकृतज्ञ ।" इत्यादि ।।१२।।

शब्दार्थ—लोक कृताकृतज्ञ=संसार के कर्म और अकर्म को जानने वाले । सत्यानृतकर्म साक्षिन्=सच और असत्यकर्म के साक्षी । शोकहतस्य=चिन्ता से पीडित । शंसस्व=बताओ ।।१२।।

अन्वय—लोक कृताकृतज्ञ ! लोकस्य सत्यानृत कर्मसाक्षिन् भो आदित्य ! सा मम प्रिया क्व गता हृता वा शोक हतस्य मे सर्वं शंसस्व ।।१२।।

सरलार्थ—संसार के कर्म और अकर्म के ज्ञाता तथा संसार के सत्य और असत्य कर्म के साक्षी हे सूर्यनारायण देव ? वह मेरी प्यारी सीता कहाँ चली गई अथवा हरी गई । चिन्ता से दु:खी मुझको सब कुछ बताओ ।।१२।।

श्लोक:—"लोकेषु सर्वेषु च नास्ति किंचित् ।" ।।१३।।

शब्दार्थ—सर्वेषु लोकेषु=समस्त विश्व में । कुलपालिनीं=वंश की मर्यादा के पालन करने वाली । मृता=मर गई । पथि=रास्ते में ।।१३।।

अन्वय—सर्वेषु लोकेषु किंचित् नास्ति यत् ते नित्यं विदितं तत् न भवेत् हे वायो ! कुल पालिनीं तां शंसस्व मृता हृता वा पथि वर्तते ।।१३।।

सरलार्थ—सारे विश्व में ऐसी कुछ भी चीज नहीं है जो तुम नहीं जानते हो,'पवन ? कुल की मर्यादा का पालन करने वाली उस सीता के विषय में बताओ। वह मरी, हरी गई है या कहीं रास्ते में है ॥१३॥

श्लोक—"इतीव तं शोकाविधेय देहं।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ—शोकाविधेय देहं=चिन्ता से परतन्त्र शरीरवाले। विसंज्ञं=वेहोश। विलपन्तं रामं=विलापकरते हुए रामको। अदीन सत्त्वं=पराक्रमी। कालयुतं=समयोचित ॥१४॥

अन्वय:—अदीनसत्त्व: न्याये स्थित: सौमित्रि: शोका विधेय देहं इतीव विलपन्तं विसंज्ञं तं रामं कालयुतं वाक्यम् उवाच ॥१४॥

सरलार्थ—महान् पराक्रमी और न्याय मार्ग में रहने वाले लक्ष्मण चिन्ता से परतन्त्र शरीर वाले इस प्रकार विलाप करते हुए और वेहोश राम को समयोचित वचन कहने लगे ॥१४॥

श्लोक—"शोकं विमुञ्चार्य धृतिं भजस्व।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ—शोकं=चिंता को। विमुञ्च=छोडिये। धृतिं=धीरजको। भजस्व=धारण करो। सोत्साहता=उत्साह। विमार्गणे=खोजने में ॥१५॥

अन्वय:—हे आर्य! शोकं मुञ्च धृतिं भजस्व अस्या: विमार्गणे सोहत्साहता अस्तु हि उत्साहवन्त: नरा: लोके अति दुष्करेषु कर्मसु न सीदन्ति ॥१५॥

सरलार्थ—हे आर्य! चिंता को छोडिये और धीरज धारण कीजिये। सीता को ढूंढने में उत्साह रखना चाहिये क्योंकि संसार में उत्साह शक्ति से सम्पन्न लोग अत्यन्त कठिन कार्यों में भी विमोहित नहीं होते हैं ॥१५॥

श्लोक—"इतीव सौमित्रि मुदग्रपौरुषम्।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—उदग्रपौरुषं=महान् पराक्रमी को। आर्त:=दु:खी। ब्रुवन्तं=बोलते हुये को। धृतिं=धीरज को। अभ्युपागमत्=प्राप्त किया। विमुक्तवान्=छोड दिया ॥१६॥

अन्वय—आर्तः रघुवंश वर्धनः इतीव उदग्रपौरुषं ब्रुवन्तं सौमित्रि न चिन्तयामास धृतिं विमुक्तवान् पुनः महत् दुःखं अभ्युपा गमत् ॥१६॥

सरलार्थ—प्रिया के वियोग से दुःखी श्री राम ने इस प्रकार अत्यन्त पराक्रम की बात करने वाले लक्ष्मण के कहने पर ध्यान नहीं दिया और उन्होंने धीरज छोड दिया। फिर से वे बड़े दुःखी हो गये ॥१६॥

—०००—

किष्किन्धा-काण्डम्

प्रथमः सर्गः

रामसुग्रीवसख्यम्

श्लोक—"ऋष्यमूकात्तु हनुमान्।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—ऋष्यमूकात्=ऋष्यमूक पर्वत से। गत्वा=जाकर। मलयं गिरिं=मलयाचल को। कपिराजाय=सुग्रीव को ॥१॥

अन्वयः—हनुमान् ऋष्यमूकात् तं मलयं गिरिं गत्वा तदा राघवौ वीरौ कपिराजाय आचचक्षे ॥१॥

सरलार्थ—तब हनुमान्जी ने ऋष्यमूक पर्वत से मलयाचल पर्वत को जाकर बन्दरों के राजा सुग्रीव को दोनों वीर श्रेष्ठ राम और लक्ष्मण के आने की खबर दी ॥१॥

श्लोक—"अयं रामः महाप्राज्ञः इति ॥२॥

शब्दार्थः—महाप्राज्ञः=बुद्धिमान्। दृढविक्रमः=महान् पराक्रमी। लक्ष्मणेन सह=लक्ष्मण के साथ ॥२॥

अन्वय—अयं दृढ विक्रमः महाप्राज्ञः रामः संप्राप्तः भ्राता लक्ष्मणेन सह अयं सत्य विक्रमः रामः अस्ति ॥२॥

सरलार्थ—ये दृढ प्रतापी तथा बुद्धिमान् राम यहाँ आये हैं। भाई लक्ष्मण के साथ ये सत्य पराक्रम वाले राम यहाँ उपस्थित हैं।

श्लोक—"इक्ष्वाकूणां कुले जातः।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—इक्ष्वाकूणां=इक्ष्वाकुराजाओं के। कुले=वंश में। धर्मे=धर्म में। निरतः=तत्पर। निर्देश पालकः=आज्ञा का पालन करने वाले ॥३॥

अन्वय—दशरथात्मजः रामः इक्ष्वाकूणां कुले जातः धर्मे निरतः पितुः निर्देश पालकः अस्ति ॥३॥

सरलार्थ—दशरथ पुत्र श्रीराम इक्ष्वाकु राजाओं के वंशमें उत्पन्न हुये है। वे धर्म में तत्पर तथा पिता की आज्ञाओं का पालन करने वाले हैं ॥३॥

श्लोक—"तस्यास्य वसतोऽरण्ये।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—तस्य=राम की। अरण्ये वसतः=जंगल में रहते हुये। शरणं आगतः=शरण में आये हैं ॥४॥

अन्वय—तस्य महात्मनः नियतस्य अरण्ये वसतः रावणेन भार्या हृता सः त्वां शरणं आगतः ॥४॥

सरलार्थ—नियमों का पालन करने वाले, जंगल में निवास करने वाले उस महात्मा राम की स्त्री का रावण के द्वारा हरण किया गया है अतः वे आपकी शरण में आये हैं ॥४॥

श्लोक—"श्रुत्वा हनुमतो वाक्यम्।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—हनुमतः=हनुमानजी का। वाक्यं=वचन को। वानराधिपः=बन्दरों के राजा। प्रीत्या=प्रेम से। दर्शनीयतमो भूत्वा=सुंदर बनकर ॥५॥

अन्वयः—हनुमतः वाक्यं श्रुत्वा वानराधिपः सुग्रीवः दर्शनीयतमो भूत्वा राघवं प्रीत्या उवाच ॥५॥

सरलार्थ—पवन पुत्र हनुमान् का वाक्य सुनकर वन्दरों के राजा सुग्रीव अत्यन्त सुन्दर बनकर श्रीराम को प्रेम से बोले ॥५॥

श्लोक—"रोचते यदि मे सख्यम् ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—मे=मेरी । सख्यम्=मित्रता । रोचते=चाहते हो । बाहुः प्रसारितः=मित्रता का हाथ वढाया है । ध्रुवा=निश्चल ॥६॥

अन्वय—यदि मे सख्यं रोचते एषः बाहुः प्रसारितः पाणिना पाणिः गृह्यताम् ध्रुवा मर्यादा वध्यताम् ॥६॥

सरलार्थ—आप यदि मेरी मित्रता चाहते हैं तो यह मैंने मित्रता का हाथ वढाया है । हाथ से हाथ को पकड़ लीजिये और अचल रहने वाली मर्यादा को बांधिये ॥६॥

श्लोकः—"एतत्तु वचनं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—सुभाषितम्=सुन्दर उक्ति को । सुग्रीवस्य=सुग्रीव के । संप्रहृष्टमनाः=प्रसन्नचित्त । हस्तं पीडयामास=हाथ को मिलाया ॥७॥

अन्वय—सुग्रीवस्य एतत् सुभाषितं वचनम् श्रुत्वा संप्रहृष्टमनाः रामः पाणिना हस्तं पीडया मास ॥७॥

सरलार्थ—सुग्रीव के इस सुन्दर कथन को सुनकर प्रसन्नचित श्री रामने अपने हाथ के द्वारा हाथ को मिलाया ॥७॥

श्लोकः—"ततोऽग्निं दीप्यमानम् ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—दीप्यमानम्=प्रज्वलित । प्रदक्षिणं=प्रदक्षिणा । अग्निम्=अग्नि की । वयस्यत्वम्=मित्रता को ॥८॥

अन्वयः—ततः तौ दीप्यमानं अग्निं प्रदक्षिणं चक्रतुः सुग्रीवः राघवः वयस्यत्वम् उपागतौ ॥८॥

सरलार्थ:—उसके बाद दोनों प्रज्वलित अग्नि की प्रदक्षिणा की सुग्रीव और राम दोनों इस प्रकार मित्र हो गये ॥८॥

सुग्रीव उवाच—

श्लोक:—"प्रत्युवाच तदा रामम् ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ:—प्रत्युवाच=प्रत्युत्तर दिया । हर्ष व्याकुल लोचन:=आनन्द से प्रसन्ननयन वाला । भयार्दित:=भय से पीडित । विनिकृत:=तिरस्कृत ॥९॥

अन्वय—तदा हर्ष व्याकुल लोचनः सुग्रीवः रामं प्रत्युवाच हे राम ! अहं विनिकृत: इह चरामि ॥९॥

सरलार्थ:—तब हर्ष से प्रफुल्लित नयन वाला सुग्रीव राम को कहने लगा हे राम ! मैं भी वाली के द्वारा तिरस्कृत होकर भय से पीडित होता हुआ इस पर्वत पर भ्रमण करता हूं ॥९॥

श्लोक—"हृत भार्या वने त्रस्त: इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ:—हृत भार्य:=हरण की गई स्त्री वाला । त्रस्त:=दु:खी । उपामित:=आश्रय लिया है । उद्भ्रान्त चेतन:=विक्षिप्त मनवाला ॥१०॥

अन्वय:—हृत भार्य: त्रस्त: वने एतत् दुर्गम् उपाश्रित: स: अहं त्रस्त: उद्भ्रान्त चेतन: भीत: वने वसामि ॥१०॥

सरलार्थ—चुराई गई स्त्री वाला एवं दु:खी होकर इस वन में मैंने इस किले का आश्रय लिया है । वह मैं दु:खी और विक्षिप्त मनवाला भय भीत मैं वन में रहता हूं ॥१०॥

राम उवाच—

श्लोक:—"प्रत्य भाषत काकुत्स्य: इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—सुग्रीवं=सुग्रीव को । प्रहसन् इव=हंसते हुए । विदितम्= प्रसिद्ध है । उपकार फलम् मित्रं=उपकार ही मित्रता का फल है ॥११॥

अन्वय—काकुत्स्य: सुग्रीवं प्रहसन् इव प्रत्य भाषत हे महाकपे ! उपकालं मित्रं मे विदितम् ॥११॥

सरलार्थः—श्रीराम ने सुग्रीव की बात सुन कर हंसते हुये इस प्रकार उत्तर दिया। हे मित्र! उपकार ही मित्र का फल है। यह संसार में प्रसिद्ध है ॥११॥

श्लोक—"वालिनं तं वधिष्यामि।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थः—भार्यापहारिणम्=स्त्री का अपरण करने वाले वाले। तव=तुम्हारे। वधिष्यामि=मारूंगा। सूर्य संकाशाः=सूर्य के सदृश तेजस्वी। शराः=बाण। निशिताः=तीक्ष्ण। अमोघाः=सफल ॥१२॥

अन्वय—तव भार्यापहारिणं तं वालिनं वधिष्यामि मम एते निशिताः शराः सूर्यसंकाशाः अमोघाः ॥१२॥

सरलार्थः—तुम्हारी स्त्री का अपहरण करने वाले उस वाली को मैं मारूंगा। मेरे ये तीक्ष्ण बाण सूर्य के समान तेजस्वी तथा सफल हैं ॥१२॥

सुग्रीव उवाच—

श्लोकः—"पुनरेवाब्रवीत् प्रीतः।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थः—प्रीतः=प्रसन्न। अब्रवीत्=बोला। मे=मेरा। सचिवः=मंत्री। मन्त्रिसत्तमः=मंत्रियों में श्रेष्ठ। आख्याति=कहता है ॥१३॥

अन्वयः—प्रीतः सुग्रीवः रघुनन्दनं पुनः एव अब्रवीत् हे राम! मंत्रिसत्तमः मे सचिवः अयं आख्याति ॥१३॥

सरलार्थः—प्रसन्नचित्त सुग्रीव ने श्रीराम को फिर कहा—हे राम! मंत्रियों में श्रेष्ठ मेरा मंत्री यह कहता है ॥१३॥

श्लोक—"रक्षसापहृता भार्या।" ॥१४॥

शब्दार्थ—रुदती=रोती हुई। रक्षसा=राक्षस के द्वारा। अपहृता हरण की गई। वियुक्ता=बिछुड़ी हुई ॥१४॥

अन्वय—त्वया धीमता लक्ष्मणेन च वियुक्ता रुदती जनकात्मजा मैथिली तव भार्या रक्षसा अपहृता ॥१४॥

सरलार्थ—तुम्हारे से और बुद्धिमान् लक्ष्मण से बिछुड़ी हुई तथा रुदन करती हुई जनक की पुत्री मैथिली जोकि तुम्हारी पत्नी है, वह राक्षस के द्वारा हरण की गई है ॥१४॥

श्लोकः—"अन्तर प्रेप्सुना तेन ।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थः—अन्तर प्रेप्सुना=अवतर की खोज में रहने वाले । तेन=रावण के द्वारा । हत्वा=मार कर । अचिरात्=शीघ्र । भार्या वियोगजं=स्त्री के विरह से उत्पन्न ॥१५॥

अन्वयः—अन्तर प्रेप्सुना तेन जटायुषं गृध्रं हत्वा रुदती जानकी हृता, अचिरात् त्वं भार्या वियोगजं दुःखं विमोक्ष्यसे ॥१५॥

सरलार्थः—अवसर की खोज में रहने वाले उस राक्षस रावण ने मौका पाकर सीता को हर लिया और आपके सहायक जटायु का वध करके आपको पत्नी वियोग का दुःख दिया । किन्तु चिन्ता न करें, आप शीघ्र ही इस दुःख से छुटकारा पा जायेंगे ॥१५॥

श्लोकः—अहं तामानयिष्यामि ॥इति॥१६॥

शब्दार्थः—आनयिष्यामि=ले आऊँगा । तां=उस सीता को । वेद श्रुति=वेदवाणी को । रसातले=पाताल में । वर्तन्तीं=रहती हुई को । नभःथले=आकाश में ॥१६॥

अन्वयः—यथा नष्टां वेद श्रुति अहं रसातले वर्तन्तीं= वा नभस्थले वर्तन्तीं तां आनयिष्यामि ॥१६॥

सरलार्थः—मैं राक्षस के द्वारा हरी गई वेदवाणी के समान आपकी पत्नी को वापस ला दूंगा । आपकी भार्या सीता आकाश में हो पाताल में उन्हें लाकर आपकी सेवा में अर्पण कर दूंगा ॥१६॥

श्लोकः—"अहमानीय दस्यानि इत्यादि ।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थः—आनीय=लाकर । दास्यामि=दूंगा । इदं=यह । सत्यं=सत्य । वचः=वचन को । अवेहि=समझो ॥१७॥

अन्वय—हे अरिन्दम ! तव भार्यां अहं आनीय दास्यामि हे राघव ! इदं मम तथ्यं वचः त्वं अवेहि ॥१७॥

सरलार्थ:—हे शत्रुओं का दमन करने वाले ! तुम्हारी पत्नी सीता को मैं लाकर दूंगा। हे राम. ! तुम मेरे इस वचन को सत्य समझो ॥१७॥

श्लोक—"अनुमानात्तु जानामि ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—अनुमानात्=अनुमान से। जानामि=जानता हूं। संशयः= संदेह। रौद्रकर्मणा=भयंकर कर्म वाले। रक्षसा=राक्षस के द्वारा ॥१८॥

अन्वय—रौद्रकर्मणा रक्षसा ह्रियमाणा मया दृष्टा अनुमानात् जानामि सा मैथिली न संशयः ॥१८॥

सरलार्थ—क्रूर कर्म वाले राक्षस रावण के द्वारा हरी गई सीता मेरे से देखी गई है। अनुमान से मैं जानता हूं कि वह सीता थी इसमें सन्देह नहीं है ॥१८॥

श्लोक—"क्रोशन्ति राम रामेति" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—क्रोशन्ती=चिल्लाती हुई। विवस्वरम्=करुणा भरी आवाज से। अंङ्के=गोद में। पन्नगेन्द्र वधूः=सर्पिणी ॥१९॥

अन्वय—राम राम इति हे लक्ष्मण इति विवस्वरं क्रोशन्ती यथा पन्नगेन्द्र वधूः रावणस्य अङ्के स्फुरन्ती दृष्टा ॥१९॥

सरलार्थ—वह सीता टूटे हुए करुणा भरी आवाज में 'हा. राम ! हा लक्ष्मण ! पुकारती हुई रो रही थीं। रावण की गोद में वे नागवधू की भांति देदीप्यमान दिखाई देती थीं ॥१९॥

श्लोक—"आत्मना पञ्चमं मां हि ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—आत्मना=स्वयं को लेकर। पंचमं=पांचवें। शैलतटे स्थितं=पर्वत पर बैठे। उत्तरीयं=चादर। त्यक्तं=गिराया ॥२०॥

अन्वय—शैलतटे स्थितं आत्मना पंचमं मां दृष्ट्वा तया उत्तरीयं शुभानि आभरणानि च त्यक्तम् ॥२०॥

सरलार्थ—मुझे चार वानरों के साथ इस ऋष्य मूक पर्वत पर बैठा देख कर उन्होंने अपनी चादर और कई सुन्दर आभूषण ऊपर से गिराये ॥२०॥

श्लोक—"तान्यस्माभि र्गृहीतानि ।" इत्यादि ॥२१॥

शब्दार्थ—अस्माभिः=हम लोगों ने । निहितानि=रक्खे गये हैं । प्रत्यभिज्ञातुं=पहचानने के लिए ॥२१॥

अन्वयः—हे राघव ! तानि अस्माभिः गृहीतानि निहितानि अहं तानि आनयिष्यामि प्रत्यभिज्ञातुम् अर्हसि । ॥२१॥

सरलार्थः—वे सब वस्तुएं हम लोगों ने लेकर रखली हैं । मैं अभी उन्हें लाता हूं । आप पहचानिये ॥२१॥

आभूषण-प्रत्यभिज्ञानम्

श्लोकः—"एवमुक्त्वा तु सुग्रीवः ।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ—शैलस्य=पर्वत के । गहनां=गंभीर दुर्गम । गुहा=गुफा को । राघवप्रिय काम्यया=राम की भलाई की इच्छा से ॥२२॥

अन्वय—सुग्रीवः एवं उक्त्वा ततः राघवप्रियकाम्यया शीघ्रं शैलस्य गहनां गुहां प्रविवेश ॥२२॥

सरलार्थः—सुग्रीव ने ऐसा कह कर राम की भलाई करने की इच्छा से शीघ्र ही उस दुर्गम पर्वत की गुफा में गये ॥२२॥

श्लोकः—"उत्तरीयं गृहीत्वा तु ।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थः—उत्तरीयं=चादर को । गृहीत्वा=पकड़कर । पश्य=देखिये । वानरः=बन्दर । दर्शयामास=दिखलाया ॥२३॥

अन्वय—वानरः इदं पश्य इति उत्तरीयं तानि आभरणानि च गृहीत्वा रामाय दर्शयामास ॥२३॥

सरलार्थ:—सुग्रीव ने कहा "यह देखिये" ऐसा कह कर उस चादर और सुन्दर अलंकारों को लाकर राम को दिखलाये ॥२३॥

श्लोक:"—ततो गृहीत्वा वासस्तु ।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ:—वास:=वस्त्र । वाष्पसंरुद्ध:= आंसुओं से जिसका गला भर गया है । नीहारेण=ओस से ॥२४॥

अन्वय—नीहारेण चन्द्रमा: इव स: तत: वास: शुभानि आभरणानि च गृहीत्वा वाष्पसंरुद्ध: अभवत् ॥२४॥

सरलार्थ—ओस से चन्द्रमा की भांति उसके बाद उन वस्त्र और आभूषणों को लेकर श्री राम आंसू बहाने लगे ॥२४॥

राम उवाच

श्लोक—"पश्य लक्ष्मण वैदेह्या ।" ॥२५॥

शब्दार्थ—वैदेह्या=सीता के द्वारा । सन्त्यक्तं=छोड़ा गया । भूमौ= पृथ्वी पर । शरीरात्=शरीर से ॥२५॥

अन्वय—ह्रियमाणया वैदेह्या शरीरात् भूमौ सन्त्यक्तं इदं उत्तरीयं आभूषणानि च हे लक्ष्मण पश्य ॥२५॥

सरलार्थ:—हरी जाती हुई सीता के द्वारा शरीर से पृथ्वी पर गिराया गया यह उत्तरीय वस्त्र तथा इन अलङ्कारों को हे लक्ष्मण देखो ॥२५॥

श्लोक—"एवमुक्तस्तु रामेण ।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ— न जानामि=नहीं जानता हूं । केयूरं=भुजबंद । कुण्डले= कर्णफूल ॥२६॥

अन्वय:—रामेण एवं उक्त: लक्ष्मण: वाक्यं अब्रवीत् अहं केयूरं न जानामि अहं कुण्डले न जानामि ॥२६॥

सरलार्थ—राम के द्वारा इस प्रकार कहे गये लक्ष्मण कहने लगे— मैं तो भुजबंद एवं कर्ण फूलों को नहीं पहचानता हूं ॥२६॥

श्लोक:—"नूपुरे त्वभिजानामि ।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थः—नूपुरे=पैरों के आभूषणों को, पायल । पादाभिवन्दनात्= पैरों में नमस्कार करने से । दीनः=उदास ॥२७॥

अन्वय—नित्यं पादाभिवन्दनात् नूपुरे तु अभिजानामि ततः दीनः सः राघवः सुग्रीवं इदं अब्रवीत् ॥२७॥

सरलार्थ—किन्तु प्रतिदिन उनके चरणों में नमस्कार करने के कारण इन दोनों नूपुरों को अवश्य जानता हूं । उदास राम सुग्रीव को इस प्रकार कहने लगे ॥२७॥

श्लोक—"ब्रू हि सुग्रीव कं देशं ।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थः—ब्रूहि=कहो । ह्रियन्ती=हरीजाती । लक्षिता=देखी । रौद्र रूपेण=भयंकर रूप वाले ॥२८॥

अन्वय—हे सुग्रीव ! ब्रूहि त्वया कं देशं ह्रियन्ती रक्षिता रौद्ररूपेण रक्षसा मम प्राणप्रिया हृता ॥२८॥

सरलार्थ—हे सुग्रीव ! कहो—तुमने किस देश को हरी जाती सीता को देखा है । भयंकर रूप वाले राक्षस के द्वारा मेरी प्राणप्रिया हरी गई है ॥२८॥

श्लोक—"क्व वा वसति तद्रक्षः ।" इत्यादि ॥२९॥

शब्दार्थ—रक्षः=राक्षस । व्यसनदं=दुःखदायी । नाशयिष्यामि=नष्ट करूंगा ॥२९॥

अन्वय—मम महत् व्यसनदं= तत् रक्षः क्व वा वसति यत् निमित्तं अहं सर्वं राक्षसान् नाशयिष्यामि ॥२९॥

सरलार्थ—मुझे बड़ा दुःख देने वाला वह राक्षस कहाँ रहता है । जिसके कारण मैं सब राक्षसों को नष्ट कर दूंगा ॥२१॥

— श्लोक—"हरता मैथिलीं येन ।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ—हरता=हरण करते हुए । मृत्युद्वारं=मौत का दरवाजा । अपावृतं—खोला है ॥३०॥

अन्वय:—येन मैथिलीं हरता भृशं मां रोषयता आत्मनः जीवितान्ताय मृत्युद्वारं अपावृतम् ॥३०॥

सरलार्थ—हे वानरराज ! जिस निशाचर ने सीता का अपहरण करके मेरे क्रोध को भड़काया है। उसने अपने जीवन का अन्त करने के लिये निश्चय ही मौत का दरवाजा खोल दिया है ॥३०॥

——०○——

द्वितीय सर्गः

रामेण वर्षावर्णनम्

श्लोक—"स तथा वालिनं हत्वा।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ:—वालिनं=वालि को। हत्वा मार कर। अभिषिच्य=अभिषेक कर। माल्यवतः=माल्यवान् पर्वत के। वसन्=रहते हुए ॥१॥

अन्वय:—सः रामः तथा वालिनं हत्वा सुग्रीवं अभिषिच्य माल्यवतः पृष्ठे वसन् लक्ष्मणं अब्रवीत् ॥१॥

सरलार्थ:—वह श्रीराम वाली को मार कर और राज्य पर सुग्रीव का अभिषेक कर माल्यवान् पर्वत पर रहते हुए लक्ष्मण से कहने लगे ॥१॥

श्लोक—"अयं स कालः संप्राप्तः।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—संप्राप्त=आगया है। जलागमः=वर्षा ऋतु। नभः=आकाश को। संवृतं=घिरा हुआ। गिरि संनिभैः=पर्वत के सदृश ॥२॥

अन्वय:—अद्य जलागमः समयः अयं सः कालः संप्राप्तः त्वं गिरि-संनिभैः मेघैः संवृतं नभः संपश्य ॥२॥

सरलार्थ:—आज यह वर्षा का समय है, यह वह समय आगया है। हे लक्ष्मण ! तुम बादलों से घिरे आकाशमण्डल की शोभा को देखो ॥२॥

श्लोक:—"नवमासघृतं गर्भम् ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ:—नवमासघृतं=नौ महीने तक धारण किया गया । गर्भं=गर्भ को । भास्करस्य=सूर्य की । गभस्तिभि: किरणों से । रसं=जल को । पीत्वा=पीकर । द्यौ:=स्वर्ग । प्रसूते=पैदा करती है ॥३॥

अन्वय—भास्करस्य गभस्तिभि: समुद्राणां रसं पीत्वा द्यौ: रसायनम् नवमास घृतं गर्भं प्रसूते ॥३॥

सरलार्थ—सूर्य की किरणों से समुद्र की जलराशि का पान कर स्वर्ग ने रसायनरूप नौमास से धारण किये गये गर्भ को उत्पन्न किया ।

श्लोक—"मेघकृष्णाजिनधरा" । इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ:—मेघकृष्णाजिनधरा:=मेघ रूप कृष्ण मृगचर्म को धारण करने वाले । धारायज्ञोपवीतिन:=धारा रूप यज्ञोपवीत वाले । मारुतापूरित-गुहा:=पवन से भरी हुई गुफा वाले ॥४॥

अन्वय:—मेघकृष्णा जिनधरा: धरायज्ञोपवीतिन: मारुतापूरितगुहा: प्राधीता इव पर्वता: दृश्यन्ते ॥४॥

सरलार्थ:—मेघरूप कृष्णमृगचर्म को धारण करने वाले तथा धारा रूप ही यज्ञोपवीत वाले, तथा पवन से परिपूर्ण गुफा वाले अध्ययनशील ब्रह्मचारी की तरह पर्वत दिखाई देते हैं ॥४॥

श्लोक—"नील मेघाश्रिता विद्युत् ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ:—नीलमेघाश्रिता=नीले मेघ में रहने वाली । विद्युत्=बिजली । रावणस्य=रावण के । अंके=गोद में । स्फुरन्ती=चमकती ॥५॥

अन्वय:—रावणस्य अंके स्फुरन्ती तपस्विनी वैदेही इव नील मेघा-श्रिता स्फुरन्ती विद्युत् मे प्रतीभाति ॥५॥

सरलार्थ:—रावण की गोद में स्फुरायमाण तपस्विनी सीता की तरह इस वर्षा ऋतु में नीले बादलों में रहने वाली बिजली का चमकना मुझे मालूम होता है ॥५॥

श्लोक:—"रज: प्रशान्तं सहिमोऽद्य वायु: ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ:—रज:=धूल । सहिम:=ठंडा । निदाघदोषप्रसरा:=ग्रीष्म-ऋतु के समस्त दोष । वसुधाधिपानां=राजाओं की । स्थिता=स्थगित हो गई ॥६॥

अन्वय:—रज: प्रशान्तम् अद्य सहिम: वायु: निदाघदोषप्रसरा: प्रशान्ता: वसुधाधिपानां यात्रा स्थिता प्रवासिन: नरा: स्वदेशान् यान्ति ॥६॥

सरलार्थ:—वर्षा ऋतु के आजाने पर धूल का उडना बन्द हो गया। ठंडी २ वायु चलने लगी है। ग्रीष्म ऋतु के समस्त दोष शान्त हो गये हैं। राजाओं की विजय यात्राएं स्थगित हो गई और विरही राहगीर वर्षाकाल होने के कारण अपने २ देश मे लौट रहे हैं।

श्लोक:—"विद्युत्पताका: सबलाकमाला: ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ:—विद्युत्पताका:=बिजली रूप ध्वजा वाली। शैलेन्द्रकूटा-कृतिसंनिकाशा:=हिमालय के शिखरों के समान स्वच्छ । समुदीर्णनादा:= गर्जना की ध्वनि से संयुक्त । संयुगस्था:=युद्ध में खडे ॥७॥

अन्वय:—संयुगस्था: मत्ता: गजेन्द्रा: इव शैलेन्द्रकूटाकृतिसंनिकाशा: सबलाकमाला: विद्युत्पताका: समुदीर्णनादा: मेघा: गर्जन्ति ॥७॥

सरलार्थ:—युद्ध भूमि में खडे मदमस्त हाथियों की तरह हिमालय के शिखर के समान स्वच्छ, बगुलों की पंक्ति रूपी माला धारण किये हुए बिजली रूप पताकाओं से समन्वित प्रचण्ड ध्वनि वाले बादल इस वर्षाऋतु में गरजते हैं ॥७॥

श्लोक:—"वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—ध्यायन्ति=स्मरण करते हैं। शिखिन:=मोर। प्लवङ्गा:= बन्दर। वनान्ता:=वन के भाव। नदन्ति=चिघाडते हैं ॥८॥

अन्वय:—नद्य: वहन्ति घना: गर्जन्ति मत्तगजा: नदन्ति वनान्ता: भान्ति प्रियाविहीना: ध्यायन्ति। शिखिन: नृत्यन्ति प्लवङ्गा: समाश्वसन्ति ॥८॥

सरलार्थ—इस सुहावनी वर्षा ऋतु में नदियां कल कल करती हुई वहती हैं। वादल जरजते हैं। मद से मतवाले हाथी चिघाडते हैं। वनों की शोभा और वढ कई है। मोर नाचते हैं और वन्दर किलकारियां करते हैं ॥८॥

श्लोक—"अङ्गार चूर्णोत्करसंनिकाशैः।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—अङ्गारचूर्णोत्कर संनिकाशैः=वह्नि के स्फुलिङ्गों के समान सुन्दर। सुपर्याप्तरसैः=वहुत रस वाले। शाखाः=डालियां। पट्पदौघैः=भौरों के समूह से। प्रविभान्ति=सुशोभित होती हैं ॥९॥

अन्वय—अयं वर्षाकालः अङ्गारचूर्णोत्कर संनिकाशैः सुपर्याप्तरसैः फलैः समृद्धः जवुद्रुमाणां शाखाः पट्पदौघैः निलीयमाना इव प्रविभान्ति ॥९॥

सरलार्थ—यह वर्षाऋतु अग्नि के स्फुलिङ्गों के सदृश वहुत रसीले फलों से समृद्ध दृष्टिगोचर होती है। जामुन वृक्षों की डालियां भौरों के झुण्ड से घिरी हुई सुशोभित मालूम होती है ॥९॥

श्लोकः—"तडित्पताकाभिरलंकृतानाम्।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थः—तडित्पताकाभिः=विजली रूप ध्वजाओं से। अलंकृतानां=सुशोभित। उदीर्ण गम्भीरमहारवाणां=उत्पन्न गर्जन ध्वनि से समन्वित। रणोद्यतानां=युद्ध के लिये तैयार। वारणानामिव=हथियारों की तरह ॥१०॥

अन्वयः—रणोद्यतानां वारणानाम् इव तडित्पताकाभिः अलंकृतानां उदीर्णगंभीरमहारवाणां वलाहकानां रूपाणि विभान्ति ॥१०॥

सरलार्थः—इस वर्षा ऋतु में युद्ध के लिये तत्पर हाथियों की तरह विजली रूप पताकाओं से सुशोभित तथा उत्पन्न गम्भीर गर्जना वाले वादलों का सौंदर्य और अधिक सुशोभित होता है ॥१०॥

श्लोकः—"क्वचित्प्रगीता इव पट्पदौघैः।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ:—षट्पदौघैः=भौरों से। नीलकंठैः=मयूरों से। अनेकाश्रयिणः=अनेक प्राणियों को आश्रय देने वाले। वारणेन्द्रैः=श्रेष्ठ हाथियों से ॥११॥

अन्वय—क्वचित् षट्पदौघैः प्रगीता इव क्वचित् नीलकंठैः प्रनृत्ता इव क्वचित् वारणेन्द्रैः प्रमत्ता इव अनेकाश्रयिणः वनान्ताः विभान्ति ॥११॥

सरलार्थ—इस वर्षाकाल में कहीं कहीं भौरों के गुंजन से समन्वित, कहीं कहीं पर मयूरों के नृत्य से युक्त, कहीं कहीं पर हाथियों से मदमस्त, अनेक लोगों को आश्रय देने वाले बन के भाग सुशोभित हैं ॥११॥

श्लोक—"षट्पादतन्त्री मधुराभिधानम् ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—षट्पादतन्त्रीमधुराभिधानम्=भ्रमर रूप वीणा के मधुर तारों से झंकृत। प्लवङ्गमोदीरित कण्ठतालम्=वंदरों की हूक रूप ताल वाला। मेघमृदङ्गनादैः=मेघ रूप ढोल की आवाज से ॥१२॥

अन्वयः—षट्पादतन्त्री मधुराभिधानम् प्लवङ्गमोदीरितकण्ठतालम् मेघमृदंगनादैः आविष्कृतं वनेषु संगीतम् प्रवृत्तम् इव ॥१२॥

सरलार्थः—भ्रमर रूप वीणा के सुरीले तारों से झंकृत, बन्दर की किलकारी रूप ताल वाला, और बादल रूप ढ़ोलक की ध्वनि से स्पष्ट इस वर्षाकाल में वनों के अन्दर संगीत छिड़ गया हैं ॥१२॥

श्लोकः—"क्वचित्प्रनृत्तैः क्वचिदुन्नदद्भिः ।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थः—प्रवृत्तैः=नाचते हुए। उन्नदद्भिः=केकाध्वनि करने वाले। वृक्षाग्रनिषण्णकायैः=वृक्ष की चोटियों पर बैठे हुये। व्यालम्बवर्हाभरणैः=लटकते हुये पिच्छों से सुशोभित ॥१३॥

अन्वयः—क्वचित् प्रनृत्तैः क्वचित् वृक्षाग्रतिषण्ण कायैः व्यालम्बबर्हाभरणैः मयूरैः वनेषु संगीतम् प्रवृत्तम् इव ॥१३॥

सरलार्थः—कहीं पर नृत्य करते हुये तथा कहीं पर वृक्षों की चोटियों पर वैठे हुये लटकते हुये पिच्छों से सुशोभित मयूरों ने मानो इस वन में संगीत की तान छेड़दी है ॥१३॥

श्लोक—"मत्ता गजेन्द्रा मुदिता गवेन्द्राः ।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थः—मत्ताः=मतवाले । गजेन्द्राः=हाथी । मुदिताः=प्रसन्न । गवेन्द्राः=बैल । मृगेन्द्राः=सिंह । नगेन्द्राः=पर्वत । निभृताः=निश्चिन्त । नरेन्द्राः=राजा । सुरेन्द्रः=इन्द्र ॥१४॥

अन्वयः—गजेन्द्राः मत्ताः गवेन्द्राः मुदिताः मृगेन्द्राः विश्रान्ततराः नगेन्द्राः निभृताः वनेषु सुरेन्द्रः वारिधरैः प्रक्रीडितः ॥१४॥

सरलार्थः—इस वर्षा ऋतु में हाथी मतवाले होकर झूमते हैं । बैल प्रसन्न हो गये हैं । सिंह भी इस विश्राम में तल्लीन हैं । पर्वत बड़े सुहावने लगते हैं और राजा लोग वर्षा के कारण निश्चिन्त हो गये हैं । इस सुहावनी मौसम में वन में इन्द्र बादलों के साथ क्रीडा करता है ॥१४॥

श्लोकः—"घनोपगूढं गगनं सतारम् इत्यादि ।" ॥१५॥

शब्दार्थः—घनोपगूढं=मेघाच्छन्न । गगनं=आकाश । सतारं=ताराओं सहित । भास्करः=सूर्य । जलौघैः=जलप्रवाह से । धरणी=पृथ्वी । वितृप्ता=तृप्त हो गई । तमोविलिप्ताः=अंधकार से परिपूर्ण ॥१५॥

अन्वयः—सतारं गगनं घनोपगूढं भास्करः दर्शनम् न अभ्युपैति नवैः जलौघैः धरणी वितृप्ता दिशः तमोविलिप्ताः प्रकाशा न ॥१५॥

सरलार्थः—तारों वाला आकाशमण्डल मेघों से आच्छादित हो गया है । इस वर्षाकाल में सूर्य का दर्शन भी दुर्लभ हो गया है । नवीन जल प्रवाहों से पृथ्वी तर हो गई है और सर्वत्र दिशाओं में अंधकार छाया हुआ है । प्रकाश दिखाई नहीं देता है ॥१५॥

श्लोकः—"महान्ति कूटानि महीधराणाम् ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थः—महान्ति=बड़े बड़े । कूटानि=शिखर । महीधराणां=पर्वतों की । धौतानि=धोई गई । महाप्रमाणैः=बड़े बड़े । प्रपातैः=झरनों से लम्बमानैः=लटकती हुई । मुक्ताकलापैः=मोतियों की मालाओं के समान ॥१६॥

अन्वय—धाराभिः धौतानि महीधराणां महान्ति कूटानि महाप्रमाणैः विपुलैः प्रपातैः लम्बमानैः मुक्ताकलापैः इव अधिकं विभान्ति ॥१६॥

सरलार्थः—इस वर्षाकाल में वर्षा की धाराओं से धोये गये पर्वतों की बड़ी बड़ी चोटियाँ, बड़े बड़े गिरने वाले झरनों से, लटकती हुई मोतियों की मालाओं के समान और अधिक सुशोभित होती है ॥१६॥

—oo—

सुन्दरकाण्डम्

प्रथमः सर्गः

हनुमज्जानकी-संवादः

श्लोक—"सोऽवतीर्य द्रुमात्तस्मात् ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—सः=हनुमान् । अवतीर्य=नीचे उतर कर । द्रुमात्=वृक्ष से । विद्रुमप्रतिमाननः=मूंगे के समान लाल मुंहवाला । प्रणिपत्य=नमस्कार कर । उपसृत्य=पास जाकर । १॥

अन्वय—विनीतवेषः कृपणः विद्रुमप्रतिमानन- तस्मात् द्रुमात् अवतीर्य उपसृत्य प्रणिपत्य च ॥१॥

सरलार्थः—नम्रवेष भूषा वाले, कंजूस तथा मूंगे के समान रक्त मुख वाले वे हनुमान् उस वृक्ष से नीचे उतरकर सीता के पास जाकर नमस्कार करके बोले ॥१॥

श्लोक—"तामब्रवीन्महातेजाः ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—महातेजाः = महान् तेजस्वी । मारुतात्मजः = पवनपुत्र । शिरसि=मस्तकर । अञ्जलिं आधाय=हाथ जोडकर ॥२॥

अन्वय—महातेजाः मारुतात्मजः हनुमान् शिरसि अञ्जलिं आधाय मधुरया गिरा तां अब्रवीत् ॥२॥

सरलार्थ—महान् तेजस्वी पवनपुत्र हनुमान्जी हाथ जोड़ कर मधुर वाणी से उस सीता को बोले ॥२॥

श्लोकः—"अहं रामस्य संदेशात् ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—रामस्य=रामके । संदेशात्=संदेश से । कौशलं=कुशलता । दूतः=संदेश का आदान प्रदान करने वाला व्यक्ति ॥३॥

अन्वय—हे देवी ! रामस्य दूतः अहं संदेशात् तव आगतः हे वैदेहि ! सः कुशली रामः त्वां कौशलं अब्रवीत् ॥३॥

सरलार्थ—हे देवी ! रामस्य दूत मैं हनुमान् संदेश पहुँचाने के उद्देश्य से तुम्हारे पास आया हूं । हे सीते ! कुशल उस रामने तुम्हारी कुशलता पूछी है ॥३॥

श्लोकः—"लक्ष्मणश्च महातेजाः ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—ते=तुम्हारे । भर्तुः=स्वामी का । अनुचरः=सेवक । शोक-संतप्तः=शोक से पीडित । अभिवादनम्=प्रणाम ॥४॥

अन्वय—ते भर्तुः प्रियः अनुचरः महातेजाः लक्ष्मणः शोक संतप्तः सन् शिरसा ते अभिवादनम् कृतवान् ॥४॥

सरलार्थ—तुम्हारे स्वामी का प्रिय सेवक महान् तेजस्वी लक्ष्मण ने शोक से पीडित होकर तुम्हें प्रणाम किया है ॥४॥

श्लोक—"सा तयोः कुशलं देव ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ—तयोः=राम लक्ष्मण के । निशम्य=सुनकर । प्रतिसंहृष्ट सर्वांगी=अत्यन्त आनंदित । हनुमन्तं=हनुमान् को । ॥५॥

अन्वय—अथ प्रतिसंहृष्टसर्वांगी सा तयोः नर सिंहयोः कुशलं निशम्य हनुमन्तं अब्रवीत् ॥५॥

सरलार्थ—हनुमान् की बात सुनने के पश्चात् अत्यन्त आनंदित उस सीता ने उन दोनों नर केसरी राम और लक्ष्मण की कुशलता के समाचार सुनकर हनुमान् से कहा ॥५॥

श्लोक—"कल्याणी वत गाथेयम् ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—इयं=यह । गाथा=कहावत, जन श्रुति । वर्षशतात्=सौ वर्ष से । एति=प्राप्त होता है ॥६॥

अन्वय—जीवन्तं नरं वर्ष शतात् अपि आनन्दः एति इयं कल्याणी गाथा मां लौकिकी प्रतिभाति ॥६॥

सरलार्थ—यदि मनुष्य जीवित रहे तो सौ वर्ष के बाद भी वह आनन्द को प्राप्त करता है यह कहावत मुझे लौकिक मालूम होती है ॥६॥

श्लोक—"तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ—शोक संतप्तायाः=शोक से पीडित । श्रुत्वा=सुनकर । उपचक्रमे=पास गये ॥७॥

अन्वय—मारुतात्मजः हनुमान् तस्याः शोकसंतप्तायाः सीतायाः तद्वचनं श्रुत्वा समीपं उपचक्रमे ॥७॥

सरलार्थ—पवनपुत्र हनुमान् चिंता से पीडित उस सीता के वचनों को सुनकर उसके पास गये ॥७॥

श्लोक—यथा यथा समीपं सः ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—समीपं=पास में । उपसर्पति=पास जाते है । परिशङ्कते=सन्देह करती है ॥८॥

अन्वय—सः हनुमान् यथा यथा समीपं उपसर्पति सा सीता तथा तथा तं रावणं परिशङ्कते ॥८॥

सरलार्थ—वे हनुमान् जैसे जैसे उस सीता के पास जाते हैं, वैसे वैसे वह सीता उनके विषय में रावण होने का सन्देह करती है ॥८॥

श्लोक—"तं दृष्ट्वा वन्दमानं च ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—दृष्ट्वा=देखकर । वन्दमानं = नमस्कार करते हुये । शशिनिभाननां=चन्द्रमुखी । दीर्घं=लम्बी । उच्छ्वस्य=सांस खींचकर ॥९॥

अन्वय—शशिनिभानना सीता वन्दमानं तं दृष्ट्वा दीर्घं उच्छ्वस्य मधुरस्वरां । वानरं अब्रवीत् ॥९॥

सरलार्थ—चंद्रमुखी सीता प्रणाम करते हुये उस हनुमान् को देखकर लम्बी सांस लेकर मीठी वाणी से उनको बोली ॥९॥

श्लोक—"मायां प्रविष्टो मायावी ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—मायावी=कपटी । भूयः=फिर से । संतापं=चिन्ता को । उत्पादयसि=उत्पन्न करते हो ॥१०॥

अन्वय—यदि त्वं मायां प्रविष्टः स्वयं मायावी रावणः मे भूयः सन्तापं उत्पादयसि तत् न शोभनम् ॥१०॥

सरलार्थ—अगर तुम माया को जानने वाले खुद कपटी रावण हो तो फिर मुझको कष्ट दोगे । वह अच्छा नहीं है ॥१०॥

हनुमान् उवाच—

श्लोक—"नाहमस्मि तथा देवि ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—माम्=मुझको । अवगच्छसि=जानती हो । आभरण जालानि=अलङ्कारों का समूह । महीतले=पृथ्वी पर । पातितानि=गिराये गये ॥११॥

अन्वय—हे देवि ! अहं तथा न अस्मि यथा मां त्वं अवगच्छसि महीतले यानि आभरण जालानि पातितानि ॥११॥

सरलार्थ—हे देवि ! मैं वैसा मायावी व्यक्ति नहीं हूं जैसा कि तुम मुझे समझती हो । पृथ्वी पर जिन अलंकारों को गिराये थे ॥११॥

श्लोक—तानि रामाय दत्तानि।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—रामाय=राम को। दत्तानि=दिये। मया एव=मैंने ही। उपहृतानि=लाये हैं। परिदेवितम्=रुदन किया ॥१२॥

अन्वयः—मया एव उपहृतानि तानि रामाय दत्तानि तेन देव प्रकाशेन देवेन परिदेवितम् ॥१२॥

सरलार्थ—मैं ने ही लाकर उन अलङ्कारों को राम को दिये है। उन अलङ्कारों को देखकर श्रीराम ने काफी विलाप किया ॥१२॥

श्लोक—शयितं च चिरं तेन। इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—शयितं=सोये। चिरं=बहुत समय तक। दुःखार्तेन=पीड़ित। तव=तुम्हारे। अदर्शनात्=नहीं दिखाई देने से। परितप्यते=दुःखी होते हैं ॥१३॥

अन्वय—दुखार्तेन तेन महात्मना चिरं शयितम् हे आर्ये! सः राघवः तव अदर्शनात् परितप्यते ॥१३॥

सरलार्थ—दुःखी उन महात्मा राम ने चिरकाल तक शयन किया किया और हे आर्ये! वे राम तुम्हारे नहीं दिखाई देने से आज भी संतप्त होते है ॥१४॥

श्लोकः—"वानरोऽहं महाभागे।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—धीमतः=बुद्धिमान्। रामस्य=रामका। रामनामाङ्कितं=राम नाम से चिह्नित। अङ्गुलीयकं=अंगुठी, मुद्रिका। पश्य=देखो ॥१४॥

अन्वयः—हे महा भागे! धीमतः रामस्य दूतः अहं वानरः हे देवि! इदं रामनामाङ्कितं अङ्गुलीयकं पश्य ॥१४॥

सरलार्थः—हे महाभागे! बुद्धिमान् राम का दूत मैं जाति से बन्दर हूं। हे देवि! इस राम के नाम चिह्नित इस अङ्गुठी को देखो ॥१४॥

श्लोकः—"गृहीत्वा प्रेक्षमाणा सा।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थः—गृहीत्वा=लेकर। प्रेक्षमाणा=देखती हुई। भर्तुः=स्वामी की। मुदिता=प्रसन्न। अभवत्=हुई ॥१५॥

अन्वयः—सा भर्तुः कर विभूषितम् गृहीत्वा प्रेक्षमाणा संप्राप्तं भर्तारम् इव जानकी मुदिता अभवत् ॥१५॥

सरलार्थः—वह सीता स्वामी की अंगुठी को लेकर देखती हुई साक्षात् पति मिलन की तरह अत्यन्त प्रसन्न हुई ॥१५॥

सीता उवाच—

श्लोकः—"विक्रान्त स्त्वं समर्थ स्त्वं।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थः—विक्रान्तः=पराक्रमी। समर्थः=शक्तिशाली। प्राज्ञः=बुद्धिमान् ॥१६॥

अन्वयः—त्वं विक्रान्तः त्वं समर्थः हे वानरोत्तम! त्वं प्राज्ञः येन त्वया एकेन इदं राक्षसपदं प्रधर्षितम् ॥१६॥

सरलार्थः—तुम पराक्रमी शक्तिशाली तथा हे वानर श्रेष्ठ! तुम बुद्धिमान् भी हो। तुमने अकेले ही ने इस लंकापुरी पर आक्रमण कर दिया ॥१६॥

श्लोकः—"शत योजन विस्तीर्णः।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थः—शतयोजन विस्तीर्णः=सौ योजन विस्तृत। सागरः=समुद्र। मकरालयः=मगरों का निवासस्थान। क्रमता=उल्लंघन करते हुए। गोष्पदीकृतः=गाय के खुर जितना कर दिया ॥१७॥

अन्वयः—विक्रमश्लाघनीयेन क्रमता त्वया शत योजन विस्तीर्णः मकरालयः सागरः गोष्पदीकृतः ॥१७॥

सरलार्थः—पराक्रम से प्रशंसनीय तुमने उल्लंघन करते हुए सौ योजन विस्तृत मगरों की निवास भूमि सागर को गाय के खुर जितना छोटा बना दिया है ॥१७॥

श्लोकः—"दिष्ट्या च कुशली रामः ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थः—कुशली=कुशल । धर्मात्मा=धर्मपरायण । सत्यसंगरः= सत्य प्रतिज्ञा वाले । सुमित्रानन्दवर्धनः=सुमित्रा के आनन्द को बढाने वाले ॥१॥

अन्वय—धर्मात्मा सत्य संगरः रामः सुमित्रानन्दवर्धन महातेजाः लक्ष्मणः च दिष्ट्या कुशली ॥१८॥

सरलार्थः—धर्मपरायण सत्य प्रतिज्ञा वाले राम तथा सुमित्रा के आनंद को बढाने वाला महान् तेजस्वी लक्ष्मण कुशल तो है ? ॥१८॥

श्लोकः—"कुशली यदि काकुत्स्थः ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थः—काकुत्स्थः=राम । सागर मेखलां=समुद्र रूप करधनी वाली । महीं=पृथ्वी को । उत्थितः=उत्पन्न । युगान्ताग्निः इवः=प्रलयकालीन अग्नि की तरह ॥१९॥

अन्वय—यदि काकुत्स्थ- कुशली सागरमेखलां महीं उत्थितः युगान्ता- ग्निः इव कोपेन किं न दहति ॥१९॥

सरलार्थः—अगर भगवान् राम कुशल है तो समुद्र रूप मेखला वाली पृथ्वी को उत्पन्न प्रलयकालीन अग्नि को तरह कोप से क्यों नहीं जला देते है ॥१९॥

श्लोकः—"अथवा शक्तिमन्तौ तौ ।" इत्याति ॥२०॥

शब्दार्थः—शक्तिमन्तौ = शक्तिशाली । सुराणाम्=देवताओं के । निग्रहे=वश करने में । विपर्ययः=विकार । मन्ये=मानती हूं ॥२०॥

अन्वयः—अथवा सुराणाम् अपि निग्रहे तौ शक्तिमन्तौ मम एव दु:खानां विपर्ययः अस्ति इतिं मन्ये ॥२०॥

सरलार्थः—देवताओं का दमन करने में वे दोनों भाई शक्तिशाली परन्तु मैं तो यह मानती हूं कि यह मेरे ही दु:खों का विकार है ॥२०॥

श्लोक:—"कच्चिन्न तत् हेम समानवर्णम् ।" इत्यादि ॥२१॥

शब्दार्थ—हेमसमानवर्णम्=सुवर्ण के समान । आननं=मुख । पद्म-समान गंधि=कमल के समान सुगंधित । मयाविना=मेरे सिवाय । शुष्यति=सूखता है । आतपेन=धूप से । शोकदीनं=चिंता से दीन ॥२१॥

अन्वयः—तत् हेमसमाणवर्णं पद्मसमानगंधि तस्य आननं कच्चित् न ! जलक्षये आतपेन पद्मम् इव मया विना शोकं दीनं शुष्यति ॥२१॥

सरलार्थः—वह सुवर्ण के समान वर्ण वाला तथा कमल के समान सुगंधित उस राम का मुख क्या नहीं है ? पानी के बीत जाने पर धूप से कमल की तरह मेरे सिवाय चिंता से दुःखी उनका मुख मलिन होता होगा ॥२१॥

श्लोकः—"सीतायाः वचनं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ—भीमविक्रमः=महान् पराक्रमी । मारुतिः=हनुमान् । वचनं श्रुत्वा=वचन सुनकर । शिरसि अञ्जलिं आधाय=हाथ जोड़ कर ॥२२॥

अन्वय—भीमविक्रमः मारुतिः सीतायाः वचनं श्रुत्वा शिरसि अञ्जलिं आधाय वाक्यं उत्तरं अब्रवीत् ॥२२॥

सरलार्थ—महान् पराक्रमी पवनपुत्र हनुमान् सीता के वचन को सुनकर हाथ जोड़ कर उत्तर देने लगे ॥२२॥

हनुमान् उवाच—

श्लोक—"न त्वामिहस्थां जानीते ।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ—त्वां=तुझको । इहस्थां=यहां रही हुई को । जानीते=जानता हैं । कमल लोचनः=कमल तुल्य नेत्रवाले । पुरन्दरः=इन्द्र । शचीमिव=इन्द्राणी की तरह ॥२३॥

अन्वय—कमल लोचनः रामः इहस्थां त्वां न जानीते तेन त्वां पुरन्दरः शचीम् इव आशु न आनयति ॥२३॥

सरलार्थ—कमल नयन भगवान् राम यहां पर रहने वाली तुमको नहीं जानते हैं। इस लिए वह राम जिस प्रकार इन्द्र इन्द्राणी को शीघ्र ले गये थे उसी प्रकार तुमको शीघ्र ले जावेंगे ॥२३॥

श्लोक—"श्रुत्वैव तु वचो मह्यं।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—श्रुत्वा=सुनकर। वचः=वाक्य। क्षिप्रं=जल्दी। एष्यति=आयेंगे। चमूं=सेना को। हर्यृक्षगणसंकुलां=बन्दर और भालुओं से युक्त ॥२४॥

अन्वय—राघवः मह्यं वचः श्रुत्वा क्षिप्रं हर्यृक्षगणसंकुलां महतीं चमूं प्रकर्षन् शीघ्रं एष्यति ॥२४॥

सरलार्थ—राम मेरे वचन को सुनकर शीघ्र ही बन्दर और भालुओं की बड़ी सेना को लेकर शीघ्र आवेंगे।

श्लोक—"विष्टम्भयित्वा बाणौघैः।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थ—विष्टम्भयित्वा=समुद्र को पार करके। बाणौघैः=तीरों के समूह से। वरुणालयम्=सागर को। शान्तराक्षसाम्=राक्षसरहित ॥२५॥

अन्वय—बाणौघैः अक्षोभ्यं वरुणालयं विष्टम्भयित्वा काकुत्स्थः लंकापुरीं शान्तराक्षसाम् करिष्यति ॥२५॥

सरलार्थ—बाणों के समूह से समुद्र को पाट करके वह राम इस लंका नगरी को राक्षसों से शून्य कर देंगे ॥२५॥

श्लोक—"सा सीता वचनं श्रुत्वा।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—पूर्णचंद्रनिभानना=पूर्ण चांद के समान मुखवाली। धर्मार्थ सहितं=धर्म और अर्थ से परिपूर्ण। वचः=वचन को। उवाच=कहा ॥२६॥

अन्वय—पूर्णचंद्रनिभानना सा सीता वचनं श्रुत्वा धर्मार्थ सहितं इदं वचः हनूमन्तं उवाच ॥२६॥

सरलार्थ—पूर्ण चांद के तुल्य मुख वाली वह सीता पवन पुत्र के वचन को सुन कर धर्म और अर्थ से परिपूर्ण यह वचन हनुमान्‌जी से कहने लगी ॥२६॥

सीता उवाच--

श्लोक—"राक्षसानां वधं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थ —राक्षसानां=निशाचरों का । वधं कृत्वा=मार कर । सूद-यित्वा=पीडा देकर । लङ्कां उन्मथितां कृत्वा=लङ्का का मन्थन् करके । मां=मुझको । द्रक्ष्यति=देखेंगे ॥२७॥

अन्वय—पतिः राक्षसानां वधं कृत्वा रावणं सूदयित्वा लंका उन्मथितां कृत्वा मां कदा द्रक्ष्यति ॥२७॥

सरलार्थ—मेरे स्वामी राक्षसों को मार करके और रावण को पीडित कर तथा लंका को मथ करके मुझको कब देखेंगे ॥२७॥

श्लोक—"सः वाच्यः संत्वरस्वेति ।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थ—वाच्यः=कहना । संत्वरस्व=जल्दी करो । संवत्सरः=वर्ष । न पूर्यते=पूरा नहीं होता है । जीवितम्=जीवन ॥२८॥

अन्वय—सः वाच्यः संत्वरस्व इति यावत् अयं संवत्सरः कालः न पूर्यते तावत् हि मम जीवनम् अस्ति ॥२८॥

सरलार्थ—तुम राम को कहना कि जल्दी करो, जब तक यह एक वर्ष का समय पूरा नहीं होता है तब तक ही मेरा जीवन है ।

श्लोक—"इति संजल्पमानां तां ।" इत्यादि ॥२९॥

शब्दार्थ—संजल्पमानां=बोलती हुई को । रामार्थे=राम के लिये । शोककर्शिताम्=चिन्ता से दुबली । अश्रुसंपूर्णवदनां=आंसुओं परिपूर्ण मुखवाली को ॥२९॥

अन्वयः—कपिः हनुमान् रामार्थे शोककर्शितां इति संजल्पमानां अश्रु-पूर्ण वदनां तां उवाच ॥२९॥

सरलार्थः—वे हनुमान् राम के लिये की गई चिन्ता से कृश तथा इस प्रकार कहती हुई आंसुओं से युक्त मुख वाली उस सीता को बोले ॥२९॥

श्लोक—"अथवा मोचयिष्यामि ।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थः—अद्यैव=आज ही । त्वां=तुमको । मोचयिष्यामि=छुड़वाऊंगा । दुःखात्=दुख से । मम पृष्ठम्=मेरी पीठ पर । उपारोह=चढो ॥३५॥

अन्वयः—अथवा सराक्षसात् त्वां अद्य एव अस्मात् दुःखात मोचयिष्यामि हे अनिन्दिते ! मम पृष्ठम् उपारोह ॥३०

सरलार्थः—अथवा हे सीते ! राक्षसों से तथा इस दुःख से तुमको मैं आज ही छुडवाऊंगा । हे अनिन्दिते ! तुम मेरी पीठ पर चढ जाओ ॥३०॥

श्लोकः—"त्वां तु पृष्ठगतांकृत्वा ।" इत्यादि ॥३१॥

शब्दार्थः—त्वां=तुमको । पृष्ठगतां=पीठ पर बिठला कर । संतरिष्यामि=तैर जाऊंगा । सरावणाम्=रावण सहित । वोढुं=ले जाने को ॥३१॥

अन्वय—त्वां पृष्ठगतां कृत्वा सागरं संतरिष्यामि सरावणाम् लंका अपि वोढुं मे शक्तिः अस्ति ॥३१॥

सरलार्थ—हे सीते ! तुमको पीठ पर बिठा कर समुद्र को तैर जाऊंगा । रावण सहित संपूर्ण लंका को भी ढोने की मेरी शक्ति है ॥३१॥

श्लोक—"इति संचित्य हनुमान् ।" इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थ—संचित्य=सोच कर । प्लवङ्गसत्तमः=वानर श्रेष्ठ । स्वं रूपं=अपने रूप को । दर्शयामास=दिखलाया ॥३२॥

अन्वयः—तदा अरिमर्दनः प्लवङ्गसत्तमः हनुमान्- इति संचित्य स्वं रूपं वैदेह्याः दर्शयामास ॥३३॥

सरलार्थः—उस समय शत्रुओं के दमन का दमन करने वाले वानर श्रेष्ठ हनुमान् ने ऐसा सोचकर अपना विशाल रूप सीताजी को दिखलाया ॥३२॥

श्लोक:—"तं दृष्ट्वाचलसंकाशम् इत्यादि ॥३३॥

शब्दार्थ—अचलसंकाशम्=पर्वत के समान । जनकात्मजा=सीता । मारुतस्य=वायु के । औरसं पुत्रं=सगे पुत्र को । पद्मपत्रविशालाक्षी=कमल के समान बडी आंख वाली ॥३३॥

अन्वय:—पद्मपत्रविशालाक्षी जनकात्मजा मारुतस्य औरसं सुतं अचलसंकाशं दृष्ट्वा तं उवाच ॥३३॥

सरलार्थ:—कमल के समान विशाल नयन वाली जनकपुत्री सीता पवन के पुत्र हनुमान् को पर्वत के समान देख कर उनको कहने लगी ॥३३॥

श्लोक:—'तव सत्त्वं वलं चैव ।" इत्यादि ॥३४॥

शब्दार्थ:—तव = तुम्हारा । सत्वं=पराक्रम । वलं=शक्ति को । विजानामि=जानती हूं । गतिं=चाल को । वयोरिव=पवन के समान ॥३४॥

अन्वय:—हे महाकपे ! तव सत्त्वं वल च अग्ने: इव अद्भुतं तेज: वायो: इव गतिं च अपि विजानामि ॥३४॥

सरलार्थ:—हे वानर श्रेष्ठ ! तुम्हारे पराक्रम, शक्ति और अग्नि की तरह अद्भुत तेज तथा वायु की तरह तेज गति को भी मैं अच्छी तरह जानती हूं ॥३४॥

श्लोक:—"कामं त्वभारी पर्याप्त ।" इत्यादि ॥३५॥

शब्दार्थ:—सर्व राक्षसान् = सब निशाचरों को । निहन्तुं=मारने को । कामं=अत्यन्त । पर्याप्त:=समर्थ । शस्ते: = प्रशंसा का । हीयेत्=नष्ट होगा ॥३५॥

अन्वय:—राघवस्य शस्ते: यश: त्वया राक्षसै: हीयेत् त्वं सर्वराक्षसान् निहन्तुं कामं पर्याप्त: असि ॥३५॥

सरलार्थ:—हे कपिराज ! तुम अकेले ही सब राक्षसों को मारने के लिये यद्यपि समर्थ हो परन्तु ऐसा करने से तुम्हारे द्वारा राक्षसों से श्रीराम की प्रशंसा का यश नष्ट हो जावेगा ॥३५॥

श्लोकः—"यदि रामो दशग्रीवम् ।" इत्यादि ॥३६॥

शब्दार्थः—दशग्रीवम्=रावण को । सराक्षसम्=राक्षसों के सहित । हत्वा=मार कर । इतः यहां से । मां=मुझे गृह्य=लेकर ॥३६॥

अन्वयः—यदि रामः सराक्षसम् दशग्रीवं इह हत्वा इतः मां गृह्य गच्छेत् तत् तस्य सदृशं भवेत् ॥३६॥

सरलार्थः—अगर श्रीराम राक्षसों के सहित रावण को यहां मारकर और यहां से मुझे लेकर चले जावें तो वह कार्य उनके पराक्रम के अनुकूल ही होगा ॥३६॥

हनूमान् उवाच

श्लोक—"युक्त रूपं त्वया देवि ।" इत्यादि ॥३७॥

शब्दार्थ—भाषितम्=कहा है । युक्त रूपं=उचित । विनयस्य=विनय के ॥३७॥

अन्वयः—हे देवि ! हे शुभ दर्शने ! त्वया युक्त रूपं भाषितम् साध्वीनां विनयस्य स्त्री स्वभावस्य च सदृशम् अस्ति ॥६७॥

सरलार्थ—हे देवि ! हे शुभदर्शने ! तुमने उपरोक्त जो वचन कहे हैं, वे साध्वी स्त्रियों के विनय तथा स्त्री स्वभाव के योग्य ही है ॥३७॥

श्लोक—"अभिज्ञानं प्रयच्छ त्वं ।" इत्यादि ॥३८॥

शब्दार्थ—अभिज्ञानं प्रयच्छ=दीजिये । वस्त्रगतं=कपड़े में बंधी हुई । चूडामणिं=सिर के आभूषण को । मुक्त्वा=छोड कर ॥३८॥

अन्वय—अभिज्ञानं प्रयच्छ यत् राघवः त्वां जानीयात् ततः दिव्यं शुभं वस्त्रगतं चूडामणिं मुक्त्वा ददौ । ३८॥

सरलार्थ—पहिचान की वस्तु दीजिये, जिससे राम तुमको जान सके । ऐसा कहने पर सीता ने उस दिव्य और सुन्दर सिर के आभूषण को वस्त्र में से छोड़ कर हनुमान् को दिया ॥३८॥

श्लोक:—"प्रदेयो राघवायेति ।" इत्यादि ॥३९॥

शब्दार्थ—राघवाय:=राम को । प्रदेय:=दे देना । मणि दत्वा=रत्न को देकर ॥३९॥

अन्वय—राघवाय प्रदेय: इति सीता हनुमते ददौ, ततः मणि दत्वा सीता हनुमन्तं अब्रवीत् ॥३९॥

सरलार्थ—यह चूडामणि राम को दे देना ऐसा कह कर सीता ने हनुमान् को दे दिया । उसके बाद उस चूडामणि को देकर सीता हनुमान् से कहने लगी ॥३९॥

सीता उवाच—

श्लोक—"मणि दृष्ट्वा तु रामो वै ।" इत्यादि ॥४०॥

शब्दार्थ—मणि दृष्ट्वा=चूडामणि को देख कर । त्रयाणां=तीनों का संस्मरिष्यति=याद करेंगे । जनन्या=माता को । मम मुझे । दशरथस्य=दशरथ को ॥४०॥

अन्वय—मणि दृष्ट्वा रामः जनन्याः मम राज्ञः दशरथस्य च त्रयाणां संस्मरिष्यति ॥४०॥

सरलार्थ:—हे वीर ! इस मणि को देख कर श्रीराम तीन व्यक्तियों का—अपनी माता मेरा तथा महाराज दशरथ का एक ही साथ स्मरण करेंगे ॥४०॥

श्लोक:—"यथा च स महाबाहु: ।" इत्यादि ॥४१॥

शब्दार्थ—मां = मेरा । तारयति । उद्धार करें । दु:खाम्बुसंरोधात्= दु:ख रूपी सागर से । महा-वाहु:=बड़ी भुजाओं वाले ॥४१॥

अन्वय—यथा सः महाबाहु: राघवः अस्मात् दु:खाम्बुसंरोधात् मां तारयति तथा त्वं समाधातुं अर्हसि ॥४१॥

सरलार्थ—पवन पुत्र हनुमान् को प्रस्थान करते देख भगवती सीता का गला भर आया और वे गद्गद् वाणी में बोलीं—हे हनुमान् ! महाबाहु भगवान् श्रीराम इस दुःख के समुद्र से जिस प्रकार मेरा उद्धार करें, तुम वैसा ही उपाय करना ।।४१।।

श्लोक—"जीवन्तीं मां यथा रामः ।" इत्यादि ।।४२।।

शब्दार्थ—जीवन्तीं=जीवित । मां=मुझको वाच्यम्=कहना । वाचा= वाणी से । धर्मं=धर्म का । आप्नुहि=उपार्जन करो ।।४२।।

अन्वय—यथा कीर्तिमान् रामः जीवन्तीं मां संभावयति हे हनुमन् ! तद् त्वया वाच्यम् वाचा धर्मं आप्नुहि ।।४२।।

सरलार्थः—हे हनुमन् ! यशस्वी रघुनाथजी से ऐसी बातें कहना, जिनसे वे मेरे जीते जी आकर मुझ से मिलें । ऐसा करके तुम वाणी के द्वारा धर्म का उपार्जन करो ।।४२।।

—oo—

द्वितीयः सर्गः

हनुमद्रावण संवादः

हनूमान् उवाच—

श्लोक—"अहं सुग्रीव संदेशात् ।" इत्यादि ।।१।।

शब्दार्थ—सुग्रीव संदेशात्=सुग्रीव की आज्ञा से । तवान्तिके=तुम्हारे पास प्राप्तः=आया हूं । त्वां=तुमको ।।१।।

अन्वय—हे राक्षसेश ! अहं सुग्रीव संदेशात् तव अन्तिके प्राप्तः भ्राता हरीशः त्वां कुशलं अब्रवीत् ।।१।।

सरलार्थ—हे रावण ! मैं सुग्रीव की आज्ञा से तुम्हारे पास आया हूं । भाई सुग्रीव तुम्हें कुशल पूछते हैं ।।१।।

श्लोक—"तद्भवान् दृष्टधर्मार्थः।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—भवान्=आप। दृष्टधर्मार्थः=धर्म को जानने वाले। परदारान्=दूसरे की स्त्री को। उपरोद्धुं=रोकने के लिये ॥२॥

अन्वय—हे महाप्राज्ञ! दृष्ट धर्मार्थः तपः कृतपरिग्रहः तत् त्वं परदारान् उपरोद्धुं न अर्हसि ॥२॥

सरलार्थ—हे बुद्धिमान्! तुम धर्म और अर्थ के तत्व को जानते हो। तुमने बड़ी भारी तपस्या की है, अतः परनारी को अपने घर में रोक रखना तुम्हारे लिये कदापि उचित नहीं है ॥२॥

श्लोक—"कश्च लक्ष्मण मुक्तानाम्।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—लक्ष्मणमुक्तानां=लक्ष्मण से छोडे गये। रामकोपानुवर्तिनां=राम के क्रोध का अनुसरण करने वाले। शराणां=बाणों के। स्थातुं=ठहरने के लिये ॥३॥

अन्वयः—रामकोपानुवर्तिनां लक्ष्मणमुक्तानां शराणां अग्रतः स्थातुं देवासुरेषु अपि कः शक्तः ॥३॥

सरलार्थ—रामचन्द्र के क्रोध का अनुसरण करने वाले तथा लक्ष्मण द्वारा छोडे गये बाणों के सामने देवता और असुरों में भी ऐसा कौन वीर है जो ठहर सके ॥३॥

श्लोक—"न चापि त्रिषु लोकेषु।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थः—त्रिषु लोकेषु=तीनों लोकों में। राघवस्य=रामका। व्यलीकं=वैर, अपराध। आप्नुयात्=प्राप्त कर सके ॥४॥

अन्वय—हे राजन्! त्रिषु लोकेषु कश्चन अपि न विद्यते यः रामस्य व्यलीकं कृत्वा सुखं आप्नुयात् ॥४॥

सरलार्थः—हे राजन्! तीनों लोकों में एक भी ऐसा कोई वीर नहीं है जो राम का अपराध कर करके सुखी रह सके ॥४॥

श्लोक—"तत्त्रिकालहितं वाक्यम् ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ—त्रिकालहितं=तीनों कालों में कल्याण कारक। धर्म्यम्=धर्म के अनुकूल। अर्थानुयायि=अर्थ का अनुसरण करने वाला। मन्यस्व=मान जाओ। जानकी=सीता को। प्रदीयतां=दे दो ॥५॥

अन्वय—हे नर शार्दूल ! तत् धर्म्यं अर्थानुयायि त्रिकालहितं वाक्यं मन्यस्व जानकी प्रदीयताम् ॥५॥

सरलार्थ—हे रावण ! इसलिये मेरी धर्म और अर्थ के अनुकूल बात, को तीनों कालों में हितकर है, मान लो और जानकी को श्री रामचन्द्र को लौटा दो ॥५॥

श्लोक—"स तस्य वचनं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—तस्य वानरस्य=उस हनुमान् का। वचः=वचन को। श्रुत्वा=सुनकर। क्रोधमूर्च्छितः=क्रोधी। वधं=मारने को। आज्ञापयत्=आज्ञा दी ॥६॥

अन्वय—महात्मनः तस्य वानरस्य वचः श्रुत्वा क्रोधमूर्च्छितः रावणः तस्य वधं आज्ञापयत् ॥६॥

सरलार्थ—उस हनुमान्जी के वचन को सुनकर क्रोधी रावण ने उनका वध करने के लिये आज्ञा देदी ॥६॥

श्लोक—"वधे तस्य समाज्ञप्ते ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ—तस्य=हनुमान् का। वधे समाज्ञप्ते=वध की आज्ञा देने पर दौत्यं=दूत का कार्य। न अनुमेने=समर्थन नहीं किया ॥७॥

अन्वय—दुरात्मना रावणेन दौत्यं निवेदितवतः तस्य वधे समाज्ञप्ते विभीषणः न अनुमेने ॥७॥

सरलार्थ—दुष्ट रावण के द्वारा दूत के कार्य को करने वाले हनुमान् के वध की आज्ञा प्रदान करने पर भी विभीषण ने उसका समर्थन नहीं किया ॥७॥

श्लोक—"कपीनां किल लाङ्गूलम् ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—कपीनां=बन्दरों का । लाङ्गूलं= दुम, पूछ । इष्टं=प्रिय । भूषणं=अलंकार । दीप्यतां=जलादो ॥८॥

अन्वय—कपीनां किल लाङ्गूलं इष्टं भूषणं भवति अस्य तत् शीघ्र दीप्यताम् । दग्धेन तेन गच्छतु ॥८॥

सरलार्थ:—बन्दरों की पूंछ उनका प्रिय अलंकार होता है इसलिये शीघ्र इसकी पूंछ को जलादो । जली पूंछ वाला यह यहां से जावें ॥८॥

लङ्कादाहः

श्लोकः—"तस्य तद्वचनं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ:—कोप कर्कशा:=क्रोध से कठोर बर्ताव करने वाले । लाङ्गूलं=पूंछ को । जीर्णै:=पुराने । कार्पासकै: पटै:=सूती कपड़ों से ॥९॥

अन्वय:—कोपकर्कशा: राक्षसा: तस्य तत् वचनं श्रुत्वा तस्य लाङ्गूलं जीर्णै: कार्पासकै: पटै वेष्टन्ते ॥९॥

सरलार्थ—क्रोध के कारण कठोरता पूर्ण बर्ताव करने वाले राक्षसों ने हनुमान्‌जी के वचन को सुनकर उनकी पूंछ में पुराने सूती कपड़े लपेटने लगे ॥९॥

श्लोकः—"संवेष्ट्यमाने लाङ्गूले ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ:—संवेष्ट्यमाने=वस्त्रों से पूंछ को लपेटने पर । महाकपि:= हनुमान् । वनेषु=जंगल में । शुष्कं इन्धनम्=सूखी लकडी को । आसाद्य= पाकर । हुताशन:=अग्नि ॥१०॥

अन्वय:—लाङ्गूले संवेष्ट्यमाने महाकपि: वनेषु शुष्कं इन्धनम् आसाद्य हुताशन इव व्यवर्धत ॥१०॥

सरलार्थः—कपड़ों के पूछ में लपेटने के पश्चात् हनुमान्‌जी का शरीर वन में सूखी लकड़ी को पाकर भभक उठने वाली आग की भांति बढ़कर बहुत बड़ा हो गया ॥१०॥

श्लोक—"तैलेन परिपिच्याथ ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—तैलेन=तेल से । परिपिच्य=सींचकर । तत्र=उस पूछ में । उपपादयन्=उत्पन्न की । सहस्र बालवृद्धाः=हजारों बच्चे व बूढे । निशाचराः=राक्षस । प्रीति जग्मुः=प्रसन्न हुये ॥११॥

अन्वय—अथ ते तैलेन परिपिच्य तत्र अग्नि उपपादयन् सहस्रबाल-वृद्धाः निशाचराः प्रीतिं जग्मुः ॥११॥

सरलार्थ—उसके बाद तेल से उनकी पूंछ को भीगा करके उन सबने उसमें आग लगादी । हजारो बच्चे और बूढे राक्षस अत्यन्त प्रसन्न हुये ॥११॥

लोकः—"तस्ते संवृताकारम् ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—संवृताकारम्=गोलाकार । परिगृह्य=पकडकर । हृष्टाः= प्रसन्न हुये ॥१२॥

अन्वय—ततः ते हृष्टाः राक्षसाः संवृताकारं सत्यवन्तं महाकपिं कपिकुञ्जरं परिगृह्य ययुः ॥१२॥

सरलार्थः—उसके बाद वे सब प्रसन्न राक्षस घिरे हुये सत्यवान् हाथी के समान उस हनुमान्‌जी को पकडकर चले गये ॥१२॥

श्लोक—"शङ्ख भेरी निनादैश्च ।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—शंङ्ख भेरीनिनादैः=शङ्ख और नगाडों के शब्दों से । स्वकर्मभिः घोषयन्तः=उनके अपराधों की घोषणा करते हुये । तां पुरीं= उस लंका में । चारयन्ति स्म=घुमाया ॥१३॥

अन्वय—क्रूरकर्माणः राक्षसाः स्वकर्मभिः शङ्ख भेरी निनादैः घोषयन्तः तां पुरीं चारयन्ति स्म ॥१३॥

सरलार्थ—क्रूर कर्म करने वाले राक्षसों ने अपने कर्मों के द्वारा शंख नगाडे आदि से शब्दों से उनके अपराधों की घोषणा करते हुये उन हनुमान्‌जी को उस लंका नगरी में घुमाया ॥१३॥

श्लोक—तश्च्छित्वा स तान् पाशान् ।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ:—तान् पाशान्=उन बन्धनों को । छित्वा=तोडकर । वेगेन=वेग से । उत्पपात=उछल गये ॥१४॥

अन्वय:—स: महाकपि: तत: तान् पाशान् छित्वा वेगवान्वै अथ महाकपि: वेगेन उत्पपात ननाद च ॥१४॥

सरलार्थ—उसके बाद हनुमान्‌जी उन बन्धनों को तोड कर वेग से चले । हनुमान् वेग से उछले और उन्होंने बड़ी गर्जना की ॥१४॥

श्लोक:—"तत: प्रदीप्तलाङ्गूल: ।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ:—प्रदीप्तलाङ्गूल:=जलाई गई पूछ वाला । सविद्युदिव=बिजली के सहित । तोयद:=बादल । भवनाग्रेषु=महलों के शिखर पर ॥१५॥

अन्वय:—तत: प्रदीप्त लाङ्गूल: महाकपि: सविद्युद् तोयद: इव लङ्कायां: भवनाग्रेषु विचचार ॥१५॥

सरलार्थ—उसके बाद जलती हुई पूंछ वाले हनुमान्‌जी बिजली सहित बादल की तरह लंका के महलों के शिखर पर घूमने लगे ॥१५॥

श्लोक—"गृहाद्गृहं राक्षसानाम् ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—गृहाद्गृहं=एक घर से दूसरे घर । वीक्ष्यमाण:=देखते हुये । असंत्रस्त:=निर्भय । प्रासादान्=महलों पर । विचार=घूमे ॥१६॥

अन्वय:—वानर: गृहाद् गृहं राक्षसानां उद्यानानि वीक्ष्यमाण: असंत्रस्त: स: प्रासादान् चचार ॥१६॥

सरलार्थ—वे हनुमान्‌जी एक घर से दूसरे घर और राक्षसों के बगीचों को देखते हुये निर्भय महलों पर घूमने लगे ॥१६॥

श्लोक—"भङ्क्त्वा वनं महातेजा: ।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थ:—भङ्क्त्वा=तोडकर । संयुगे=युद्ध में । रक्षांसि=राक्षसों को । हत्वा=मारकर । दग्ध्वा=जलाकर । रराज=शोभने लगे ॥१७॥

अन्वय:—स: महातेजा: महाकपि: वनं भङ्क्त्वा संयुगे रक्षांसि हत्वा रम्यां लंकां पुरीं दग्ध्वा स रराज ॥१७॥

सरलार्थ—उन महान् तेजस्वी हनुमान्‌जी ने अशोक वाटिका को तोडकर युद्ध में राक्षसों को मारकर और सुन्दर लंका नगरी को जलाकर वे शोभने लगे ॥१७॥

श्लोक:—"वज्री महेन्द्रस्त्रिदशेश्वर: ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ:—वज्री=वज्र धारण करने वाला । त्रिदशेश्वर:=देवताओं के स्वामी । यम:=मृत्यु । सोम:=चन्द्र । काल:=मृत्यु ॥१८॥

अन्वय—अयं त्रिदशेश्वर: महेन्द्र: वज्री वा साक्षात् यम: वा वरुण: अनिल: काल: रुद्र: अग्नि: अर्क: धनद: सोम: अयं वानर: न स्वयमेव

सरलार्थ—यह क्या देवताओं के अधिपति वज्र धारण करने वाला इंद्र है ! या साक्षात् काल वरुण, वायु, रुद्र, अग्नि, सूर्य, कुवेर, या चन्द्रमा है ? यह बन्दर नहीं है साक्षात् काल है ॥१८॥

श्लोक:—"लंकां समस्तां संपीड्य ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ:—समस्तां=सम्पूर्ण । संपीड्य=दु:खी करके । लाङ्गूलाग्नि=पूंछ की आग को । निर्वापयामास=बुझादी । समुद्रे=सागर में ॥१९॥

अन्वय:—हरिपुङ्गव: महाकपि: समस्तां लंकां संपीड्य तदा समुद्रे लाङ्गूलाग्निं निर्वापयामास ॥१९॥

सरलार्थ—वन्दरों में श्रेष्ठ हनुमान्‌जी ने समस्त लंका को दु:खी करके उस समय समुद्र में पूंछ की आग को बुझा दिया ॥१९॥

——०○——

युद्धकांडम्

प्रथमः सर्गः

राम विभीषण संलापः

विभीषण उवाच—

श्लोक—यावन्न लंकां समभिद्रवन्ति । इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—दंष्ट्रायुधाः=दांतरूप अस्त्र वाले । नखायुधाः=नखरूप शस्त्र वाले । पर्वतकूटमात्राः=पर्वत के शिखर समान । वली मुखाः=वन्दर । समभिद्रवन्ति=आक्रमण करते हैं ॥१॥

अन्वयः—यावत् दंष्ट्रायुधा नखायुधाः पर्वतकूटमात्राः बलीमुखाः लङ्कां न समभिद्रवन्ति तावत् दाशरथाय मैथिली प्रदीयताम् ॥१॥

सरलार्थ—जब तक दांत रूप शस्त्र वाले तथा नखरूप शस्त्रवाले पर्वत तुल्य वंदर लंका के ऊपर आक्रमण नहीं कर लेते हैं उनतक हे रावण सीता राम को लौटा दो ॥१॥

श्लोकः—"यावन्न गृह्णन्ति शिरांसि वाणाः ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—शिरांसि=मस्तकों को । रामेरिताः=राम से छोड़े गये । वज्रोपमं=वज्र के समान तीक्ष्ण । वायुसमान वेगाः=पवनतुल्यवेग वाले ॥२॥

अन्वयः—यावत् राक्षसपुङ्गवानां शिरांसि रामेरिताः वज्रोपमाः वायु समानवेगाः वाणाः गृह्णन्ति तावत् मैथिली दाशरथाय प्रदीयताम् ॥२॥

सरलार्थः—जब तक राक्षसों के सिरों को राम के द्वारा छोडे गये वज्र के समान तीक्ष्ण एवं वायु के तुल्य वेग वाले बाण नहीं लेते हैं तब सीता राम को लौटा दो।

श्लोकः—"जीवंस्तु रामस्य न मोक्ष्यसे त्वं।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—जीवन्=जीते हुए। नमोक्ष्यसे = नहीं छोडे जाओगे। सविता=सूर्य के द्वारा। वासवस्य=इन्द्र के। खं=आकाश। अनुप्रविष्टः= घुसे हुये ॥३॥

अन्वयः—सवित्रा अथवा मरुद्भिः गुप्तः त्वं रामस्य न मोक्ष्य से वासवस्य अङ्कगतः न मृत्योः न खं न पातालं अनुप्रविष्टः न मोक्ष्य से ॥३॥

सरलार्थः—सूर्यनारायण अथवा देवताओं के छिपाने पर भी तुम राम के द्वारा छोडे नहीं जाओगे। इन्द्र की गोद में छिपने पर, मृत्यु से आकाश अथवा पाताल में चले जाने पर भी तुम्हें राम नहीं छोडेंगे ॥३॥

रावण उवाच—

श्लोकः—"वसेत्सह सपत्नेन।"इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थः—वसेत्=रहें। सपत्नेन सह=सत्रु के साथ। आशीविषेण= सांप के साथ। शत्रुसेविना=शत्रु के साथ रहने वाला ॥४॥

अन्वयः—सपत्नेन सह अथवा क्रुद्धेन आशीविषेण सह वसेत् शत्रु से विना मित्र प्रवादेन सह न संवसेत् ॥४॥

सरलार्थः—शत्रु के साथ अथवा क्रुद्ध सांप के साथ मनुष्य चाहे तो रहें परन्तु शत्रु का सेवन करने वाले दुष्ट मित्र के साथ न रहें ॥४॥

श्लोकः—"जानामि शीलं ज्ञातीनां।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—शीलं=स्वभाव। ज्ञातीनां=भाई बांधवों के। शीलं= स्वभाव को। व्यसनेपु=कष्टों में। हृष्यन्ति=प्रसन्न होते हैं ॥५॥

अन्वयः—हे राक्षस! सर्व लोकेषु ज्ञातीनां शीलं जानामि एते ज्ञातयः ज्ञातीनां व्यसनेपु सदा हृष्यन्ति ॥५॥

सरलार्थः—हे विभीषण ! समस्त संसार में भाई बान्धवों के स्वभाव को मैं जानता हूं । ये भाई बान्धव अपने बन्धुओं के दुःखों में सदा प्रसन्न होते हैं ॥५॥

श्लोक—"यथा पूर्वं गजः स्नात्वा ।"इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—गजः=हाथी । स्नात्वा=नहाकर । रजः=धूल । दूषयति=दूषित करता है । अनार्येषु=दुष्टों के साथ । सौहृदम्=मित्रता ॥६॥

अन्वयः—यथा गजः पूर्वं स्नात्वा हस्तेन रजः गृह्य आत्मनः देहं दूषयति तथा अनार्येषु सौहृदम् भवति ॥६॥

सरलार्थः—जिस प्रकार हाथी पहले स्नानकर सूंड से धूल लेकर फिर अपने शरीर को दूषित कर देता है उसी प्रकार दुष्टों के साथ मित्रता होती है ॥६॥

श्लोकः—"अन्यस्त्वेवं विधं ब्रूयात् ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—एवंविधं=इस प्रकार । ब्रूयात्=बोले । अस्मिन् मुहूर्ते=इस समय में । कुलपांसनम्=कुलकलङ्क ॥७॥

अन्वयः—हे निशाचर ! अन्यः एवंविधं वाक्यं ब्रूयात् अस्मिन् मुहूर्तेन भवेत् त्वां कुलपांसनम् धिक् ॥७॥

सरलार्थः—हे विभीषण ! अन्य व्यक्ति इस प्रकार वचन कहें परन्तु तुम्हें इस समय ऐसा नहीं कहना चाहिये । कुल कलङ्क तुमको धिक्कार है ॥७॥

विभीषण उवाच—

श्लोक—"अब्रवीच्च तदावाक्यं ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—जातक्रोधः=उत्पन्न क्रोधवाला । अन्तरिक्षगतः=आकाश में रहे हुए ॥८॥

अन्वय—तदा जातक्रोधः अंतरिक्षगतः श्रीमान् विभीषणः राक्षसाधिपं भ्रातरं वाक्यं अब्रवीत् ॥८॥

सरलार्थ—तब उत्पन्नक्रोध वाले अंतरिक्ष में रहे हुए विभीषण ने राक्षसों के स्वामी भाई रावण को यह वचन कहा ॥८॥

श्लोक:—"स त्वं भ्रातासि मे राजन् ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ:—ब्रूहि=कहो । पितृसम:=पिता के तुल्य । धर्मपथे=धर्म मार्ग में ॥६॥

अन्वय—हे राजन् ! स: त्वं मे ज्येष्ठ: भ्राता असि यत् इच्छसि मां ब्रूहि पितृसम: मान्य: धर्मपथे स्थित: न ॥६॥

सरलार्थ—हे राजन् ! तुमे मेरे ज्येष्ठ भ्राता हो अत: जो चाहो सो मुझको कहो । आप मेरे पिता के तुल्य हो और धर्म के मार्ग में स्थित नहीं हो ॥६॥

श्लोक—"अप्रियस्य तु पथ्यस्य ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—अप्रियस्य=कटु पथ्यस्य=हितकारक । वक्ता=कहने वाला । श्रोता=सुनने वाला । कालस्य पाशेन = मृत्य के पाशसे ॥१०॥

अन्वय:—अप्रियस्य पथ्यस्य वक्ता श्रोता दुर्लभ: भवति । सर्वभूतापहारिण: कालस्य पाशेन बद्धम् ॥१०॥

सरलार्थ—कडवी और हितभरी बात कहने और सुनने वाले काल के पाश में बंध चुके हैं ॥१०॥

श्लोक:—"न नश्यन्तमुपेक्षेयम् ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थ—नश्यन्तम्=नष्ट होते हुए । दीप पात्रकसकाशै:=दीपक और अग्नि के समान तेजस्वी । न उपेक्षेयम्=उपेक्षा नहीं करना चाहता ॥११॥

अन्वय—यथा प्रदीप्तं शरणं नश्यन्तम् न उपेक्षेयम् दीपपवक संकाशै: काञ्चन भूषणै: शितै: ॥११॥

सरलार्थ—मैं श्रीराम के अग्नि के समान देदीप्यमान सुवर्ण आभूषणों के समान सुन्दर तीखे बाणों से आपकी मृत्यु नहीं देखना चाहता ॥११॥

श्लोक—"न त्वामिच्छाम्यहम् ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—त्वां=तुमको । रामेण = राम के द्वारा । निहतं=मारे गये । शूरा:=वीर । रणाजिरे=युद्ध भूमि में ॥१२॥

अन्वय—रामेण शरैः निहतं त्वां अहं द्रष्टुं न इच्छामि रणाजिरे शूराः बलन्तः कृतास्त्राश्च ॥१२॥

सरलार्थ—राम के बाणों के द्वारा मारे गये तुमको देखना नहीं चाहता। युद्ध भूमि में शूरवीर, बलवान् एवं बड़े शास्त्रधारी योद्धा नष्ट होते हैं ॥१२॥

श्लोक—"कालाभिपन्नाः सीदन्ति।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ—कालाभिपन्नाः=मृत्यु के आधीन। बालुकासेतवः=बालु के पुल की तरह। मर्षयतु=सहन करिये। गुरुत्वात्=ज्येष्ठ होने के नाते। हित-मिच्छता=कल्याण चाहने वाले मैंने ॥१३॥

अन्वय—कालाभिपन्ना= अन्तः यथा बालुकासेतवः तथा सीदन्ति गुरुत्वात् हितम् इच्छता यत् च उक्तम्: तत् मर्षयतु ॥१३॥

सरलार्थ—मृत्यु के वशीभूत होकर बड़े बड़े योद्धा भी बालू की भीत के समान नष्ट हो जाते हैं। जिनकी आयु समाप्त हो जाती है उनको अपने सुहृदों की बात अच्छी नहीं लगती है। अतः आपको बड़ा समझ कर आपकी हित कामना से मैंने जो कुछ कहा है उसे क्षमा करें ॥१३॥

श्लोकः—"आत्मानं सर्वथा रक्ष।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ—आत्मानं=स्वयं को। रक्ष=बचाओ। सराक्षसम्=राक्षसों के साथ। ते स्वस्ति अस्तु=आपका कल्याण हो ॥१४॥

अन्वय—सर्वथा इमां सराक्षसम् पुरीं आत्मानं च रक्ष ते स्वस्ति अस्तु गमिष्यामि मया विना सुखी भव ॥१४॥

सरलार्थः—आप अपनी और राक्षसों सहित इस पुरी की रक्षा करें। आपका कल्याण हो। लीजिये, मेरे बिना आप आनन्द से रहिये, मैं तो जाता हूं ॥१४॥

——oo——

द्वितीयः सर्गः

विभीषण-शरणागतिः

श्लोक—"इत्युक्त्वा परुषं वाक्यम् ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ—इत्युक्त्वा=ऐसा कह कर । परुषं=कठोर । रावणानुजः=विभीषण । मुहूर्तेन=क्षण भर में । आजगाम=आगया ॥१॥

अन्वय—रावणानुजः इति परुषं वाक्यं रावणं उक्त्वा मुहूर्तेन यत्र रामः स लक्ष्मणः आजगाम ॥१॥

सरलार्थ—विभीषण इस प्रकार कठोर वचन वचन रावण को कह कर क्षण भर में जहां राम और लक्ष्मण थे वहां आ गये ॥१॥

श्लोक—"सं मेरुशिखराकारम् ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—मेरुशिखराकारम्=मेरु पर्वत के समान । गगनस्थं=आकाश में रहे हुये । शतहृदामिव=बिजली की तरह । महीस्थाः=भूमि पर खड़े ॥२॥

अन्वय—दीप्ताम् शतहृदाम् इव महीस्थाः वानराधिपाः गगनस्थं मेरु शिखराकारं तं ददृशुः ॥२॥

सरलार्थ—आकाश में चमचमाती बिजली के समान भूमि पर खड़े बन्दरों ने आकाश में रहे हुये मेरु पर्वत के समान उस विभीषण को देखा ॥२॥

श्लोक—"चिन्तयित्वा मुहूर्तं तु ।" ॥३॥

शब्दार्थ—चिंतयित्वा=विचार कर । मुहूर्तं=दो घड़ी । वानराधिपः=सुग्रीव । उवाच=बोले ॥३॥

अन्वय—वानराधिपः मुहूर्तं चिन्तयित्वा हनुमत्प्रमुखान् तान् सर्वान् वानरान् इदं उत्तमं वचनं उवाच ॥३॥

सरलार्थ—वानरों का राजा सुग्रीव दो घड़ी विचार विमर्श कर हनुमान् प्रभृति सब बन्दरों को यह उत्तम वचन कहने लगे ॥३॥

श्लोक—"एषः सर्वायुधोपेतः।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—सर्वायुधोपेतः=सब शस्त्रों से सज्ज। चतुर्भिः राक्षसैः सह=चार राक्षसों के साथ। अभ्येति=आ रहा है। हन्तुं=मारने को। पश्यध्वम्=देखिये ॥४॥

अन्वय—एषः सर्वायुधोपेतः राक्षसः चतुर्भिः राक्षसैः सह अस्मान् हन्तुं अभ्येति पश्यध्वम् न संशयः ॥४॥

सरलार्थः—यह समस्त शस्त्रों से सुसज्जित राक्षस चार राक्षसों के साथ हमें मारने के लिये आ रहा है। इसे देखिये। इसमें सन्देह नहीं है ॥४॥

श्लोक—"तेषां सं भाषमाणानाम्।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थः—अन्योऽन्यं=परस्पर। तीरं=किनारे को। आसाद्य=प्राप्त कर। खस्थ=आकाश में ठहर कर ॥५॥

अन्वयः—अन्योऽन्यं संभाषमाणानां तेषां विभीषणः उत्तरं तीरं आसाद्य खस्थ एव व्यतिष्ठत् ॥५॥

सरलार्थः—जिस समय वानर लोग आपस में इस प्रकार की बात कर रहे थे। उसी समय विभीषण समुद्र के उत्तरी तट पर आकर आकाश में ही ठहर गये ॥५॥

विभीषण उवाच—

श्लोक—"रावणो नाम दुर्वृत्तो।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थ—दुर्वृत्तः=दुराचारी। राक्षसेश्वर=रावण। अनुजः=छोटा भाई। श्रुतः=प्रसिद्ध ॥६॥

अन्वयः—राक्षसेश्वरः रावणः नाम दुर्वृत्तः राक्षसः तस्य अहं अनुजः भ्राता विभीषण इति श्रुतः ॥६॥

सरलार्थ—राक्षसों के अधिपति रावण नाम का एक दुराचारी राक्षस है उसका छोटा भाई विभीषण नाम से मैं प्रसिद्ध हूं ॥६॥

श्लोक—"तेन सीता जनस्थानात् ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—तेन उस रावण के द्वारा । जनस्थानात्=दण्डकारण्य से । उद्धृता=उड़ाई गई । विवशा=पराधीन । जटायुषं=जटायु को । हत्वां=मार कर ॥७॥

अन्वयः—तेन जनस्थानात् सीता उद्धृता जटायुषं हत्वा विवशादीना राक्षसीभिः सुरक्षिता रुद्धा ॥७॥

सरलार्थ—उस रावण के द्वारा सीता हरी गई और जटायु को मार कर परतन्त्र एवं दुःखी वह सीता राक्षसियों के द्वारा सुरक्षित एवं रोकी गई ॥७॥

श्लोकः—"तमहं हेतुभिः वाक्यैः ।" ॥८॥

शब्दार्थ—तं=उस रावण को । विविधैः वाक्यैः=भिन्न २ वाक्यों से । हेतुभिः=युक्ति पूर्ण । निवर्त्यतां=लौटा दो । न्यदर्शयम्=समझाया ॥८॥

अन्वय—अहं तं हेतुभिः विविधैः वाक्यैः 'सीता रामाय निवर्त्यताम् इति पुनः पुनः न्यदर्शयम् ॥८॥

सरलार्थ—मैंने तरह तरह के युक्तिपूर्ण वाक्यों से रावण को समझाया कि "आप श्रीराम को सीता लौटा दें"–इसी में भला है यह बार बार मैंने कहा ॥८॥

श्लोकः—"स च न प्रतिजग्राह ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—न प्रतिजग्राह=स्वीकार नहीं किया । कालचोदितः=मृत्यु से प्रेरित । विपरीतः=मरणासन्न । उच्यमानं=कहा गया ॥९॥

अन्वय—कालचोदित- सः रावणः उच्यमानं हितं वाक्यं विपरीतः औषधम् इव न प्रतिजग्राह ॥९॥

सरलार्थ—काल से प्रेरित उस रावण ने मेरी बात नहीं मानी—ठीक उसी प्रकार जैसे मरणासन्न पुरुष औषध नहीं लेता है ॥९॥

श्लोकः—"सोऽहं परुषितः तेन ।" इत्यादि ॥१०

शब्दार्थ—दासवत्=नौकर की तरह । अवमानितः=तिरस्कृत । त्यक्त्वा = छोड़ कर । शरणं गतः=शरण में आया हूं ॥१०॥

अन्वयः—तेन अहं परुषितः दासवत् अवमानितः पुत्रान् दारान् च त्यक्त्वा राघवं शरणं गतः ॥१०॥

सरलार्थः—उस रावण ने मुझे बहुत सी कठोर बातें कहीं और मेरा अपमान भी किया । इसी से मैं अपने स्त्री पुत्रों को छोड़ कर श्रीराम की शरण में आया हूं ॥१०॥

श्लोक—"सर्वलोक शरण्याय ।" इत्यादि ॥११॥

अन्वयः—सर्व लोक शरण्याय महात्मने राघवाय क्षिप्रं उपस्थितं मां विभीषणं निवेदयत ॥११॥

सरलार्थः—भगवान् राम सबको शरण देने वाले हैं, आप लोग उनसे जाकर निवेदन करें कि विभीषण आया है ॥११॥

सुग्रीव उवाच—

श्लोकः—"एतत्तु वचनं श्रुत्वा ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—लघुविक्रमः=अल्प पराक्रम वाले । संरब्धम्=घबराहट के साथ । अब्रवीत्=कहा ॥१२॥

अन्वयः—लघु विक्रमः सुग्रीवः एतत् वचनं श्रुत्वा लक्ष्मणस्य अग्रतः रामं संरब्धम् इदम् अब्रवीत् ॥१२॥

सरलार्थ:—पराक्रमी सुग्रीव ने विभीषण की यह बात सुन कर श्रीराम के पास जाकर उनसे लक्ष्मणजी के सामने कुछ घबराहट के साथ कहा ॥१२॥

श्लोक—"रावणस्यानुजो भ्राता।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थ:—अनुज:=छोटा। भ्राता=भाई। भवन्तं=आपकी। शरणं गत:=शरण में आया है ॥१३॥

अन्वय—रावणस्य अनुज: भ्राता विभीषण इति श्रुतः चतुर्भिः रक्षोभि: सह भवन्तं शरणंगत: ॥१३॥

सरलार्थ—रावण का छोटा भाई विभीषण चार राक्षसों के साथ आपकी शरण में आया है ॥१३॥

श्लोक—"प्रविष्ट: शत्रु सैन्यं हि।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ:—प्रविष्ट:=घुस गया है। अतर्कित: = अचानक। अन्तरं-लब्ध्वा=अवसर पाकर। निहन्यात्=मार डालेगा। उलूक:=उल्लू ॥१४॥

अन्वय—प्राज्ञ: अतर्कित: शत्रु: सैन्यं प्रविष्ट: उलूक: वायसम् इव अन्तरं लब्ध्वा निहन्यात् ॥१४॥

सरलार्थ—आज अकस्मात् शत्रु की सेना का बुद्धिमान् एक योद्धा हमारी सेना में आगया है। जैसे उल्लू कौओं को मार डालता है उसी प्रकार अवसर पाकर वह हमें मार डालेगा ॥१४॥

श्लोक—"वध्यतामेष दण्डेन।" इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ:—तीव्रेण=कठोर। दण्डेन=दण्ड से। सचिवै:सह=प्रधानों के साथ। नृशंसस्य=क्रूर ॥१५॥

अन्वय:—सचिवै: सह एष: तीव्रेण दण्डेन वध्यताम् हि नृशंसस्य रावणस्य एष: भ्राता विभीषण: अस्ति ॥१५॥

सरलार्थ:—मन्त्रियों के साथ इसे कठोर दण्ड देकर मार डालना चाहिये क्योंकि यह क्रूर रावण का भाई विभीषण है ॥१५॥

श्लोक—"न भवन्तं मति श्रेष्ठम् ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—मति श्रेष्ठं=बुद्धि में श्रेष्ठं वदतां वरं=श्रेष्ठ वक्ता। अतिशाययितुं=उल्लंघन करने को। न शक्तः=समर्थ नहीं है ॥१६॥

अन्वय— हे समर्थ! वदतां वरं मतिश्रेष्ठं भवन्तं ब्रुवन् बृहस्पतिः अपि अतिशाययितुं न शक्तः ॥१६॥

सरलार्थ—भगवान् आप बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, तत्त्व का निर्णय करने में समर्थ और श्रेष्ठ वक्ता हैं। बोलने में साक्षात् बृहस्पति भी आप से बाजी नहीं ले सकते ॥१६॥

श्लोकः—"दौरात्म्यं रावणे दृष्ट्वा।" इत्यादि ॥१७॥

शब्दार्थः—दौरात्म्यं=दुष्टता। त्वयि=तुम्हारे विषय में। आगमनं= आना। युक्तम्=उचित है ॥१७॥

अन्वयः—रावणे दौरात्म्यं दृष्ट्वा तथा त्वयि विक्रमं तस्य आगमनं युक्तम् बुद्धिमतः तस्य सदृशम् ॥१७॥

सरलार्थः—विभीषण ने तुम्हारे पराक्रम एवं रावण की दुष्टता को देखकर दोनों के गुण दोषों का विचार करके उसका यहां आना उचित हैं और बुद्धि से उसके योग्य है ॥१७॥

श्लोकः—"देशकालोपपन्नं च।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—देशकालोपपन्नं=देश और कालके अनुकूल। कार्यविदां वरः= कार्य जानने वालों में श्रेष्ठ। अभिसंहितम्=भीतरी अभिप्राय। क्षिप्रं= जल्दी ॥१८॥

अन्वय—हे कार्यविदां वर! कार्यं देशकालोपपन्नम् प्रायेण अभिसंहितम् क्षिप्रं सफलं कुरुते ॥१८॥

सरलार्थः—हे कार्य जानने वालों में श्रेष्ठ! इस विभीषण का कार्य देश और कालके अनुकूल है। मनुष्य का भीतरी अभिप्राय शीघ्र स्पष्ट जाहिर हो जाता है। प्रयत्न करने भी छिपाया नहीं जा सकता ॥१८॥

श्लोकः—"उद्योगं तव संप्रेक्ष्य ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थः—संप्रेक्ष्य = देखकर । मिथ्यावृत्तं=दुर्व्यवहार । वधं श्रुत्वा= मरण सुनकर ॥१६॥

अन्वय—तव उद्योगं रावणं च मिथ्यावृत्तं संप्रेक्ष्य वालिनः वधं सुग्रीवं अभिषेचितम् श्रुत्वा ॥१६॥

सरलार्थ—आपके उद्योग, रावण के दुर्व्यवहार, वालि का मरण और सुग्रीव की राज्य प्राप्ति का समाचार सुनकर वह आया है ॥१६॥

श्लोक—"राज्यं प्रार्थयमानश्च ।" इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ—राज्यं=राज को । प्रार्थयमानः=चाहता हुआ । बुद्धिपूर्वं= समझबुझ कर । पुरस्कृत्य=सत्कार करके । संग्रहः=रखना चाहिये ॥२०॥

अन्वय—राज्यं प्रार्थयमानः इह बुद्धिपूर्वं आगतः । एतावत् पुरस्कृत्य अस्य संग्रहः युज्यते ॥२०॥

सरलार्थ—राज्य पाने की इच्छा से यह विभीषण समझबूझ कर आपके पास आया है अतः इसका सत्कार करके इसे आश्रम देना उचित जान पड़ता है ॥२०॥

राम उवाच—

श्लोकः—"मित्र भावेन संप्राप्तम् ।" ॥२१॥

शब्दार्थ—मित्र भावेन=मित्रता से । संप्राप्तम्=आये हुये । सतां= सज्जनों के लिये । अगर्हितम्=अनिन्दित ॥२१॥

अन्वय—मित्र भावेन संप्राप्तम् कथंचन न त्यजेयम् । यद्यपि तस्य दोषः स्यात् सतां एतत् अगर्हितम् ॥२१॥

सरलार्थ—विभीषण मित्र भाव से मेरे पास आया है, इसलिये मै उसे त्याग नहीं सकता । सम्भव है कि उनमे कोई दोष भी हो परन्तु दोषी को आश्रय देना भी सत्पुरुषो के लिये निन्दनीय नहीं है ॥२१॥

श्लोक—"सुदुष्टो,वाप्यदुष्टो वा ।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ—रजनीचरः=राक्षस । सूक्ष्मं=तनिक । अहितं=अकल्याण । कर्तुं=करने के लिये । अशक्तः=असमर्थ ॥२२॥

अन्वयः—दुष्टः अदुष्टः वा अपि भवेत् एषः किं रजनीचरः मम सूक्ष्मम् अपि अहितं कर्तुं कथंचन अशक्तः ॥२२॥

सरलार्थ—दुष्ट अथवा अदुष्ट यह है इससे क्या ? है तो यह राक्षस ही । यह मेरा तनिक भी कभी अहित नहीं कर सकता है ॥२२॥

श्लोक—"पिशाचान् दानवान् ।" इत्यादि २३॥

शब्दार्थ—पिशाचान्=पिशाचों को । दानवान्=असुरों को । अङ्गुल्यग्रेण=अङ्गुली मात्र से । इच्छन्=चाहता हुआ ॥२३॥

अन्वयः—हे हरिगणेश्वर ! पृथिव्यां पिशाचान् दानवान् यक्षान् राक्षसान् इच्छन् तान् अङ्गुल्यग्रेण हन्याम् ॥२३॥

सरलार्थ—हे वानराधिप ! पृथिवी में पिशाच असुर यक्ष तथा राक्षसों को मैं अङ्गुली मात्र से ही उन सबको नष्ट कर सकता हूं ॥२३॥

श्लोकः—"न हन्यादानृशंस्यार्थम् ।" इत्यादि ॥२४॥

शब्दार्थ—शत्रुं=शत्रु को । न हन्यात्=न मारडालें । आर्तः=दुःखी । दृप्तः=घमंडी । आनृशंस्यार्थम्=दया धर्म की रक्षा के लिये ॥२४॥

अन्वय—हे परंतप ! आनृशंस्यार्थम् अपि शत्रुं न हन्यात् आर्तः यदि वा दृप्तः परेषां शरणं आगतः ॥२४॥

सरलार्थ—हे परम तपस्वी ! दयाधर्म की रक्षा के लिये भी शत्रु को नहीं मारना चाहिये । दुःखी अथवा घमंडी वह अपनी शरण में आजाता है तो शरण देनी चाहिये ॥२४॥

श्लोक—"अपि प्राणान् परित्यज्य ।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थ—प्राणान्=प्राणों को । परित्यज्य=छोड कर । कृतात्मना=दयालु मनुष्य के द्वारा । मोहात्=अज्ञान से ॥२५॥

अन्वयः—कृतात्मना अपि प्राणान् परित्यज्य शरणागतः रक्षितव्यः कामात् भयात् मोहात् वा तं न रक्षति ॥२५॥

सरलार्थः—दयालु मनुष्य को चाहिये कि वह प्राणों को छोड़कर भी शरणागत की रक्षा करें। जो व्यक्ति इच्छा से भय से अथवा अज्ञान से उसकी रक्षा नहीं करता है ॥२५॥

श्लोक—"स्वस्या शक्त्या यथा न्यायं।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—स्वस्या=अपनी। शक्त्या = शक्ति से। यथा न्यायं=न्याय के अनुसार। अरक्षितुः=रक्षा नहीं करने वाले के पश्यतः=देखते हुये ॥२६॥

अन्वय—स्वस्या शक्त्या यथा न्यायं यस्य अरक्षितुः पश्यतः शरणागतः विनष्टः यत् लोकगर्हितम् पापम् ॥२६॥

सरलार्थ—अपनी शक्ति के अनुसार न्याय के अनुसार जिस शरण नहीं देने वाले व्यक्ति के देखते हुये शरणागत नष्ट हो जाता हैं वह लोक-निन्दित महान् पाप गिना जाता है ॥२६॥

श्लोक—"अभयं सर्व भूतेभ्यः।" इत्यादि ॥२७॥

शब्दार्थ—सर्व भूतेभ्यः=सब प्राणियों के लिये। अभयं=अभयदान। ददामि=देता हूं। अस्य=इसको। अभयं=अभयदान। दत्तम्=दिया ॥२७॥

अन्वयः—सर्व भूतेभ्यः अभयं ददामि मम एतत् व्रतम् हे हरि श्रेष्ठ एनं आनय मया अस्य अभयं दत्तम् ॥२७॥

सरलार्थ—सब प्राणियों के लिये मैं अभय दान देता हूं यह मेरा अटल नियम है। हे वानर श्रेष्ठ! विभीषण को ले आवो। मैंने इसको भी अभयदान दे दिया है ॥२७॥

श्लोक—'विभीषणो वा सुग्रीवो वा।" इत्यादि ॥२८॥

शब्दार्थ—रामस्य = राम का। वचः = वचन को। श्रुत्वा=सुन कर ॥२८॥

अन्वय—विभीषण: सुग्रीव: यदि वा स्वयं रावण: प्लवंगेश्वर: सुग्रीव: रामस्य वच: श्रुत्वा ॥२८॥

सरलार्थ—यदि विभीषण सुग्रीव या स्वयं रावण भी शरण में आ जाय तो मैं अभय दान दे सकता हूं। इस प्रकार राम के वचन को सुन कर वानराधिपति सुग्रीव ने राम से कहा ॥२८॥

श्लोक:—"प्रत्यभापत काकुत्स्थं।" इत्यादि ॥२६॥

शब्दार्थ—काकुत्स्थं=राम को। सौहार्देन=मित्रता से। अभिचोदित:= प्रेरित ॥२६॥

अन्वय—सौहार्देन अभिचोदित: काकुत्स्थं प्रत्यभापत हे धर्मज्ञ ! लोकनाथ ! सुखावह ! अत्र किं चित्रम् ॥२६॥

सरलार्थ—इस प्रकार मित्रता से प्रेरित होकर सुग्रीव ने राम से कहा कि हे धर्मज्ञ ! लोकनाथ ! इसमें क्या आश्चर्य है ॥२६॥

श्लोक—"यत्त्वमार्य प्रभाषेथा:।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ:—प्रभाषेथा:कहते हो। सत्ये स्थित=सत्मार्ग में रहे हुये। मम=मेरा। अन्तरात्मा=दिल। वेत्ति=जानता है ॥३०॥

अन्वय:—हे आर्य ! सत्यवान् सत्पथे स्थित: त्वं प्रभाषेथा: मम अपि अयं अन्तरात्मा विभीषणं शुद्धं वेत्ति ॥३०॥

सरलार्थ:—हे आर्य ! पराक्रमी और सन्मार्ग में स्थित आप कहते हो वह ठीक है। मेरी भी यह अन्तरात्मा इस विभीषण को पवित्र मानती है ॥३०॥

श्लोक:—"अनुमानाच्च भावाच्च।" इत्यादि ॥३१॥

शब्दार्थ—अनुमानात्=अनुमान से। भावात्=अभिप्राय से। अस्माभि: सह=हमारे साथ। न:=हमारे। सखित्वं=मित्रता को। उपैतु=प्राप्त करे ॥३१॥

अन्वय—हे राघव ! अनुमानात् भावात् सर्वतः महाप्राज्ञः विभीषणः सुपरीक्षितः तस्मात् शीघ्रं अस्माभिः सह तुल्यः भवतु सखित्वं अभ्युपैतु ॥३१॥

सरलार्थ—हे राम ! अनुमान से और अभिप्राय से अच्छी तरह से हमने बुद्धिमान् विभीषण की परीक्षा करली है इस लिये शीघ्र वह हमारे समान हो जावे और हमारी मित्रता को प्राप्त करे ॥३१॥

राम उवाच—

श्लोकः—"अहं हत्वा दशग्रीवम् ।" इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थः—अहं = मैं । दशग्रीवम्=रावण को । हत्वा=मार कर । सप्रहस्तं = प्रहस्त के साथ । सानुजम्=छोटे भाई के साथ । त्वां=तुमको । राजानं करिष्यामि=राजा बनाऊंगा । सत्यं=सच । ब्रवीमि=बोलता हूं ॥३२॥

अन्वय—अहं सप्रहस्तं सहानुजं दशग्रीवं हत्वा त्वां राजानं करिष्यामि एतत् त्वां सत्यं ब्रवीमि ॥३२॥

सरलार्थ—मैं प्रहस्त और छोटे भाई के साथ रावण को मार कर तुमको राजा बनाऊंगा । यह मै सत्य बात तुम्हे कहता हूं ॥३२॥

श्लोकः—"रसातलं वा प्रविशेत् ।" इत्यादि ॥३३॥

शब्दार्थ—रसातलं = भूमि में । प्राविशेत्=प्रवेश कर लेवें । पितामह संकाशं=ब्रह्मा के लिये । जीवन्=जिन्दा रहता हुआ । मे=मेरे द्वारा । न विमोच्यते=नहीं छूटेगा ॥३३॥

अन्वयः—रावणः रसातलं पातालं वा प्राविशेत् पितामहसंकाशं वा जीवम् मे न विमोच्यते ॥३३॥

सरलार्थः—यदि रावण पृथिवी में या पाताल में या ब्रह्मा के पास भी चला जावेगा तो भी जिन्दा रहते हुए मेरे द्वारा वह छोडा नहीं जायगा ॥३३

श्लोकः—"अहत्वा रावणं संख्ये।" इत्यादि ॥३४॥

शब्दार्थः—संख्ये=युद्ध में। सपुत्रबलबान्धवम्=पुत्र सेना और बन्धुओं के साथ। रावणं=रावण को। अहत्वा=न मार कर। तैः तिसृभिः मातृभिः शपे=तीनों माताओं की सौगन्ध खाता हूं। न प्रवेक्ष्यामि=प्रवेश नहीं करूंगा ॥३४॥

अन्वय—संख्ये=सपुत्र बलबान्धवम् रावणं अहत्वा तिसृभिः मातृभिः शपे अहं अयोध्यां न प्रवेक्ष्यामि ॥३४॥

सरलार्थः—युद्ध में पुत्र सेना और बन्धुओं के साथ रावण को बिना मारे मैं अयोध्या में प्रवेश नहीं करूंगा। तीनों माताओं की सौगन्ध खाकर कहता हूं ॥३४॥

—ooo—

तृतीयः सर्गः

सीतायाः अग्निपरिशुद्धिः

राम उवाच—

श्लोक—"युद्धो विक्रमतश्चैव इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थ:—विक्रान्तः=पराक्रम से। हितं=हितकर। मंत्रयतः=विचार करते हुये। सफलः=सफल हो गया ॥१॥

अन्वय—युद्धे विक्रमतः तथा हितं मंत्रयतः ससैन्यस्य सुग्रीवस्य अद्य परिश्रमः सफलः ॥१॥

सरलार्थ—सेना सहित सुग्रीव ने युद्ध में पराक्रम दिखलाया तथा समय समय पर मुझे हित कर सलाह देते रहे हैं, इनका परिश्रम भी सफल हो गया ॥१॥

श्लोक—"रक्षता तु मया वृतम् ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—वृतम् = सदाचार । अपवादं=लोकनिन्दा । व्यङ्ग्य= कलंक । आत्मवंशस्य=अपने वंश का ॥२॥

अन्वयः—सर्वतः वृत्तं अपवादं च रक्षता मया प्रख्यातस्य आत्मवंशस्य व्यङ्ग्यं च परिमार्जिता ॥२॥

सरलार्थः—मैं ने चारों तरफ से सदाचार की रक्षा करने के लिए, तथा अपने को अपवाद से मुक्त करने एवं अपने प्रख्यात वंश का कलंक मिटाने के लिए ही यह सब कुछ किया हैं ॥२॥

श्लोक—"प्राप्त चरित्र संदेहा ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थः—प्राप्त चरित्र संदेहा=चरित्र में जिसके संदेह हैं । प्रति-मुखे=सामने । स्थिता=खडी है । नेत्रा तुरस्य=आंख के रोगी के ॥३॥

अन्वयः—मम त्वं प्राप्त चरित्र संदेहा प्रतिमुखे स्थिता नेत्रातुरस्य दीप इव मे दृढा प्रति कूला असि ॥३॥

सरलार्थ—तुम्हारे चरित्र में सन्देह का अवसर उपस्थित है फिर भी तुम मेरे सामने खड़ी हो । जैसे आंख के रोगी को दीपक की ज्योति नहीं सुहाती, उसी प्रकार आज तुम अत्यन्त अप्रिय जान पडती हो ॥३॥

श्लोक—"तद्गच्छ त्वामनु जाने ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—गच्छ=जाओ । त्वां=तुमको । अनुजाने=आज्ञा देता हूं । त्वया=तुम्हारे से । कार्यं=मतलब ॥४॥

अन्वय—तत् यथेष्टं गच्छ अद्य त्वां अनुजाने हे जनकात्मजे ! हे भद्रे ! एता दशदिशः त्वया में कार्यम् नास्ति ॥४॥

सरलार्थः—इसलिये हे जानकी ! तुम्हारी जहां इच्छा हो, चली जाओ । मैं अपनी ओर से तुम्हें अनुमति देता हूं । ये दसों दिशाएं तुम्हारे लिये खुली हैं । मुझे अब तुमसे कोई मतलब नहीं हैं ॥४॥

श्लोक—"कः पुमांस्तु कुले जातः ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ—पुमान्=पुरुष । कुले जातः=कुलीन । परगृहोषितां=दूसरे के घर में रही हुई । स्त्रियं=स्त्री को । पुनः आदद्यात्=फिर ग्रहण करें ॥५॥

अन्वयः—कुले जातः तेजस्वी कः पुमान् परगृहोषितां स्त्रियं सुहृल्लोभेन चेतसा पुनः आदद्यात् ॥५॥

सरलार्थ—कौन ऐसा कुलीन पुरुष होगा, जो तेजस्वी होकर भी दूसरे के घरमें रही हुई स्त्री को मित्र के लोभ से ग्रहण करेगा ! अतः अब तुम जहां जाना चाहो जा सकती हो ॥५॥

श्लोक—"यदर्थं निर्जिता मे त्वं ।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थः—यदर्थं=जिस कारण से । मे=मेरे से । निर्जिता=जीती गई । आसादितः=प्राप्त किया है । अभिष्वङ्गः=स्नेह ॥६॥

अन्वयः—यदर्थं त्वं मे निर्जिता मया सः अयम् आसादितः मे त्वयि अभिष्वङ्गः नास्ति यथेष्टं गम्यताम् इति ॥६॥

सरलार्थः—जिस अपयश के निवृत्ति के लिये मैंने तुम्हें जीता है वह फल मुझे प्राप्त हो गया । मुझे तुम्हारे पर कोई प्रेम नहीं है तुम अपनी इच्छानुसार जहां चाहो वहां जा सकती हो ॥६॥

श्लोक—"ततो वाष्पपरिक्लिन्नम् ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थः—वाष्पपरि क्लिन्नं=आंसूओं से भीगे हुये । आननं=मुख को परिमार्जन्ती=साफ करती हुई । गद्गदया=गद्गद्कंठ से ॥७॥

अन्वयः—ततः वाष्पपरिक्लिन्नं स्वम् आननं परिमार्जन्ती शनैः शनैः गद्गदया वाचा भर्तारं इदं अब्रवीत् ॥७॥

सरलार्थः—उसके बाद नेत्रों के जल से भीगे हुये मुख को अंचल से पोंछती हुई सीता अपने स्वामी रघुनाथजी से गद्गद् वाणी में बोली ॥७॥

श्लोक—"किं मामसदृशम् वाक्यम् ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थ—मां=मुझको । असदृशं=अनुचित । श्रोत्रदारुणम्=कठोर वचन । प्राकृत:=साधारण मनुष्य । रुक्षं=रूखा ॥८॥

अन्वय—हे वीर ! प्राकृतः प्राकृतम् इव मां ईदृशं श्रोत्रदारुणं असदृशं रुक्षं वाक्यं किं श्रावयसे ॥८॥

सरलार्थ—हे प्राणनाथ ! जैसे साधारण मनुष्य किसी तुच्छ मनुष्य की बात करता है उसी प्रकार आप ऐसे अनुचित एवं कठोर तथा रूखे वचन मुझे क्यों सुना रहे हैं ! ॥८॥

श्लोक:—"न तथाऽस्मि महाबाहो ।" इत्यादि ॥९॥

शब्दार्थ—मां=मुझको । अवगच्छसि=समझते हो । प्रत्ययंगच्छ=विश्वास करो । स्वेन चारित्रेण=अपने सदाचार की । शपे=शपथ खाकर कहती हूं ॥९॥

अन्वय—हे महाबाहो ! अहं तथा न अस्मि यथा मां अवगच्छसि मे प्रत्ययं गच्छ स्वेन चारित्रेण ते शपे ॥९॥

सरलार्थ—हे महाबाहु ! मुझ पर विश्वास कीजिये । मैं अपने सदाचार की शपथ खाकर कहती हूं आप मुझे जैसी समझ रहे हैं, वैसी मैं नहीं हूं ॥९॥

श्लोक—"पृथक् स्त्रीणां प्रचारेण ।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—पृथक्=नीचजाति की स्त्रियों का । प्रचारेण=आचरण से । जातित्वं=स्त्रीजाति पर । परिशंकसे=संदेह करते हो ॥१०॥

अन्वय—स्त्रीणां पृथक् प्रचारेण जातित्वं परिशङ्कसे यदि तेऽहं परीक्षिता एनां शंका परि त्यज ॥१०॥

सरलार्थ:—नीच श्रेणी की स्त्रियों का आचरण देखकर यदि आप समूची स्त्री जाति पर सन्देह करते हैं तो यह उचित नहीं है । यदि मेरे स्वभाव को आपने अच्छी तरह परखा होता अपने मनसे सन्देह को निकाल दीजिये ॥१०॥

श्लोकः—"त्वया तु नृप शार्दूल ।" इत्यादि ॥११॥

शब्दार्थः—नृप शार्दूल=नृपकेसरी । रोषं=क्रोध को । अनुवर्तता=वशीभूत होकर । लघुना=ओछे । मनुष्येण इव=मनुष्य की तरह ॥११॥

अन्वय—हे नृप शार्दूल ! रोषमेवानुवर्तता त्वया लघुना मनुष्येण इव स्त्रीत्वम् एव पुरस्कृतम् ॥११॥

सरलार्थ—हे राजाओं में श्रेष्ठ ! आपने क्रोध के वशीभूत होकर ओछे मनुष्यों की तरह आपने मेरे शील स्वभाव का विचार न करके साधारण स्त्रियों की भांति मुझे कलङ्कित समझ लिया ॥११॥

श्लोक—"न प्रमाणी कृतः पाणिः ।" इत्यादि ॥१२॥

शब्दार्थ—न प्रमाणीकृतः=स्वीकार नहीं किया । निपीडितः=ग्रहण किया गया । भक्तिः=अनुराग । शीलं=स्वभाव । पृष्ठतः कृतम्=एक साथ भुला दिया ॥१२॥

अन्वय—बाल्ये निपीडितः मम पाणिः न प्रमाणी कृतः ममः भक्तिः शीलं च ते सर्वं पृष्ठतः कृतम् ॥१२॥

सरलार्थ—बचपन में विवाह के समय ग्रहण किये गये मेरे हाथ को भी तुमने प्रमाण नहीं माना । तुम्हारे प्रति मेरे अनुराग और मेरे शील को आपने एक साथ भुला दिया ॥१२॥

श्लोक—"इति ब्रुवन्ती रुदती ।" इत्यादि ॥१३॥

शब्दार्थः—इति ब्रुवन्ती=इस प्रकार कहती हुई । रुदती=रोती हुई । दीनं=दुखी । ध्यानपरायणम्=ध्यान में लगे हुये ॥१३॥

अन्वय—इति ब्रुवन्ती रुदती बाष्पगद्गदभाषिणी सीता दीनं ध्यानपरायणं लक्ष्मणं उवाच ॥१३॥

सरलार्थ—इस प्रकार बोलती हुई तथा रोती हुई आंसुओं से गद्गद कंठवाली सीता ने दुःखी तथा ध्यान में मग्न लक्ष्मण से कहा ॥१३॥

श्लोक:—"चितां मे कुरु सौमित्रे ।" इत्यादि ॥१४॥

शब्दार्थ—व्यसनस्य=दुःख का भेषजम्=औषध । मिथ्याप वादोपहता=झूठो लोक निन्दा से दूषित । जीवितु =जीने के लिये । न उत्सहे=नहीं चाहती हूं ॥१४॥

अन्वय—हे सौमित्रे ! अस्य व्यसनस्य भेषजम् मे चितां कुरु मिथ्यापवादोपहता अहं जीवितु न उत्सहे ॥१४॥

सरलार्थ—हे लक्ष्मण ! इस दुःख का औषध रूप मेरे लिये चिता को बनाओ । झूठी लोक निन्दा से दूषित मैं जीना अब नहीं चाहती हूं ॥१४॥

श्लोक:—"अप्रीतेन गुणैं भंर्त्रा ।"- इत्यादि ॥१५॥

शब्दार्थ—अप्रीतेन=अप्रसन्न । गुणैः=मेरे गुणों से । भर्त्रा=स्वामी के द्वारा । जनसंसदि=जनता की सभा में । क्षमा=पृथ्वी । गतिः=सहारा । हव्यवाहनम् = अग्नि में ॥१५॥

अन्वय—जन संसदि गुणैः अप्रीतेन भर्त्रा या अहं त्यक्ता या क्षमा मे गतिः हव्य वाहनम् गन्तु प्रवेक्ष्ये ॥१५॥

सरलार्थ—लोगों की सभा में मेरे गुणो से अप्रन्न मेरे स्वामी के द्वारा मैं तजी गई हूं । वह पृथ्वी ही मेरा सहारा है मैं अग्नि में प्रवेश करूंगी ॥१५॥

श्लोक:—"स विज्ञाय मनः छन्दम् ।" इत्यादि ॥१६॥

शब्दार्थ—सः=लक्ष्मण । विज्ञाय=जानकर । मनः छन्दं=मनके अभिप्राय को । आकार सूचितम्=इशारे से बताये गये ॥१६॥

अन्वय:—सः वीर्यवान् सौमित्रिः रामस्य आकार सूचितं मनश्छन्दं विज्ञाय रामस्य मते चितां चकार ॥१६॥

सरलार्थः—उस पराक्रमी लक्ष्मणजी ने राम के इशारे से बताये गये मन के अभिप्राय को समझ कर रामके मत में रहते हुये चिता को तैयार किया ॥१६॥

श्लोक:—"अधोमुखं स्थितं रामम् ।" इत्यादि॥१७॥

शब्दार्थ:—प्रदक्षिणं कृत्वा=प्रदक्षिणा करके । अधोमुखं स्थितं=नीचे की ओर मुख किये हुये । दीप्यमानं=प्रज्वलित । हुताशनं = अग्नि के । उपावर्तत=पास गई ॥१७॥

अन्वय:—वैदेही ततः अधोमुखं स्थितं रामं प्रदक्षिणं कृत्वा दीप्यमानं हुता शनं उपावर्तत ॥१७॥

सरलार्थ:—सीता उसके बाद नीचे की ओर मुख किये हुये राम की प्रदक्षिणा करके प्रज्वलित अग्निदेव के पास गई ॥१७॥

श्लोक—"प्रणम्य दैवतेभ्यश्च ।" इत्यादि ॥१८॥

शब्दार्थ—प्रणम्य=नमस्कार करके । दैवतेभ्यः=देवताओं को । वद्धाञ्जलिपुटा=हाथ जोड़कर । अग्निसमीहत:=अग्नि के पास से ॥१८॥

अन्वय:—मैथिली दैवतेभ्यः ब्राह्मणेभ्यः प्रणम्य वद्धाञ्जलि पुटा अग्नि समीपत: इदम् उवाच ॥१८॥

सरलार्थ—सीता ने ब्राह्मणों को और देवताओं को प्रणाम करके हाथ जोड़ कर अग्निदेव के पास यह कहा ॥१८॥

अन्वय:—' यथा मे हृदयं नित्यम् ।" इत्यादि ॥१९॥

शब्दार्थ—नापसर्पति=दूर नहीं जाता है । राघवात्=राम से । पातु=रक्षा करो । पावकः=अग्नि ॥१९॥

अन्वय:—यथा मे हृदयं राघवात् नित्यं न अपसर्पति तथा लोकस्य साक्षी त्वं हे पावक ! मा सर्वतः पातु ॥१९॥

सरलार्थ—जैसे मेरा दिल राम को छोडकर कभी अन्य की तरफ नहीं जाता है अर्थात् सदा राम के ध्यान में ही मग्न रहा है उसे संसार के साक्षी तुम हे अग्निदेव जानते हो । मेरी रक्षा करो ॥१९॥

श्लोक:—"यथा मां शुद्धचारित्रां दुष्टां जानाति राघवः इत्यादि ॥२०॥

शब्दार्थ:—शुद्धचारित्रां=शुद्ध चरित्रवाली। मां=मुझ को। दुष्टां=दुष्ट। जानाति=जानते हैं ॥२०॥

अन्वय:—राघव: शुद्धचरित्रां मां दुष्टां जानाति तथा सर्वलोकस्य साक्षी त्वं हे पावक! मां सर्वत: पातु ॥२०॥

सरलार्थ:—जैसे राम पवित्र चरित्रवाली मुझको समझते हैं। उसी तरह समस्त संसार के साक्षी हे अग्निदेव! तुम मेरी सब तरह से रक्षा करो ॥२०॥

श्लोक:—"एवमुक्त्वा तु वैदेही ।"

शब्दार्थ:—एवं उक्त्वा=इस प्रकार बोलकर। वैदेही=सीता ने। हुताशनं=अग्नि की। परिक्रम्य=प्रदक्षिणा करके। नि:शंकेन=शंका से रहित। प्रविवेश=घुसगयी ॥२१॥

अन्वय:—एवम् उक्त्वा वैदेही हुताशनं परिक्राम्य नि:शंकेन अंतरात्मना दीप्तं ज्वलने प्रविवेश ॥२१॥

सरलार्थ—इस प्रकार कहकर सीता ने अग्निदेव की प्रदक्षिणा करके निश्चिन्त मनसे प्रज्वलित देदीप्यमान अग्नि में प्रवेश किया ॥२१॥

श्लोक:—"विधूयाथ चितां तां तु ।" इत्यादि ॥२२॥

शब्दार्थ:—विधूय=शांत करके अर्थात् चिता ठंडी करके। हव्य वाहन:=अग्निदेव। मूर्तिमान्=शरीरधारी। गृहीत्वा=लेकर ॥२२॥

अन्वय:—अथ तां चितां विधूय हव्यवाहन: जनकात्मजां तां वैदेहीं गृहीत्वा आशु मूर्तिमान् उत्तस्थौ ॥२२॥

सरलार्थ:—उसके बाद उस चिता को शांत करके अग्निदेव जनक की पुत्री उस सीता को लेकर शीघ्र ही शरीरधारी होकर खडे हुये ॥२२॥

श्लोक:—"तरुणादित्यसंकाशाम् ।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ:—तरुणादित्यसङ्काशां=बाल सूर्य के समान तेजस्वी। तप्तकञ्चन भूषणाम्=सुवर्ण के गहनों वाला। रक्ताम्बरधरां=लाल वस्त्र पहनी हुई। नील कुञ्चितमूर्धजां=श्याम घुंघराले बालवाली ॥२३॥

अन्वय:—तरुणादित्यसंकाशां तप्तकाञ्चन भूषणां नीलकुञ्चित-मूर्धजाम् रक्ताम्बर धरां बालाम् ॥२३॥

सरलार्थ:—बाल सूर्य के समान तेजस्वी तथा सुवर्ण के अलङ्कारों से अलङ्कृत श्याम घुंघराले केशों वाली रक्त वस्त्रों को धारण करती हुई सीता को अग्निदेव ने राम को दे दिया ॥२३॥

श्लोक:—"अक्लिष्टमाल्या भरणां।" इत्यादि ॥२३॥

शब्दार्थ:—अक्लिष्टमाल्या भरणाम्=सुन्दर विकसितपुष्पमाला रूप गहनों वाली। तथा रूपां=अनिर्वचनीय सौंदर्यवाली। विभावसु:=अग्निदेव। अङ्के कृत्वा=गोद में बिठला कर ॥२४॥

अन्वय:—विभावसु: अक्लिष्ट माल्या भरणां तथारूपां अनिन्दिताम् वैदेहीं अङ्के कृत्वा रामाय ददौ ॥२४॥

सरलार्थ:—अग्निदेव ने सुन्दर विकसितपुष्पमालिकाओं का धारण करने वाली प्रशंसनीय तथा अनिर्वचनीय सौन्दर्य से परिपूर्ण सीता को गोद में बिठला कर राम को अर्पण कर दी ॥२४॥

श्लोक:—"अब्रवीत्तु तदा रामम्।" इत्यादि ॥२५॥

शब्दार्थ:—लोकस्य साक्षी=संसार का साक्षी। अस्यां=सीता में। पापं=पाप। न विद्यते=नहीं है। विशुद्धभावां=पवित्र भावों वाली। निष्पापां=पाप रहित। गृहाणीष्व=स्वीकार करो ॥२५॥

अन्वय:—तदा लोकस्य साक्षी पावक: रामं अब्रवीत् हे राम! एषा ते वैदेही अस्यां पापं न विद्यते विशुद्ध भावां निष्पापां मैथिलीं प्रति-गृह्णीष्व ॥२५॥

सरलार्थ—तब समस्त संसार के साक्षी अग्निदेव ने राम से कहा हे राम! यह तुम्हारी सीता है, इसमें कोई पाप नहीं है। पवित्र भावों वाली और निष्पाप इस सीता को तुम स्वीकार करो ॥२५॥

राम उवाच—

श्लोक—"अवश्यं चापि लोकेषु ।" इत्यादि ।।२६।।

शब्दार्थः—पावनं=पवित्रता के । अर्हति=योग्य है । दीर्घकालोषिता= लम्बे समय पर्यन्त रही हुई । रावणान्तःपुरे=रावण के रणवास में ।।२६।।

अन्वय—सीता लोकेषु अवश्यं पावनं अर्हति हि इयं रावणान्तः पुरे शुभा दीर्घकालोषिता ।।२६।।

सरलार्थ—सीता सब लोकों में अवश्य ही पवित्रता के योग्य है । यह रावण के अन्तः पुर में लम्बे समय तक रही है ।।२६।।

श्लोक—"बालिशो वत कामात्मा ।" इत्यादि ।।२७।।

शब्दार्थ—बालिशः=मूर्ख । कामात्मा=कामी । लोकः=संसार । वक्ष्यति=कहेगा । जानकीं=सीता को । अविशोध्य=विना पवित्र किये ।।२७।।

अन्वय—दशरथात्मजः रामः कामात्मा बालिशः इति जानकीं अविशोध्य लोकः मां वक्ष्यति ।।२७।।

सरलार्थः—दशरथ के पुत्र राम कामी और मूर्ख है इस प्रकार जानकी को पवित्र किये विना संसार मुझे कहेगा ।।२७।।

श्लोकः—"अनन्य हृदयां सीतां ।" इत्यादि ।।२८।।

शब्दार्थः—अनन्यहृदयां=मेरे में ही दिल वाली । मच्चित्तपरिरक्षणीम्= मेरे चित्त में वसने वाली । अवगच्छामि=जानता हूं ।।२८।।

अन्वयः—अहं अनन्यहृदयां मच्चित्तपरिरक्षणीम् जनकात्मजां मैथिलीं अवगच्छामि ।।२८।।

सरलार्थः—मैं मेरे प्रति अनुराग वाली मेरे मन में सदा वसने वाली जनक पुत्री सीता को अच्छी तरह जानता हूं ।

श्लोक—"इमामपि विशालाक्षीम् ।" इत्यादि ।।२९।।

शब्दार्थः—विशालाक्षी=दीर्घ नेत्र वाली । स्वेन तेजसा=अपने पातिव्रत्य तेज से । महोदधिः=समुद्र । वेलां=मर्यादा को ।।२९।।

अन्वय—महोदधि: इव स्वेन तेजसा रक्षितां इमां विशालाक्षीं अपि रावण: न अतिवर्तेत ॥२६॥

सरलार्थ:—जिस प्रकार समुद्र मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता है उसी प्रकार अपने पतिव्रत तेज से रक्षा की गई उस विशाल नेत्र वाली सीता की मर्यादा का भी रावण नहीं उल्लंघन कर सका ॥२६॥

श्लोक:—"न च शक्त: स दुष्टात्मा।" इत्यादि ॥३०॥

शब्दार्थ—दुष्टात्मा=दुराचारी। मनसा=मन से भी। अप्राप्यां=दुर्लभ। प्रधर्षयितुं=आक्रान्त करने को ॥३०॥

अन्वय:—दुष्टात्मस: अप्राप्यां मैथिलीं मनसा अपि दीप्तां अग्नि-शिखाम् इव प्रधर्षयितुं ॥३०॥

सरलार्थ:—दुराचारी रावण दुर्लभ सीता को मन से भी छू नहीं सकता था। जैसे कोई मनुष्य प्रज्वलित अग्नि की लपटों को छू नहीं सकता है ॥३०॥

श्लोक:—"विशुद्धा त्रिषु लोकेषु।" इत्यादि ॥३१॥

शब्दार्थ:—विशुद्धा=पवित्र। विहातुं=छोडने को। न शक्या=शक्य शक्य नहीं है।

अन्वय—त्रिषु लोकेषु विशुद्धा जनकात्मजा मैथिली मया विहातुं न शक्या यथा आत्मवता कीर्तिः ॥३१॥

सरलार्थ:—तीनों लोकों में पवित्र जकनपुत्री सीता को मैं छोड़ नहीं सकता हूं। जैसे स्वाभिमानी अपनी कीर्ति को नहीं छोड़ता है ॥३१॥

श्लोक—"इत्येवमुक्त्वा विजयी महाबल:।" इत्यादि ॥३२॥

शब्दार्थ:—महाबल:=पराक्रमी। प्रशस्यमान:=प्रशंसा कियाजाता हुआ स्वकृतेन=अपने द्वारा किये गये। कर्मणा=कार्य से। प्रियया समेत्य=सीता के साथ आकर ॥३२॥

अन्वय—इति एवम् उक्त्वा विजयी महायशाः महाबलः सुखार्हः राघवः स्वकृतेन कर्मणा प्रशस्यमानः प्रियया समेत्य रामः सुखं अनुबभूव ॥३२॥

सरलार्थः—इस प्रकार कह कर विजयी महान् कीर्ति वाले महा-पराक्रमी सुख के योग्य राम ने अपने द्वारा किये गये कार्यों से प्रशंसित सीता के साथ आकर सुख को भोगा ॥३२॥

रामभरत-समागमः

श्लोकः—"रावणं बांधवैः सार्धं ।" इत्यादि ॥१॥

शब्दार्थः—रावणं=रावण को। बान्धवैः सार्धं=भाइयों के साथ। हत्वा=मारकर। राम वाहनम्=राम का वाहन। लब्धम्=प्राप्त किया ॥१॥

अन्वयः—बान्धवैः सार्धं रावणं हत्वा महात्मना तरुणादित्यसंकाशं रामवाहनं विमानं लब्धम् ॥१॥

सरलार्थः—बन्धुओं के साथ रावण को मारकर उन महात्माने बाल सूर्य के समान तेजस्वी राम की सवारी के विमान को प्राप्त किया ॥१॥

श्लोक—"धनदस्य प्रसादेन ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थः—धनदस्य=कुबेर के। प्रसादेन=प्रसन्नता से। मनोजवम्=मनके समान वेगवाला। वैदेह्या सह=सीता के साथ ॥२॥

अन्वय—धनदस्य प्रसादेन एतत् दिव्यं मनोजवं आसीत् एतस्मिन् वैदेह्या सह वीरौ भ्रतरौ राघवो ॥२॥

सरलार्थ—कुबेर की कृपा से यह अत्यन्त सुन्दर तथा मन के समान वेग वाला विमान था इस पर सीता के साथ दोनों वीर भ्राता चढ गये ॥२॥

श्लोक—"सुग्रीवश्च महातेजाः ।" इति ॥३॥

शब्दार्थः—महातेजाः=महान् तेजस्वी। हर्षसमुद्भूतः=आनन्द से उत्पन्न निःस्वनः=महान्ध्वनि। दिवं=स्वर्ग को। अस्पृशत्=छुआ ॥३॥

अन्वय—महातेजाः सुग्रीवः राक्षसः विभीषणः ततः हर्षसमुद्भूतः निःस्वनः दिवं अस्पृशत् ॥३॥

सरलार्थ—महान् तेजस्वी सुग्रीव तथा राक्षसराज विभीषण भी उस पुष्पक विमान पर चढ गये। उसके आनन्द से उत्पन्न महान् ध्वनि स्वर्ग पर्यन्त पहुंच गया ॥३॥

श्लोक"स्त्री वाल युव वृद्धानाम्।" इति ॥४॥

शब्दार्थ—स्त्रीवाल युव वृद्धानाम्=स्त्री वालक जवान और बूढों के। कीर्तिते=कहने पर। रथकुंजर वाजिभ्यः=रथ हाथी और घोड़ों से। अवतीर्य=नीचे उतरकर ॥४॥

अन्वय—अयं रामः इति कीर्तिते स्त्री वाल युव वृद्धानाम्, ते रथ-कुञ्जर वाजिभ्यः अवतीर्य महीं गताः ॥४॥

सरलार्थ—हनुमान्‌जी के यह कहते ही कि "ये रामचन्द्रजी आ रहे हैं।" स्त्री वालक युवा और वृद्ध सभी पुरवासियों की हर्ष ध्वनि से आकाश गूंज उठा सभी हाथी घोडों और रथों से नीचे उतर गये ॥४॥

श्लोक—"ददृशुस्तं विमानस्थम्।" ॥५॥

शब्दार्थ—विमानस्थं=विमान में बैठे हुये। तं=राम को। ददृशुः=देखा। अम्बरे=आकाश में। सोमं इव=चांद की तरह। प्राञ्जलिः भूत्वा=हाथ जोड कर ॥५॥

अन्वयः—नराः अम्बरे सोमम् इव विमानस्थं तं ददृशुः प्राञ्जलिः भरतः प्रहृष्टः भूत्वा राघवोन्मुखः जातः ॥५॥

सरलार्थ—आकाश में चन्द्रमा की भांति पृथ्वी पर खडे सभी पुरवासी विमान पर बैठे रामचन्द्रजी का दर्शन करने लगे और भरतजी रामचन्द्रजी की ओर दृष्टि लगाये हाथ जोड कर खडे हो गये ॥५॥

श्लोक—"स्वागतेन यथार्थेन।" इति ॥६॥

शब्दार्थः—स्वागतेन=स्वागत से । रामं=राम की । अपूजयत्=पूजा की । विषण्णां=दुःखी । शोककर्शिताम्=चिन्ता से कृश । आसाद्य= पाकर ॥६॥

अन्वयः—ततः यथार्थेन स्वागतेन रामं अपूजयत् रामः विषण्णां शोक कर्शिताम् मातरं आसाद्य ॥६॥

सरलार्थः—उसके बाद भरतजी ने दूर से ही बड़ी प्रसन्नता पूर्वक अर्घ्यपाद्य आदि से राम की पूजा की । राम भी दुःखी एवं चिंता से कृश माता को पाकर परम प्रसन्न हुये ॥६॥

श्लोक—सतो रामाभ्यनुज्ञातम् ।" इति ॥७॥

शब्दार्थ—रामाभ्यनुज्ञातम्=राम की आज्ञा से । अनुत्तमम्=श्रेष्ठ । हंसयुक्तं=हंसों से युक्त । महावेगं=तेजरफ्तार वाली । महीतले=पृथ्वी पर ॥७॥

अन्वय—ततः रामाभ्यनुज्ञातं अनुत्तमं तत् विमानम् हंसयुक्तं महावेगं महीतले निष्पपात ॥७॥

सरलार्थ—इतने में ही श्री रामचन्द्रजी की आज्ञा पा कर वह हंसयुक्त उत्तम विमान पृथ्वी पर उतर आया ॥७॥

श्लोकः—"आरोपितो विमानं तत् ।" इति ॥८॥

शब्दार्थ—तत् विमानं=उस विमान पर । आरोपितः=चढा दिया । रामं आसाद्य=राम को पाकर । मुदितः=प्रसन्न । अभ्यवादयत्=प्रणाम किया ॥८॥

अन्वयः—सत्य विक्रमः भरतः तत् विमानं आरोपितः रामं आसाद्य मुदितः पुनः एव अभ्यवादयत् ॥८॥

सरलार्थः—भगवान् श्रीराम ने सत्यपराक्रमी भरतजी को विमान पर चढा लिया और उन्होंने रामचन्द्रजी के पास पहुँच कर उन्हें पुनः प्रणाम किया ॥८॥

श्लोक—तं समुत्थाप्य काकुत्स्थः।" इति ॥९॥

शब्दार्थः—तं=भरत को। समुत्थाप्य=उठाकर। चिरस्य=बहुत समय से। अक्षिपथं=नेत्रों का विषय। परिषस्वजे=आलिङ्गन दिया ॥९॥

अन्वय—चिरस्य अक्षिपथं गतः काकुत्स्थः तं समुत्थाप्य भरतं अङ्के आरोप्य मुदितः परिषस्वजे ॥९॥

सरलार्थः—भरतजी को देखे हुये बहुत समय बीत चुका था अतः रामने उन्हें उठा कर गोद में बिठा लिया और फिर बड़े हर्ष में भरकर हृदय से लगाया ॥९॥

श्लोक—"रामो मातरमासाद्य।" इति ॥१०॥

शब्दार्थ—मातरं=माता को। आसाद्य=पाकर। विषण्णां=दुःखी। शोककर्शिताम्=चिन्ता से कृश। मातुः मनः=माता के मन को। प्रसादयन्=प्रसन्न करते हुये। पादौ=चरणों को। जग्राह=पकड लिये ॥१०॥

अन्वयः—रामः विषण्णां शोककर्शिताम् मातरं आसाद्य प्रणतः मातुः मनः प्रसादयन् पादौ जग्राह ॥१०॥

सरलार्थः—रामने दुःखी एवं शोक से कृश गात्र वाली माता को पाकर, माता के मन को प्रसन्न करते हुये उनके पैरों को पकड लिया ॥१०॥

श्लोकः—"अभिवाद्य सुमित्रां च।" इति ॥११॥

शब्दार्थः—सुमित्रां=सुमित्रा को। कैकेयीं=कैकेयी को। अभिवाद्य=प्रणाम करके। पुरोहितं=वसिष्ठजी के पास ॥११॥

अन्वय—सः सुमित्रां यशस्विनीं कैकेयीं अभिवाद्य ततः सर्वाः मातृः पुरोहितं उपागमत् ॥११॥

सरलार्थः—उसके बाद भगवान् राम ने सुमित्रा और कैकेयी को प्रणाम किया। तदनन्तर सब माताओं के साथ कुलगुरु वसिष्ठजी के पास गये ॥११॥

श्लोक:—"स्वागतं ते महा बाहो ।" इति ॥१२॥

शब्दार्थ—स्वागतं=स्वागत है । प्राञ्जलय:=हाथ जोडे हुये । नागरा:=नगर वासी गए । अब्रुवन्=कहने लगे ॥१२॥

अन्वय—हे महाबाहो ! कौसल्या नन्दवर्धन: ते स्वागतम् इति सर्वे नागरा: प्राञ्जलय: रामं अब्रुवन् ॥१२॥

सरलार्थ—उस समय सब अयोध्यावासियों ने हाथ जोड़कर कहा "कौसल्या के आनन्द को बढाने वाले श्रीराम आप का स्वागत है, आप का स्वागत है ।" रामने देखा कि खिले हुए कमलों के समान नगर वासियों की हजारों अञ्जलियां उनकी ओर उठी हुई हैं ॥१२॥

श्रीरामपट्टाभिषेक:

श्लोक—शिरस्यञ्जलिमाधाय । इति ॥१॥

शब्दार्थ:—शिरसि अञ्जलिं आधाय=हाथ जोड कर । रामं=राम को । बभाषे=बोले ॥१॥

अन्वय:—कैकेय्यानन्दवर्धन: सत्यपराक्रम: भरत: शिरसि अञ्जलिं आधाय ज्येष्टं रामं बभाषे ॥१॥

सरलार्थ:—कैकेयी के आनन्द को बढाने वाले सत्य पराक्रमी भरतजी हाथ जोड़ कर अपने ज्येष्ठ भ्राता राम को कहने लगे ॥१॥

श्लोक—"पूजिता मामिका माता ।" इत्यादि ॥२॥

शब्दार्थ—मामिका=मेरी । माता=माता की । पूजिता=सत्कार किया । पुन:=फिर से । ददामि=देता हूं । अददा:=दिया था ॥२॥

अन्वय—मामिका माता पूजिता इदं राज्यं मम दत्तम् तत् पुन: तुभ्यं ददामि यथा मम त्वं अददा: ॥२॥

सरलार्थ:—मेरी माता को आपने वन में जाकर प्रसन्न किया और समस्त राज्य आपने मुझे दे दिया । वही राज्य आज फिर आपको देना चाहता हूं जैसे कि पहले आपने मुझे दिया था ।

श्लोक—"गतिं खर इवा श्वस्य ।" इत्यादि ॥३॥

शब्दार्थ—खरः=गधा । गतिं=रफ्तार को, चाल को । वायसः=कौआ । अन्वेतुं=अनुसरण करने के लिये ॥३॥

अन्वयः—खरः अश्वस्य गतिं इव वायसः हंसस्य इव हे अरिन्दम ! राम ! तव मार्गं अन्वेतुं न उत्सहे ॥३॥

सरलार्थः—जिस प्रकार गधा घोडे की रफ्तार का अनुसरण नहीं कर सकता है और जैसे कौआ हंस की गति का अनुसरण नहीं कर सकता उसी प्रकार हे शत्रुओं का दमन करने वाले राम ! मैं तुम्हारे मार्ग का अनुकरण नहीं कर सकता हूं ॥३॥

श्लोकः—"यथा चारोपितो वृक्षो ।" इत्यादि ॥४॥

शब्दार्थ—आरोपितः=लगाया गया । अन्तर्निवेशने=घर के अन्दर भाग में । महास्कन्धप्रशाखवान्=वडे कंधे और शाखाओं वाला ॥४॥

अन्वय—यथा आरोपितः अन्तर्निवेशने जातः महान् वृक्षः महास्कंध प्रशाखवान् सुदुरारोहः भवति ॥४।

सरलार्थ—जिस प्रकार लगाया गया अन्दर के घर में वडा वृक्ष हो जाता है और महान् धड व शाखाओं वाला वह ऊपर चढने के लिये अशक्य होता है ॥४॥

श्लोकः—"शीर्येत पुष्पितो भूत्वा ।" इत्यादि ॥५॥

शब्दार्थ—सः=वह वृक्ष । पुष्पितो भूत्वा=विकसित होकर । यस्य हेतोः=जिस कारण से । रोप्यते=रोपा जाता है । अर्थं=प्रयोजन, मतलब ॥५॥

अन्वय—सः पुष्पितः भूत्वा फलानि न प्रदर्शयन् शीर्येत यस्य हेतोः रोप्यते तस्य अर्थं न अनुभवेत् ॥५॥

सरलार्थः—वह वृक्ष विकसित होकर फलों को न दिखाता हुआ अपने आप नष्ट हो जाता है। जिस कारण से वह लगाया जाता है उसका प्रयोजन ही सफल नहीं होता है ॥५॥

श्लोक—"एषोपमा महावाहो ।" ॥६॥

शब्दार्थ—एषोपमा=यह तुलना । त्वदर्थं=तुम्हारे लिये । भक्तान्=भक्तों को । भृत्यान्=नौकरों, सेवकों को । शाधि=शासन करो ॥६॥

अन्वय—हे महावाहो ! एषा उपमा त्वदर्थं वेत्तु अर्हसि अस्मात् हे मनुजेन्द्र ! त्वं नः भक्तान् भृत्यान् शाधि ॥६॥

सरलार्थ—हे महावाहो ! यह उपमा तुम्हारे लिये दी गई है। यह तुम समझने के योग्य हो। तुम हम भक्तों पर और सेवकों पर शासन करो ॥६॥

श्लोक—"जगदद्याभिषिक्तम् त्वाम् ।" इत्यादि ॥७॥

शब्दार्थ—मध्याह्ने=दुपहर में । दीप्ततेजसं=तेजस्वी । प्रतपन्तं=तपते हुये । आदित्यम् इव=सूर्य की तरह । अभिषिक्तम्=राज्याभिषेक किये त्वां=तुम को ॥७॥

अन्वय—मध्याह्ने दीप्ततेजसम् प्रतपन्तं आदित्यम् इव अद्य जगत् त्वां सर्वतः अभिषिक्तं अनुपश्यतु ॥७॥

सरलार्थः—दुपहर में तपते हुये तेजस्वी सूर्य की तरह आज समस्त संसार तुमको सभी तरह अभिषेक से समन्वित देखे ॥७॥

श्लोकः—"यावदावर्तते चक्रम् ।" इत्यादि ॥८॥

शब्दार्थः—चक्रम्=धर्मचक्र । वसुधरा=पृथ्वी । तावत्=तबतक । सर्वस्य=सबका । स्वामित्व=मालिक ॥८॥

अन्वयः—यावत् चक्रं यावती च वसुन्धरा आवर्तते इह तावत् त्वं सर्वस्य स्वामित्वं अनुवर्तय ॥८॥

सरलार्थः—जब तक यह धर्म चक्र तथा वसुन्धरा है। इस संसार में तवतक तुम सब के स्वामित्व को स्वीकार करो ॥८॥

श्लोक—"भरतस्य वचः श्रुत्वा।" इत्यादि ॥६॥

शब्दार्थः—भरतस्य=भरतजी के। वचः श्रुत्वा=वचन सुनकर। पर पुरञ्जयः=शत्रुओं के नगर को जीतने वाले। तथेति प्रतिजग्राह=स्वीकार किया ॥६॥

अन्वयः—परपुरञ्जयः रामः भरतस्य वचः श्रुत्वा तथा इति प्रतिजग्राह शुभे आसने निषसाद ॥६॥

सरलार्थः—शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाले श्रीराम ने भरतजी के वचन को सुनकर स्वीकार है ऐसा कहकर मंजूर किया और सुन्दर सिंहासन पर बैठ गये ॥६॥

श्लोक—"ततः स प्रयतो वृद्धो।" इत्यादि ॥१०॥

शब्दार्थ—रामं=राम को। रत्नमये=रत्ननिर्मित। पीठे=सिंहासन पर। ससीतं=सीता के साथ। न्यवेशयत्=बिठाया ॥१०॥

अन्वय—ततः प्रयतः सः वृद्धः वसिष्ठः ब्राह्मणैः सह ससीतं रामं रत्नमये पीठे न्यवेशयत् ॥१०॥

सरलार्थ—उसके बाद कुल पुरोहित वसिष्ठ ने ब्राह्मणों के साथ सीता के सहित राम को रत्न निर्मित सिंहासन पर बिठाया ॥१०॥

श्लोक—"वसिष्ठो वामदेव श्च।" इति ॥११॥ ॥१२॥

शब्दार्थ—नरव्याघ्रं=नरकेसरी को। प्रसन्नेन=निर्मल। सुगंधिना=सुगंधिवाला। सहस्राक्षं=इन्द्र को। वसवः=आठ वसुओं की तरह। अभ्यषिञ्चन्=अभिषेक किया ॥११-१२॥

अन्वय—वसिष्ठः वामदेवः जावालिः काश्यपः कात्यायनः सुयज्ञः गौतमः तथा विजयः यथा वसवः सहस्राक्षं वासवं प्रसन्नेन सुगन्धिना सलिलेन नरव्याघ्रं अभ्यषिञ्चन् ॥११-१२॥

सरलार्थ—वसिष्ठ वामदेव जाबालि काश्यप कात्यायन सुयज्ञ गौतम तथा विजय ने निर्मल सुगंधित जलसे राम का अभिषेक किया जैसे आठ वसुओं ने हजार नेत्रवाले इन्द्र का अभिषेक किया था ॥११-१२॥

रामराज्यवर्णनम्—

श्लोक—"अभिषेके तदर्हस्य ।" इति ॥१३॥

शब्दार्थ—धीमतः=बुद्धिमान् । रामस्य=राम का । अभिषेके=अभिषेक होने पर ॥१३॥

अन्वय—सदा धीमतः अर्हस्य रामस्य अभिषेके भूमिः सत्यवती पादपाः फलवन्तः ॥१३॥

सरलार्थ—उस समय बुद्धिमान् और योग्य राम का अभिषेक हो जाने पर भूमि सत्यवती हो गई और वृक्ष फलों से लदे हुये थे ॥१३॥

श्लोक—न पर्यदेवन् विधवा । इति ॥१४॥

शब्दार्थ—विधवाः=विधवाएं । न पर्यदेवन्=रोती नहीं थी । व्यालकृतं=सांपों का । भयं=भय । निर्दस्युः=चोरों से रहित ॥१४॥

अन्वय—विधवाः न पर्यदेवन् व्यालकृतं भयं न रामे राज्यं प्रशासति व्याधिजं भयं वा अपि न ॥१४॥

सरलार्थ—राम के राज्य करने पर विधवाएं नहीं रोती थीं सांपों का भय भी लोगों को नहीं होता था । बीमारी के भय से प्रजा चिन्तित नहीं रहती थी ॥१४॥

श्लोक—"निर्दस्युरभवल्लोको ।" इति ॥१५॥

शब्दार्थ—निर्दस्युः=चोर रहित । कंचित्=कोई । अनर्थं=पापका । न अस्पृशत्=स्पर्श भी नहीं करता था । वृद्धाः=बूढे । बालानां=बालकों के । प्रेत कार्याणि=अंत्येष्टि संस्कार ॥१५॥

अन्वय—लोकः निर्दस्युः अभवत् कंचित् अनर्थं न अस्पृशत्, वृद्धाः बालानां प्रेत कार्याणि न कुर्वते ॥१५॥

सरलार्थ—राम के राज्य काल में कोई चोर नहीं था, पाप का कोई स्पर्श नहीं करता था। तथा बूढों को बालकों के अन्त्येष्टि संस्कार करने नहीं पडते थे ॥१५॥

श्लोकः—सर्वं मुदितमेवासीत्। इति ॥१६॥

शब्दार्थ—सर्वं=सब। मुदितम्=प्रसन्न। धर्मपरः=धर्म में तत्पर रामं=राम की ओर। अनुपश्यन्तः=देखने वाले। नाभ्यहिंसन्=कष्ट नहीं पहुंचाते थे ॥१६॥

अन्वयः—सर्वं मुदितं आसीत् सर्वः धर्म परः अभवत् रामम् एव अनुपश्यन्तः परस्परं नाभ्यहिंसन् ॥१६॥

सरलार्थः—राम के राज्य काल में सभी लोग प्रसन्न थे, सभी धर्मपरायण थे। श्री राम की ओर देखते हुये एक दूसरे को कष्ट नहीं पहुँचाते थे ॥१६॥

श्लोक—आसन् वर्ष सहस्राणि। इति ॥१७॥

शब्दार्थ—वर्ष सहस्राणि=हजार वर्ष तक। पुत्र सहस्रिणः=हजारों पुत्र पौत्रवाले। निरामयाः=रोग रहित। विशोकाः=चिंतारहित ।१७।

अन्वयः—वर्ष सहस्राणि आसन् लोकाः पुत्र सहस्रिणः रामे राज्यं प्रशासति निरामयाः विशोकाः ॥१७॥

सरलार्थः—राम के राज्य करने पर लोक हजारों वर्ष की आयुवाले होते थे। तथा हजारों पुत्र पौत्र वाले होते थे। सभी लोग रोग रहित तथा चिन्ता रहित होते थे ॥१७॥

श्लोकः—रामो रामो रामेति। इति ॥१८॥

शब्दार्थ—प्रजानां=प्रजा की। रामः रामः इति=राम की। कथाः=वार्ता। जगत्=संसार। रामभूतं=रामरूप ॥१८॥

अन्वयः—प्रजानां रामः रामः रामेति कथा अभवत् रामे राज्यं प्रशासति जगत् राम भूतं अभूत् ॥१८॥

सरलार्थ—प्रजाजनः सर्वत्र राम नाम की कथाओं का वर्णन करते थे। राम के राज्य काल में सारा संसार राम रूप हो गया था ॥१८॥

श्लोकः—नित्यपुष्पाः नित्य फलास्तरव। इति ॥१६॥

शब्दार्थ—नित्य पुष्पाः=नित्यफूलों से युक्त। नित्य फलों वाले। काले वर्षी=समय पर बरसने वाला। पर्जन्यः=वर्षा ॥१६॥

अन्वय—तरवः नित्यपुष्पाः नित्यफलाः स्कंधविस्तृताः पर्जन्यः कालेवर्षी मारुतः सुखस्पर्शः अभवत् ॥१६॥

सरलार्थ—राम के राज्य काल में पेड़ नित्य फूलों से तथा फलों से लदे रहते थे। वर्षा समय पर हुआ करती थी और वायु शीतल मंद सुगंधित चलता रहता था ॥१६॥

श्लोक—ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः।" इति ॥२०॥

शब्दार्थः—लोभ विवर्जिताः=लोभ से रहित थे। स्वैः कर्मभिः=अपने अपने कर्मों से। तुष्टाः=प्रसन्न ॥२०॥

अन्वयः—ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राः लोभ विवर्जिताः आसन् स्वैः एव कर्मभिः तुष्टाः स्वकर्मसु प्रवर्तन्ते ॥२०॥

सरलार्थ—ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र लोभ से रहित होते थे। अपने कर्मों से सन्तुष्ट होकर अपने कर्मों में रहते थे ॥२०॥

श्लोकः—आसन्प्रजा धर्मरता। इति ॥२१॥

शब्दार्थ—धर्मरता=धर्म में तत्पर। नानृताः=असत्यवादी नहीं। लक्षण संपन्नाः=शुभ लक्षणों से समन्वित ॥२१॥

अन्वय—रामे शासति नानृताः प्रजाः धर्मरताः आसन् सर्वे लक्षण संपन्नाः सर्वे धर्मपरायणाः आसन् ॥२१॥

सरलार्थः—राम के राज्य काल में सब प्रजा धर्म परायण और सत्यवादी थी तथा सब लोग शुभ लक्षणों से समन्वित एवं धर्मनिष्ठ थे ॥२१॥

श्लोक—दश वर्ष सहस्राणि । इति ॥२१॥

शब्दार्थ—दशवर्षसहस्राणि=दस हजार वर्ष तक । भ्रातृभिः सहितः=भाइयों के साथ । राज्यम्=राज्य । अकारयत्=किया ॥२२॥

अन्वय—भ्रातृभिः सहितः श्रीमान् रामः दश वर्ष सहस्राणि दशवर्ष शतानि च राज्यम् अकारयत् ॥२२॥

सरलार्थ—भाइयों के साथ श्रीमान् रामचन्द्रजी ने दस हजार वर्ष तक राज्य किया ॥२२॥

Title Printed at Shree Nath Press, Jaip